द्वितीय अध्याय

2.संगीत मकरंद का अध्ययन

भारतीय संस्कृति अनंत काल से वेद, पुराण, उपनिषद ग्रंथ इत्यादि पर आधारित है। पुराण आदि ग्रंथो मे देवर्षि नारद का वर्णन जिज्ञासु के रूप मे प्राप्त होता है। प्रस्तुत शोध कार्य मे देवर्षि नारद को प्रेरणा श्रोत मानते हुए शोधर्थी जिज्ञासा स्वरूप नारद कृत संगीत मकरंद मे वर्णित संगीत को जानने व समझने तथा आत्मसात की तृष्णा के फलस्वरूप अध्ययन का प्रयास किया जा रहा है। संगीत मकरंद का विश्लेषित संगीत देवर्षि नारद द्वारा ब्रह्मा विष्णु व शिव शक्ति को समर्पित है। भारतीय संगीत के आदि प्रेरक शिव शक्ति ब्रह्मा गायत्री सरस्वती गंधर्व किन्नर को माना जाता है। संगीत कला मूल देवो दैवीय शक्तियों से ओतप्रोत है। संगीत सदैव मानव के लिए स्वाभाविक रहा है तथा ऐसा माना जाता है कि संगीत कला दिव्य है। संगीत एक सुंदर मार्ग है, जिससे मानव अपने भावो को अपने आराध्य के समक्ष प्रकट कर सकता है। ऋषि मुनि व आचार्य शिव जी के डमरू से वर्णो व स्वर कि उत्पत्ति तथा शिव जी कि शक्ति दुर्गा, पार्वती आदि संगीत के उत्पत्ति कि श्रोत मनी जाती है। हृदय भाव को अभिव्यक्त करने के लिए संगीत अति आवश्यक है। नाद मे संगीत का मूल अंतर्निहित है तथा नाद का मूल ब्रह्मा मे निहित है। ब्रह्मा कि शक्ति का पर्याय नाद से है, जिनका स्मरण देवी सरस्वती के रूप मे किया जाता है। देवी गायत्री को संगीत कला तथा सभी ललित कलाओं कि जननी माना जाता है। गन्धर्वों व किन्नरों को स्वर्ग का संगीतकार माना जाता है, गन्धर्वों मे देवर्षि नारद का स्मरण मुख्य रूप से किया जाता है। देवर्षि नारद जी को माहिती वीणा का आविष्कारक व संगीत को भू-लोक तक लाने का माध्यम माना जाता है, तथा देवर्षि नारद को मानव व देवों के बीच का दूत व सरल मार्ग माना जाता है ऐसा माना जाता है, कि देवर्षि स्वयं को संगीत कला मे पारंगत सिद्ध किया और अनेक ग्रन्थों कि रचना कि जिनको नारद जी के नाम से जाना जाता है। जिनमे संगीत ग्रंथों मे नारदीय शिक्षा, संगीत मकरंद, पंचमसार संहिता, धर्म शास्त्रीय ग्रंथों मे बृहत्रारदी, लघु नारदी, नारद स्मृति, नारद गीता इत्यादि भक्ति ग्रंथों मे नारद भक्तिसूत्र, नारद पंचरत्न, नारद संहिता, नारदीय जातक, नारदीय ज्योतिष पौराणिक ग्रंथों मे नारद पुराण व आदि ग्रंथों को देवर्षि नारद द्वारा रचित माना जाता है।

2:1 संगीत मकरंद ग्रंथ की विवेचना -संगीत मकरंद देवर्षि नारद द्वारा रचित ग्रंथ है, इस ग्रंथ के विषय मे कार्य करने से पूर्व शोधार्थी विभिन्न विद्वानों के मत व विचारों से संशय मे थी परन्तु इस विषय से संबन्धित उचित माहिती उपलब्ध प्राप्त ना होने के कारण शोधार्थी द्वारा शोध कार्य अवधि के दौरान संगीत मकरंद व देवर्षि नारद से जुड़ी सामाग्री एकत्र करने का प्रयास किया गया जिसमे हमारे

प्रेरणा श्रोत वेद, पुराण, उपनिषद व अन्य ग्रंथ, कोश इत्यादि का अध्ययन किया तथा अंधकार से ज्ञान के उजाले की ओर अग्रसर होते हुये विभिन्न तथ्यों को आत्मसात करते हुए इस कार्य को करने का पूर्ण प्रयास किया गया जो इस अध्याय के माध्यम से प्रस्तुत किया जा रहा है। संगीत मकरंद देवर्षि नारद द्वारा रचित ऐसा ग्रंथ है, जो आदि अनादि अंत से परे सृष्टि के अधिषठता देवधिदेव महादेव शिव को समर्पित है । जिस प्रकार मधु (शहद) के निर्माण के लिए एक मधुमक्खी विभिन्न पुष्पो के पराग से मकरंद को श्रम द्वारा चुन कर अपने मधु (शहद) के लिए पराग एकत्रित कर मधु (शहद) का निर्माण करती है,उसी प्रकार नारद जी द्वारा संगीत मकरंद ग्रंथ की रचना की गई ।

देवर्षि नारद व संगीत मकरंद के काल निर्धारण के विषय विस्तृत चर्चा व जानकारी शोधार्थी द्वारा विगत प्रथम अध्याय मे दी जा चुकी है, इसलिए इस अध्याय मे शोधार्थी संगीत मकरंद ग्रंथ की विवेचना कर रही है। यह पाण्डुलिपि की खोज सेंट्रल लाइब्रर्री मे कार्यरत अधिकारी आर० अनंत कृष्ण शास्त्री व पत्नी की शोध खोज यात्रा के दौरान उत्तराखंड के गड़वाल क्षेत्र में सन 1919 मे प्राप्त हुयी।[1] जो बाद मे संगीत मकरंद एकल पांडुलिपि के रूप में गुजरात राज्य के वड़ोदरा (बड़ौदा) शहर की central library व वर्तमान में oriental institute of Baroda library (प्राच्य विद्या मंदिर बड़ौदा) मे मौजूद है, जो शोधार्थी को विभिन्न श्रोतों ग्रंथो पुस्तकों के माध्यम से यह जानकारी ज्ञात हुयी। संगीत मकरंद देवर्षि नारद द्वारा संक्षिप्त व पूर्ण कार्य है, जिसमे संगीत की प्रत्येक विधा गायन वादन नृत्य नाट्य का सुशब्दों मे ज्ञान का वर्णन प्राप्त होता है। संगीत मकरंद की उपलब्ध पाण्डुलिपि से एक नवीन प्रतिलिपि तैयार करने का कार्य शक संवत (1599 A.D. 1677) मे विजयपुरा विजयपुर की राजधानी के नाम से जानी जाती थी जो वर्तमान मे तेलंगाना राज्य के हैदराबाद शहर से जाना जाता है। के निवासी कृष्ण जी दत्त नामक व्यक्ति जो महागणपति को अपना आराध्य मानने वाले थे, जिनके द्वारा प्राचीन पाण्डुलिपि से पुस्तक रूप से परिवर्तित किया जो महत्वपूर्ण सिद्ध हुआ।[2]इसके उपरांत संगीत मकरंद का सम्पादन लक्ष्मी नारायण गर्ग द्वारा सन 1978 मे किया गया जिसका मुख्य उद्देश्य संगीत के जिज्ञासू शिक्षक और विद्यार्थियों को संगीत मकरंद से प्राचीन मूल प्रति से अवगत करना है।[3] नारद विरचित: संगीत मकरंद ग्रंथ को क्रमश: दो अध्याय संगीतध्याय व नृत्याध्याय तथा दोनों अध्यायों को चार चार पादों मे विभाजित किया गया है। तत्पश्चात शोधार्थी तथा शोधार्थी के मार्गदर्शक व शोधार्थी के पिता द्वारा व संगीत अथवा संस्कृत के गुनिजनों के संगीत मकरंद की व्याख्या का हिन्दी अनुवाद अन्वय व भावार्थ के साथ प्रस्तुत किया जा रहा है ।

---

(1) नारद विरचित: संगीत मकरंद/ पृष्ठ-10
(2) नारद विरचित: संगीत मकरंद/ xi
(3) नारद विरचित: संगीत मकरंद/ xi

2:1:1 प्रथम अध्याय सङ्गीताध्याये प्रथम पादः

प्रथम पाद का आरंभ मङ्गलाचरणम् से किया गया है, जिसमे आदि अंत से परे सृष्टि के अधिषठता देवधिदेव महादेव शिव की स्तुति करते हुये लोक कल्याण के लिए संगीत प्रस्तुत किया गया है, तत्पश्चात गीतादि भेदेन सङ्गीत शास्त्र विभाग गीत आदि के भेद संगीत शास्त्र विभाग आदि की चर्चा की गयी है ,इसी के अंतर्गत नादो उत्पत्ति निरूपणम् अर्थात नाद की उत्पत्ति का व्याख्यान किया गया है। अनाहता, आहत नाद निरूपणम् अनाहत नाद व अहत नाद की व्याख्या, नख वायु जादि भेदेन पुनः नादस्य पञ्चविधत्वम अर्थात नख, वायुज इत्यादि नाद की पाँच विधाओं का वर्णन किया गया है। षड्जादि स्वराणा मुत्पत्ति स्थान निर्देशः अर्थात षडज आदि स्वर उत्पत्ति स्थान व निर्देश का वर्णन किया गया है, षड्जादि स्वराणां मयूरादि शब्द साम्य निरूपणम्- षडज आदि के स्वरों के नाम मयूरादि शब्द का सम्यक शब्दों का सौम्यता के साथ व्याख्या रूपालप्तिः रागालप्ति रिति पुनराहतनाद द्वैविध्यम्-रूपालप्ति, रागालप्ति पुनः आहात नाद की वैविद्धता, गीत संप्रदाय निरूपणम्, शिशुपशुसर्पादी पर गीत लुब्धत्व का वर्णन स्थाय्या दिभेदेन स्वरचातुर्विध्यम्, वादि संवद्यादि भेदेन स्वरचातुर्विध्यम्, स्वरादीनां जाति कुलादि निरूपणम्, स्वराणां वर्ण कथनम्, स्थायी स्वर वादी संवादी आदि स्वरो के भेद जाति कुल तथा स्वर के वर्ण का वर्णन किया गया है। स्वराणां जम्बुद्वी पादिसमुत्थान वर्णनम्, स्वराणां देवता नामनिरूपणम् -स्वर के देवताओं का निरूपण, स्वराणां छन्दांसि-स्वर के छन्द, स्वराणां गोत्राणि- स्वर के गोत्र, स्वराणां नक्षत्राणि-स्वर के नक्षत्र, स्वराणां राशयः-स्वर की राशि ,स्वराणां राश्यधिदेवताः-स्वर की राशि देवता, स्वराणां योनि कथनम्-स्वर की योनि, स्वराणां रसाः- स्वर के रस , ग्राम निरूपणम् ग्राम का निरूपण , षड्ज ग्रामस्वरः षड्ज ग्राम स्वर , मध्यम ग्राम स्वरा- मध्यम ग्राम स्वरा, गान्धार ग्राम स्वराः-गान्धार ग्राम स्वरा, ग्रामाणां, प्राधान्यादि निरूपणम्-ग्रामों के प्रधान का निरूपण ,मूर्च्छना लक्षणं तद्भेद निरूपणंच-मूर्च्छना लक्षण व उनके भेद का निरूपण, षड्जादि स्वराणां श्रुति संख्या नाम कथनम्-षड्जा आदि स्वर की श्रुति संख्या व उनके नाम का निरूपण, मूर्च्छना विभागादि विचारः-मूर्च्छना विभागा आदि पर विचार, स्वर प्रकृति विकृतयः-स्वरों की प्रकृति विकृत, तन्त्री प्रकृति विकृतयः-तंत्री की प्रकृति विकृत

2:1:2 सङ्गीताध्याये द्वितीयःपादः

मङ्गलश्लोकः-मंगल श्लोक से अध्याय का आरंभ किया गया है, गीत स्वरूप वर्णनम्- गीत के स्वरूप का विस्तृत वर्णन, वीणा देहतदङ्गादि निरूपणम्-वीणा की देह व अंग की विस्तृत रूप से वर्णन सङ्गीत शास्त्र प्रणेतृ देवता आदिनामानि संगीत ,गीत माहात्म्यम्

2:1:3 सङ्गीताध्यायेतृतीयःपादः

स्वर लक्षणम्-स्वरों के लक्षण, स्वर ग्राम मूर्छना-स्वर ग्राम मूर्छना, रागादि निर्देशः रागों के निर्देश, प्रातः कालेगे यानां सूर्या शरागाणां नामानि-प्रातःकालीन गाये जाने वाले सूर्यान्श रागों के नाम का वर्णन किया गया है, मध्याह गेय राग नामानि- मध्यान्ह गाये जाने वाले राग का वर्णन किया गया है, सायं काले गेयानां चन्द्रां शरागाणां नामानि-सायंकाल जाये जाने वाले चंद्रान्श रागो के नाम का वर्णन किया गया है, उदया नन्तरमेक प्रहरो परिगेय रागाः, राग वेलाति क्रम फलादि वर्णनम्, रागो की बेला के प्रतिफूल, अन्य राग नामानि-अन्य रागों के नाम ,संपूर्ण रागाणां ग्रह स्वराः सम्पूर्ण रागों के ग्रह स्वर, षाडव रागाणां ग्रह स्वरा:-षाडव रागों के ग्रह स्वर, औडव रागाणां ग्रह स्वराः-औडव रागों के ग्रह स्वर, पुंलिङ्ग रागाः-पुंलिङ्ग राग, स्त्रीरागाः-स्त्री राग, रागाणां रस प्रयोग विवेकः-रागों के रस प्रयोग व विवेक, रागाङ्ग निरूपणम्-रागाङ्ग निरूपण, षड्पुरुष रागाणां तत्स्त्रीणांच नामानि- षड् पुरुष राग व उनकी स्त्रियों के नामों मे मत मतांतर, मतान्तरेण, प्रसङ्गानु रूप राग विचारः-प्रसंगानुरूप राग विचार ,कम्पिता आदिभेदेन राग विभागः-कंपित आदि भेदों के राग विभाग, शास्त्र विरोधेन तथा शास्त्रा अनुरोधेन रागादि प्रयोगे फल श्रुतिः-शास्त्र विरोध तथा शास्त्र अनुरोध से रागादि प्रयोग की फलश्रुति ।

2:1:4 सङ्गीताध्यायेचतुर्थः पादः

मृदंग लक्षणम्-मृदंग के लक्षण, वीणा भेदा:-वीणा के भेद आनद्ध वाद्य विशेषाः-अवनद्ध वाद्यों की चर्चा की गयी है, नादो उत्पत्तिः नाद भेदाश्च-नाद की उत्पत्ति व नाद के भेदों का वर्णन किया गया है, वाग्गेयकारादि गायक भेदाः सलक्षणाः-वागय कार व गायक के भेदो का वर्णन लक्षण सहित किया गया है, गीत गुण दोष विवेकः-गीत के गुण दोषो की चर्चा , गीत प्रयोज्यानां स्वराणां नामानि- गीत प्रयोजन के नाम स्वरों के नाम आलाप विभागः-आलाप की चर्चा, शुद्ध सङ्कीर्णादि भेदेन रागविभागः-शुद्ध संकीर्ण आदि के भेद व रागों का वर्णन किया गया है, राग संख्या निर्देशः-रागो की संख्या के निर्देशों की चर्चा है।

2:1:5 नृत्याध्यायेप्रथमःपादः

नाट्य शाला लक्षणम्-नाट्य शाला के लक्षण का वर्णन किया गया है, सभा लक्षणम्-सभा के लक्षण का वर्णन किया गया है, विद्व लक्षणम्-विद्व के लक्षण, कविलक्षणम्-कवि के लक्षण, भटलक्षणम्-भट के लक्षण, गायक लक्षणम्-गायक के लक्षण, परिहासक लक्षणम्- हास्य परिहासक के लक्षण , इतिहासज्ञ लक्षणम्- इतिहास ज्ञान के लक्षण, ज्योतिष लक्षणम्- ज्योतिष के लक्षण, वैद्य लक्षणम्- वैद्य के लक्षण, पुराणिक लक्षणम-पुराणिक के लक्षण, सभापति लक्षणम्-सभापति के लक्षण, नटविशेषः-नट की

विशेषता, घघरिकः, पात्र लक्षणम्-नाट्य मे पात्रो के लक्षण, पुष्पाञ्जलिः-पुष्पांजलि के लक्षण ,पञ्च तालोत्पत्त्यादि निरूपणम्-इस पाद के अंत मे पंचताल की उत्पत्ति का विस्तृत वर्णन किया गया है।

2:1:6 नृत्याध्यायेद्वितीयःपादः

ताल कर्तृनामानि-ताल के अनुरूप ताल के निर्माण का वर्णन किया गया है, एकोत्तरशत ताल नामानि-एक सौ एक ताल के नाम का वर्णन किया गया है, ताल लक्षणानि- एक सौ एक तालों के लक्षण का विस्तृत वर्णन किया गया है ।

2:1:7 नृत्याध्यायेतृतीयःपादः

अङ्ग ताल लक्षणानि-अंग ताल के लक्षण की चर्चा की गयी है, ताल शब्द निष्पत्तिः- ताल शब्द की उत्पत्ति का वर्णन किया गया है, दश ताल प्राण निर्देशः-दश ताल प्राण के निर्देश को बताया गया है, काल लक्षणम्-काल के लक्षण, मार्ग लक्षणम्-मार्ग के लक्षण, मात्रा लक्षणम् मात्र के लक्षण, देशी क्रिया-देशी ताल क्रिया की चर्चा, दक्षिण मार्ग मात्रा नामानि-दक्षिण मार्ग व मात्रा के नाम की चर्चा की गयी है, अङ्गानि-ताल के अंग, ग्रहाः-ग्रह ताल की चर्चा, जाति निरूपणम्-जाति के निरूपण की चर्चा की गयी है, लय काल निरूपणम्-लय व काल की चर्चा, प्रस्तार निरूपणम्-ताल प्रस्तार की चर्चा, द्रुतादि तालाङ्गानां पर्याया श्चिह्नानि च द्रुत- आदि तालों के पर्याय चिन्ह इत्यादि का विस्तृत वर्णन किया गया है।

2:1:8 नृत्याध्यायेचतुर्थःपादः

मृदङ्गोत्पत्तित द्वादन प्रकारादि कथनम्-मृदंग की उत्पत्ति व प्रकार का वर्णन किया गया है, नटी भाव निरूपणम्- इसके उपरांत अंत मे नटी के भावों का विस्तृत रूप से वर्णन किया गया है।

सङ्गीताध्याये प्रथमः पादः

प्रणम्य शिरसा देवं शङ्करं लोकशङ्करम् ।

सङ्गीतशास्त्रं सङ्गृह्य वक्ष्ये लोकमनोहरम् ॥1॥

पदच्छेदः -प्रणम्य शिरसा देवं शङ्करं लोक शङ्करम् सङ्गीत शास्त्रं सङ्गृह्य वक्ष्ये लोक मनोहरम्

अन्वय-प्रणम्य-नमस्कारकरके,शिरसा-सिर से, देवं-देव, शङ्करं-शिव को,लोकशङ्करम्-जगत को शांति देने वाले, सङ्गीतशास्त्रं-संगीत के शास्त्र को,सङ्गृह्य-संग्रहीत, वक्ष्ये-प्रस्तुत कर रहा हूँ, लोकमनोहरम्- जगत के लिए मनोहर

भावार्थ-जगत को शांति व आनंद प्रदान करने वाले देवाधिदेव शिव को मैं सिर झुकाकर प्रणाम करके जगत के लिए मनोहर संगीत शास्त्र का संग्रह करके प्रस्तुत कर रहा हूँ ।

ब्रह्मा तालधरो हरिश्च पटही वीणाकरा भारती

वंशज्ञौ शशिभास्करौ श्रुतिधराः सिद्धाप्सर किन्नराः ।

पदच्छेदः ब्रह्मा तालधरो हरिश्च पटही वीणाकरा भारती वंशज्ञौ शशि भास्करौ श्रुतिधराः सिद्धाप्सर किन्नराः

अन्वय-ब्रह्मा-ब्रहम देव,तालधरो-ताल को धरण करने वाले,हरिश्च-और विष्णु,पटही-स्थैय प्रदान करने वाले (अर्थात पटह: अवनद्ध वाद्य),वीणाकरा-वीणा और श्रुति को हाथ में धरण करने वाली, भारती-सरस्वती,वंशज्ञौ शशिभास्करौ-सूर्य और चंद्रमा वंश के जानकार, श्रुतिधराः-श्रुति को धरण करने वाली,सिद्धा-सिद्ध,अप्सर- अप्सराएँ ,किन्नराः-किन्नर

भावार्थ-ब्रह्मा ताल को धारण करने वाले, विष्णु स्थिरता प्रदान करने वाले, वीणा को धारण करने वाली माँ सरस्वती, दिन व रात के स्वामी सूर्य व चंद्रमा वंश को जानने वाली तथा श्रुतियों को धारण करने वाली स्वर्ग की सिद्धअप्सराएँ व किन्नर सभी अपने संगीत रूपी ज्ञान से अवनद्ध वाद्य पटही मे ताल दीजिये ।

नन्दीभृङ्गिरिटादिमर्दलधराः सङ्गीतको नारदः

शम्भोर्चतकरस्य मङ्गलतनो ट्यं सदा पातु नः ॥2॥

पदच्छेदः-नन्दी भृङ्गिरिटा आदि मर्दल धराः सङ्गीतको नारदः शम्भोर्चत करस्य मङ्गल तनो ट्यं सदा पातु नः

अनव्य-नन्दीभृङ्गिरिटादिमर्दलधराः-नंदी व भृङ्गिरिटाआदि, मर्दलधराः -धरती का मर्दल, सङ्गीतको-संगीतकार,नारदः-नारदमुनि, शम्भोर्चतकरस्य-शंकर नृत्य करने वाले मङ्गलतनोट्यं-मंगलकरने वाले,सदा-हमेशापातु-पवित्र करे, नः-हमे

भावार्थ-धरती का मर्दल कने वाले नंदी व भृङ्गिरिटा आदि, संगीतज्ञ नारद जी मंगल कारी नटराज शंकर भगवान हमेशा हमे पवित्र करे तथा रक्षा करें ।

गीतं वाद्यं च नृत्यं च त्रयं संगीतमुच्यते ।

नारदेन कृतं शास्त्रं मकरन्दाख्यमुत्तमम् ॥3॥

पदच्छेदः-गीतं वाद्यं च नृत्यं च त्रयं संगीत मुच्यते नारदेन कृतं शास्त्रं मकरन्दाख्य मुत्तमम्

अन्वय-गीतं-गीत,वाद्यं-वाद्य यंत्र को,च-और,नृत्यं-नृत्य,च-और त्रयं-तीनों कोसंगीतं- संगीत उच्यते-कहा जाता है ,नारदेन-नारद के द्वारा,कृतं-किए गए,शास्त्रं-शस्त्र को,मकरन्दं- मकरंद,आख्यमुत्तमम्-सबसे उत्तम कहा जाता है।

भावार्थ-गीत वाद्य और नृत्य इस तीनों के संयोग को संगीत कहा जाता है । व नारदकृत मकरंद नामक संगीत शास्त्र को सर्वोत्तम संगीत शास्त्र कहा जाता है

आदौ नादोत्पत्तिनिरूप्यते

अनाहतो हतश्चैव स नादो द्विविधो मतः ।

यत्रोभयोस्तयोर्मध्येऽनाहतोऽपि निरूप्यते ॥4॥

पदच्छेदः-आदौ नादो उत्पत्ति निरूप्यते अनाहतो हत श्चैव स नादो द्विविधो मतः यत्रो भयोस्तयो र्मध्ये ऽनाहतो ऽपि निरूप्यते

अन्वय-अनाहतो-अनाहत(विकार हित अर्थात जो आघात से उत्पन्न न हुआ हो),हतश्चैव- और हत (विकार युक्त अर्थात जो आघात से उत्पन्न से हुआ हो),सः-वह,नादो-नाद,द्विविधोः-दो प्रकार का,मतः-कहा जाता है, यत्रोभयोः-जहां दोनों,स्तयो-उन दोनों को,अनाहतो-अनाहत,अपि-भी निरूप्यते-निरूपण किया जा रहा है।

भावार्थ-नाद(ध्वनि) के दो भेद व विधियां माने जाते है। जिसमे अनाहत अर्थात विकार हित जो आघात से उत्पन्न न हुआ हो और हत अर्थात विकार युक्त जो आघात से उत्पन्न हुआ हो । उन दोनों नादों में से यहाँ अनाहत का निरूपण किया जा रहा है ।

आकाशसंभवो नादो यः सोऽनाहतसंज्ञितः।

तस्मिन्ननाहते नादे विरामं प्राप्य देवताः॥5॥

पदच्छेदः-आकाश संभवो नादो यः सो ऽनाहत संज्ञितः तस्मिन्न ना हते नादे विरामं प्राप्य देवताः

अन्वय-आकाशसंभवो -आकाश से उत्पन्न,नादो- नाद, यः-जो,सो- वह,अनाहतसंज्ञितः-अनाहत संज्ञक है,तस्मिन-उसमें,अनाहते-अनाहत में, नादे-नाद में,विरामं-विश्राम, प्राप्य-प्राप्त करके या प्राप्त करते है, देवताः-देवता गण

भावार्थ-आकाश से उत्पन्न जो अनाहत संज्ञक नाद है, उसी अनाहत संज्ञक नाद में देवता विश्राम प्राप्त करते है।

योगिनोऽपि महात्मानस्तदानाहतसंज्ञके।
मनो निक्षिप्य संयान्ति मुक्तिं प्रयतमानसाः ॥ 6॥

पदच्छेदः-योगिनो ऽपि महात्मान स्तदा नाहतसंज्ञके मनो निक्षिप्य संयान्ति मुक्तिं प्रयत मानसाः

अन्वय-योगिनोऽपि-योगीजन भी, महात्मान:-महात्मा, तद-उस, अनाहतसंज्ञके-अनाहत नाम के (नाद में)मनो-मन को, निक्षिप्य-लगाकर या डाल कर, संयान्ति-प्रपट करते है, मुक्तिं-मुक्ति को, प्रयतमानसाः-प्रत्यनशील मन वाले

भावार्थ-प्रत्यनशील मन वाले योगीजन व महात्मा उस अनाहत संज्ञक नाद में मन लगाकर मुक्ति को प्राप्त करते है ।

सोऽप्याहतः पञ्चविधो नादस्तु परिकीर्तितः ।
नखवायुजचर्माणि लोहशारीरजास्तथा ॥7॥

पदच्छेदः-सो ऽप्या हतः पञ्च विधो नादस्तु परिकीर्तितः नख वायुज चर्माणि लोह शारीर जा स्तथा

अनव्य-सोऽपि-वह भी आहतःआहात संज्ञक,पञ्चविधो-पाँच प्रकार का नादस्तु-नाद तो परिकीर्तितः कहा जाता है या होता है नखवायुज-नाखून या वायु से उत्पन्नचर्माणि- चमड़ी से उत्पन्न लोह-लोहे से उत्पन्न,शारीरजास्तथा-तथा शरीर से उत्पन्न ।

भावार्थ-नाखून, वायु, चमड़ी, लोहे और शरीर से उत्पन्न होने वाला आहात संज्ञक नाद पाँच प्रकार का होता है ।

नखं वीणादयः प्रोक्ता वंशाद्या वायुपूरकाः।
चर्माणि च मृदङ्गाद्या लोहास्तालादयस्तथा ॥8॥

पदच्छेदः-नखं वीणा दयः प्रोक्ता वंशाद्या वायु पूरकाः चर्माणि च मृदङ्गाद्या लोहा स्ताला दय स्तथा

अनव्य-नखं वीणदयःनाखून से बजाये जाने वाली वीणा आदि,प्रोक्ता कहे जाते है वंशाद्या-वंशी आदि वाद्यवायुपूरकाः-वायु से बजाये जाने वाले वाद्य,चर्माणि च-और चमड़े से मृदङ्गाद्या मृदंग वाद्य लोहास्तालादयस्तथा-लोहे से बने तालवाद्य आदि **भावार्थ-** नाखून से वीणा जैसे तंत्री वाद्य,वायु से वंशी आदि वाद्य,चमड़े से बने अवनद्ध वाद्य मृदंग आदि, तथा लोहे से बनाए गए वाद्य यंत्रो को ताल आदि कहा जाता है।

देहनादेन ते युक्ता नादाः पञ्चविधाः स्मृताः।

गीतं वायं च नृत्यं च त्रयं सङ्गीतमुच्यते ॥9॥

पदच्छेदः-देह नादेन ते युक्ता नादाः पञ्च विधाः स्मृताः गीतं वायं च नृत्यं च त्रयं सङ्गीत मुच्यते

अनव्य-देहनादेन-शरीर(देह) से उत्पन्न नाद,ते-वे, युक्ता: युक्त, नादाः नाद,पञ्चविधाः पाँच प्रकार के, स्मृताः-माना जाता है, गीतं-गीत, वायं-वाद्य,च-और, नृत्यं च-और नृत्य,त्रयं-तीन प्रकार के,सङ्गीतमुच्यते-संगीत कहा जाता है ।

भावार्थ-शरीर आदि के नाद से युक्त नाद पाँच प्रकार का होता है व गीत, वाद्य और नृत्य इन तीनों के मेल को संगीत कहा जाता है ।

आदौ ब्रह्मा विचार्येव नाट्यं लोके प्रपञ्चितम् (?)।

अनाहतात्समाकृष्य सप्तनामानि योजितः ॥10॥

पदच्छेदः-आदौ ब्रह्मा विचार्येव नाट्यं लोके प्रपञ्चितम्(?)अनाहतात्समाकृष्य सप्तनामानि योजितः

अनव्य-आदौ-आदि में, ब्रह्मा -ब्रह्मा ने, विचार्येव-विचार करके, नाट्यं-नाटक, लोके- संसार में प्रपञ्चितम्-रचा, अनाहतात्-अनाहत से, समाकृष्य-आक्रष्ट करके या निकालकर सप्तनामानि-सात नाम, योजित:-जोड़े गये (श्रेणी बद्ध करना)

भावार्थ-आदि काल में ब्रह्मा ने विचार करके नाटय इस संसार मे रचा व अनाहत से सात नाम निकाल कर उनको श्रेणी बद्ध किया ।

तं नादं सप्तधा कृत्वा तथा षड्नादिभिः खरैः ।

नाभिहृत्कण्ठतालुषु नासादन्तोष्ठयोः क्रमात् ॥11॥

पदच्छेदः-तं नादं सप्तधा कृत्वा तथा षड्नादिभिः खरैः नाभि हृत्कण्ठ तालुषु नासा दन्तो ष्ठयोः क्रमात्

अनव्य-तं नादं-उस नाद को, सप्तधा-साथ प्रकार का,कृत्वा-करके, तथा-और, षड्नादिभिः षडज आदि,खरैः-सुरो से ,नाभि-नाभि,हृत-हृदय, कण्ठतालुषु-कंठ व तालु में, नास-नासिक, दन्त-दाँत ओष्ठयोः-होंठो से,क्रमात्- क्रम से

भावार्थ-उस नाद को सात प्रकार से विभाजित करके षडज आदि सरोण को नाभि,हृदय,कंठ,तालु ,नलिका,दाँतव होठ में क्रम से स्थापित किया ।

षड्नश्चर्षभगान्धारौ मध्यमः पञ्चमस्तथा।

धैयतश्च निषादश्च स्वराः सप्त प्रकीर्तिताः॥12॥

पदच्छेदः-षड्नश्चर्षभगान्धारौ मध्यमः पञ्चमस्तथा धैयतश्च निषादश्च स्वराः सप्त प्रकीर्तिताः

अनव्य-षड्नश्चर्षभगान्धारौ-षडज, ऋषभ, गांधार, मध्यमः-मध्यम,पञ्चमस्तथा-और पंचम, धैयतश्च-और धैवत, निषादश्च-तथा निषाद, स्वराः-सुर,सप्त- सात, प्रकीर्तिताः-कहे गये है।

भावार्थ -षडज, ऋषभ, गांधार, मध्यम, पंचम, धैवत, निषाद ये सात सुर कहे गये है।

षडज मयूरो वदति चातको ऋषभं तथा (?)।

अजो विरौति गान्धारं क्रौञ्चः कणति मध्यमम् ॥13॥

पदच्छेदः-षडज मयूरो वदति चातको ऋषभं तथा (?)अजो विरौति गान्धारं क्रौञ्चः कणति मध्यमम्

अनव्य-षडजं मयूरो वदति-षडज को मयूर बोलता है, चातको ऋषभं तथा-और ऋषभ को चतक,अजो-बकरा विरौति- उचाचरित करता है, गान्धारं-गांधार को क्रौञ्चः-कौवा कणति- बोलता है, मध्यमम् मध्यमा,

भावार्थ-मोर षडज नामक,चातक ऋषभ नामक, बकरा गांधार नामक,तथा कौवा माध्यम नामक सुर का उच्चारण करता है।

पुष्पसाधारणे काले पिकः कूजति पञ्चमम् ।

अश्वश्च धैवतं चैव निषादं च गजस्तथा ॥14॥

पदच्छेदः-पुष्प साधारणे काले पिकः कूजति पञ्चमम् अश्वश्च धैवतं चैव निषादं च गजस्तथा

अनव्य-पुष्पसाधारणे काले-वसंत ऋतु में, पिकःकूजति पञ्चमम्-कोयल पंचम सुर का उच्चारण करती है,अश्वश्च-ओर घोडा, धैवतं-धैवत, चैव-और ही, निषादं च-निषाद को और गजस्तथा-तथा हाथी

भावार्थ-वसंत ऋतु में कोयल पंचम सुर का उच्चारण करती है | घोडा धैवत व हाथी निषाद सुर का उच्चारण करता है।

एवं स्वरान् समाकृष्य वीणादिषु निधाय च ।

तेन चाहतनादेन सङ्गीतमकरोत्तदा ॥15॥

पदच्छेदः-एवं स्वरान् समा कृष्य वीणा दिषु निधाय च तेन चाहत नादेन सङ्गीत मकरोत्तदा

अनव्य-एवं-इस प्रकार, स्वरान्-सुरों को, समाकृष्य-समकर्षित करके, वीणादिषु- वीणाआदि वाद्यो में,निधाय-रख कर, च-और,तेन-उस ब्रह्मा जी ने,आहतनादेन- आहात नाद से सङ्गीतम -संगीत को, अकरोत-किया, तदा- तब

भावार्थ-इस प्रकार ब्रम्हा जी ने सुरों को वीणा आदि वाद्य यंत्रों में रख कर आहात नाद से संगीत का निर्माण किया।

सरखत्याश्च वीणायां षङ्गादिस्वरसंयुतम् ।

पाठयामास सर्वेषां हृद्यं श्रुतिमनोहरम् ॥16॥

पदच्छेदः-सरखत्याश्च वीणायां षड्जादिस्वरसंयुतम् पाठयामास सर्वेषां हृद्यं श्रुतिमनोहरम्

अनव्य-सरखत्याश्च-सरस्वती/और वीणायां-वीणा में षड्जादि-षडज आदि, स्वर-सुर से, संयुतम्-संयुक्त करके, पाठयामास-पढ़ाया, सर्वेषां-सबको, हृद्यं-हृदय में, श्रुतिमनोहरम्- सुनने में मनोहर

भावार्थ- इस प्रकार सरस्वती ने सुनने में मनोहर व हृदयग्राही षडजादि सुरों को वीणा में संयुक्त करके सबको पढ़ाया।

रूपालप्ती रागालप्तिरिति स द्विविधः स्मृतः ।

राँगास्तन्नतानाद्यरूपतः शब्द उच्यते ॥17॥

पदच्छेदः-रूपालप्ती रागालप्ति रिति स द्विविधः स्मृतः राँगास्तन्नता नाद्यरूपतः शब्द उच्यते

अनव्य-रूपालप्ती-आलप्ति के भेद में से एक, रागालप्ति-आलप्ति के भेद में से दूसरा, रिति-ऐसी परंपराएँ या संस्कार, द्विविधः-दो प्रकार का, स्मृतः-स्मरण में आया हो, राँगास्तन्नता-संगीत में जो गान ताल के सहारे चले, नाद्यरूपतः-ध्वनियों का संगीत में प्रयोग किया जाता हो जिसमें रूप का भाव या धर्म का निरूपण समाहित हो तथा शब्दों का रूप साथ ही तन्नन और तान इत्यादि राग हो।

भावार्थ-रूपालाप और रागालाप भेद से दो प्रकार का होता है। ध्वनियों का संगीत में प्रयोग किया जाता हो जिसमें रूप का भाव या धर्म का निरूपण समाहित हो तथा शब्दों का रूप के साथ तन्नन और तान इत्यादि राग हो।

सामवेदादिदं गीतं तज्जग्राह पितामहः ।

तगीतं नारदायैव तेन लोकेषु वर्णितम् ॥ 18 ॥

पदच्छेदः-सामवेदादिदं गीतं तज्जग्राह पितामहः तगीतं नारदायैव तेन लोकेषु वर्णितम्

अनव्य-सामवेदादिदं-सामवेद से, इदं गीतं-इस गीत को,तद जग्राह-उसे ग्रहण किया, पितामहः-पितामाह, तदगीतं-उस गीत को, नारदाय-नारद के लिए, एव-ही, तेन- उसके द्वारा,लोकेष-लोकों में, वर्णितम्-वर्णन किया गया है।

भावार्थ-ब्रह्मा जी ने सामवेद से उस गीत को ग्रहण किया ओर उसका वर्णन तीनों लोकों में करने के लिए उसे नारद जी को प्रदान किया ।

गीतेन प्रीयते देवः सर्वज्ञः पार्वतीपतिः ।

गोपीपतिरनन्तोऽपि वंशध्वनिवशं गतः ॥19॥

पदच्छेदः-गीतेन प्रीयते देवः सर्वज्ञः पार्वती पतिः गोपीपति अनन्तोऽपि वंशध्व निवशं गतः

अनव्य-गीतेन-गीत से, प्रीयते-प्रीति प्राप्त करते है या प्रसन्न होते है, देवः-देवता, सर्वज्ञः-सब कुछ जानने वाले, पार्वतीपतिः- शंकर भगवान, गोपीपति-श्रीकृष्ण अनन्तोऽपि-जिसका कभी अंत नहीं होता व भी वंशध्व- सबको अपने वश में करने वाले,निवशं गतः-खुद बेबस हो जाते है।

भावार्थ-महादेव गीत से ही प्रसन्न होते है तथा सर्वज्ञ अनंत तथा सबको अपने वश में करने वाले वे श्री कृष्ण गीत के सामने वे भी खुद बेबस हो जाते है।

सामवेदे ततो ब्रह्मा वीणासक्ता सरस्वती।

अन्ये च बहवः पूर्वे यक्षदानवमानवाः ॥20॥

पदच्छेदः-सामवेदे ततो (रतो) ब्रह्मा वीणासक्ता सरस्वती अन्ये च बहवः पूर्वे यक्ष दानव मानवाः

अनव्य-सामवेदे-सामवेद मे, ततो(स्तो)-तब(लगे हुए), ब्रह्मा-ब्रम्हा जी ने, वीणासक्ता-वीणा प्रदान की, सरस्वती-सरस्वती को, अन्ये च-और अन्य बहवः-बहुत सारे, पूर्वे-पहले के, यक्षदानवमानवाः-यक्ष दानव और मानव।

भावार्थ-सामवेद मे तब लगे हुए ब्रह्मा जी ने तब सरस्वती को वीणा प्रदान की ततपश्चात प्राचीन यक्ष दानव व मानवो को भी उसका ज्ञान कराया।

अज्ञातहृदयस्वादुर्वालः पर्यङ्कधारकः ।

रुदन् गीतामृतं पीत्वा हर्षोत्कर्षे प्रपद्यते ॥21॥

पदच्छेदः-अज्ञातहृदय स्वादुर्वालः पर्यङ्कधारकः रुदन् गीतामृतं पीत्वा हर्षोत्कर्षे प्रपद्यते

अनव्य-अज्ञातहृदय-जिसके हृदय के बार मे पता लगाना कठिन हो, स्वादुर्वालः- केवल आनंद लेने वाला बालक ,पर्यडंकधारकः-केवल गोदी मे ही बैठने वाला, रुदन-रोता हुआ, गीतामृतं-गीत रूपी अमृत को, पीत्वा-पीकर, हर्षोत्कर्ष-खुशी का चरम सुख,प्रपद्यते-प्राप्त करते है।

भावार्थ-सदा आनंदित रहने वाला अज्ञात हृदयी केवल गोद मे ही रहने वाला बालक जब रोता है तब वह भी गीत को सुनकर आनंद का अनुभव करता है और रोना बंद कर देता है।

वनेचरस्तृणाहारः श्रुत्वा मृगशिशुः पशुः ।

लुब्धो लुब्धकसङ्गीते गीते यच्छति जीवितम् ॥22॥

पदच्छेदः-वनेचर स्तृणाहारः श्रुत्वा मृगशिशुः पशुः लुब्धो लुब्धकसङ्गीते गीते यच्छति जीवितम्

अनव्य-वनेचर-शिकारी, तृणाहारः-केवल घास खाने वाले, श्रुत्वा-सुनकर, मृगशिशुः- मृगशावक, पशुः-पशु, लुब्धो-प्राप्त करके(लोभी), लुब्धकसङ्गीते-संगीत का आनंद प्राप्त करके, गीते-उस गीत में, यच्छति-दे देता है, जीवितम्-अपना जीवन

भावार्थ- शिकारी के मुख से गीत को सुनकर केवल चारा खाने वाले मृगशावक पशु उस लालची शिकारी को उसके द्वारा गाये गए गीत का आनंद प्राप्त करने के बदले अपने प्राण सहर्ष दे देता है।

कृष्णसर्पोऽपि तं नादं श्रुत्वा हर्ष प्रपद्यते।

तस्य गीतस्य माहात्म्यं का प्रशंसितुमर्हति ॥23॥

पदच्छेदः-कृष्णसर्पोऽपि तं नादं श्रुत्वा हर्ष प्रपद्यते तस्य गीतस्य माहात्म्यं का प्रशंसितुम् अर्हति

अनव्य-कृष्णसर्पोऽपि-काला साँप भी, तं नादं श्रुत्वा-उस नाद को सुनकर, हर्ष-खुशी, प्रपद्यते-प्राप्त करता,तस्य गीतस्य-उसकी गीत की, माहात्म्यं-महत्वशिज्ञता, कः-कौन प्रशंसितुम-प्रशंसाकरने की लिए, अर्हति-योग्य है।

भावार्थ- काला सर्प भी उस नाद को सुनकर आनंद प्राप्त करता है तथा उसके गीत की महत्वशील की प्रशंसा करने के कोई भी योग्य नहीं गई अर्थात उसका वर्णन अन्य कोई नहीं कर सकता।

सर्वाश्रमाणां जातीनां नृपाणां प्रीतिवर्धनम् ।।

धर्मार्थकाममोक्षाणामिदमेव हि साधनम् ॥24॥

पदच्छेदः-सर्वाश्रमाणां जातीनां नृपाणां प्रीतिवर्धनम् ।।धर्मार्थकाममोक्षाणाम् इदमेव हि साधनम्

अनव्य-सर्वाश्रमाणां-ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ, सन्यास, जातीनां-जातियों का, नृपाणां-राजाओ का, प्रीतिवर्धनम्-प्रेम बढ़ाने वाला,धर्मार्थकाममोक्षाणा-धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष इदमेव-यह ही, साधनम्-साधन है।

भावार्थ- ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यास, इन आश्रमों का विभिन्न जातियों राजाओं का आपस में प्रेम बढ़ाने वाला धर्म, अर्थ,काम व मोक्ष का साधन यह गीत ही है।

स्थायी स्वरेषु सञ्चारी तथारोद्यवरोहकौ ।

स्वराश्चतुर्विधा ज्ञेया रागोत्पादनगोचराः ॥25॥

पदच्छेदः-स्थायी स्वरेषु सञ्चारी तथा आरोह अवरोहकौ स्वराः चतुर्विधा ज्ञेया रागोत्पादन गोचराः

अनव्य-स्थायी-हमेशा स्थिर रहने वाले, स्वरेषु-स्वरों मे, सञ्चारी-संचरणशील, तथारोद्यवरोहको-तथा आरोह व अवरोह को, स्वरा-स्वर, च-और, श्रतुर्विधा-चार प्रकर से सुना जाने योग्य, ज्ञेया- जानने योग्य, रागोत्पादन-रागों को उत्त्पन्न करने वाले, गोचराः -जिसका ज्ञान इंद्रियों द्वारा हो सके

भावार्थ-स्वरों मे हमेशा स्थिर रहने वाले जो रागों को उत्त्पन्न करने वाले तथा जो आरोह व अवरोह को जानने योग्य,जिसका ज्ञान संचरणशील हो और इंद्रियों द्वारा सुना जाने योग्य हो सके तथा चार प्रकर से सुना जाने के योग्य हो।

स्वरा वादी च संवादी विवादी च चतुर्विधाः ।

अनुवादी च सर्वत्र प्रयोगे बहुशः स्मृतः (स्मृता)॥26॥

पदच्छेदः–स्वरा वादी च संवादी विवादी च चतुर्विधाः अनुवादी च सर्वत्र प्रयोगे बहुशः स्मृतः (स्मृता)

अनव्य-स्वरा- वादी-राग का मुख्य स्वर, स्वर- संगीत में वह शब्द जिसका कोई निश्चित रूप हो और जिसकी कोमलता या तीव्रता अथवा उतार चढ़ाव आदि का, सुनते ही, सहज में अनुमान हो सके, च-और, संवादी- संगीत में वह स्वर जो वादी के साथ सब स्वरों के साथ मिलता और सहायक होता है, जैसे-पंचम से षडज तक जाने में बीच के तीन स्वर संवादी अर्थात धैवत, षडज तथा निषाद विवादी-विवाद उत्पन करनेवाला, च-और चतुर्विधाः-चार विधियों या रूपोंवाला, अनुवादी-संगीत में स्वर का एक भेद जिसकी किसी राग में आवश्यकता न हो और जिसके लगाने से राग अशुद्ध हो जाय, च-और, सर्वत्र-सभी, प्रयोगे-प्रयोग किया जा सके, बहुशः -बार बार, स्मृतः - जो स्मृति का विषय हो,

भावार्थ- संगीत में शब्दों का बहुत ही महत्तव होता है,जिस प्रकार किसी राज्य पर राज करने वाले राजा का सायना परामर्श देनेवाला मंत्री जिसका संवाद रुचिकर और कुदरती गुणो से युक्त होता है, उसी प्रकार संगीत में वह शब्द जिसका कोई निश्चित रूप हो और रागों का मुख्य स्वर हो, जिसकी कोमलता या तीव्रता अथवा उतार चढ़ाव आदि का रागों मे मुख्य स्वरो मे निश्चित रूप हो, और जिसकी कोमलता या तीव्रता अथवा उतार चढ़ाव आदि को सुनते ही सहज ही अनुमान हो सके, जो स्मृति का विषय हो, तथा जिसका प्रयोग सभी जगह बार-बार किया जा सकता हो

वादी स्वरस्तु राजा स्यान्मन्त्री संवादिरुच्यते (संवादी)।

स्वरो विवादी वैरी स्यादनुवादी च भृत्यवत् ॥27॥

पदच्छेदः-वादी स्वरस्तु राजा स्यात् मन्त्री संवादी उच्यते (संवादी)। स्वरो विवादी वैरी स्यात् अनुवादी च भृत्यवत्

अनव्य-वादी-राग का मुख्य स्वर, स्वर- संगीत में वह शब्द जिसका कोई निश्चित रूप हो और जिसकी कोमलता या तीव्रता अथवा उतार चढ़ाव आदि का, सुनते ही, सहज में अनुमान हो सके, अस्तु- जो हो, राजा- किसी राज्य पर राज करने वाला राजा कहलाता है, स्यान-सायना अथवा ज्ञाता, मन्त्री-परामर्श देनेवाला, संवादि-संवाद करनेवाला, रुच्यते-रुचिकर कुदरती गुणो से युक्त,स्वरो-बजनें वाले उपरणों से उत्पन्न ध्वनिसमूह या गीत को यंत्र और मनुष्य के गले से निकले हुए स्वर कहते है, विवादी-विवाद को उत्तपन्न करने वाला, वैरी-शत्रु, स्यात-होता है,अनुवादी-पीछे-पीछे बोलने वाला, च-और, भृत्यवत्-भाई की तरह होता है।

भावार्थ-राग का मुख्य स्वर किसी राज्य पर राज करने वाला राजा के सामान होता है, उसी प्रकार संगीत में वह शब्द जिसका कोई निश्चित रूप हो और जिसकी कोमलता या तीव्रता अथवा उतार चढ़ाव आदि का, सुनते ही, सहज में अनुमान हो सके, जिस प्रकार सायना अथवा ज्ञाता परामर्श देनेवाला अथवा संवाद रुचिकर कुदरती गुणो से युक्त होता है, उसी प्रकार बजनें वाले वाध्य उपरणों से उत्पन्न ध्वनिसमूह या गीत को यंत्र और मनुष्य के गले से निकले हुए स्वर कहते है, परंतु सही तारतम्य ना होने पर कुछ भाई की तरह पीछे-पीछे बोलने वाले स्वर शत्रु के समान ही विवाद को उत्तपन्न करने वाले होते है।

देववंशास्तु सगमाः पञ्चमः पितृवंशजः ।
रिधौ ऋषिकुले जातौ निषादोऽसुरवंशजः ॥28॥

पदच्छेदः-देववंशास्तु सगमाः पञ्चमः पितृवंशजः रिधौ ऋषिकुले जातौ निषादो असुरवंशजः

अनव्य-देववंशास्तु-देवताओं के कुल के होता है, सगमाः - षड्ज, गान्धार मध्यम, पञ्चमः-पंचम, पितृवंशजः-पितृकुल के समान, रिधि-ऋद्धि, ऋषिकुले-ऋषियों के कुल अर्थात वंश की होती है, निषादो-निषाद,असुर-असुर सुरों के विपरीत चलने वाला- वंशजः-वंश का होना

भावार्थ-"स्वर"देवताओं के कुल के होता है, और पंचम पितृकुल के समान होता है। बजनें वाले उपरणों से उत्पन्न ध्वनिसमूह या गीत को यंत्र और मनुष्य के गले से निकले हुए को स्वर कहते है, और ऋद्धियां ऋषियों के कुल अर्थात वंश की होती है, तथा निषाद असुर के कुल का अर्थात सही तारतम्य ना होने सुरों के विपरीत चलने वाला होता है।

ब्रम्हजाती समौ ज्ञेयौ रिधौ क्षत्रियजातिकौ ।।
निगौ वैश्याविति प्रोक्तौ पञ्चमः शूद्रजातिकः ॥29॥

पदच्छेदः-ब्रम्हजाती समौ ज्ञेयौ रिधौ क्षत्रिय जातिकौ निगौ वैश्यो इति प्रोक्तौ पञ्चमः शूद्रजातिकः

अनव्य-ब्रम्हजाती- ब्रह्मा जी कुल से अर्थात ब्राम्हण वंश का होता है, स-षडज, औ-और, म-मध्यम, ज्ञेयो- जिसका ज्ञान जाननें योग्य है, रि-ऋषभ, धौ-धैवत, क्षत्रियजातिकौ-क्षत्रियजाति वाले, नि-निषाद, गौ-गान्धार, वैश्या-वैश्यत्व अर्थात व्यापार कुल का, विति-जाननेवाला, प्रोक्तौ-कहे जाते है, पञ्चमः - पञ्चम, शूद्रजातिकः -शूद्र जाति के कहे जाते है।

भावार्थ-षडज तथा मध्यम ब्रह्मा जी कुल से अर्थात ब्राम्हण वंश का होता है, तथा ऋषभ तथा धैवत क्षत्रिय कुल अर्थात वंश का होता है, साथ ही निषाद, और गान्धार वैश्यत्व के तथा, पञ्चम शूद्र जाति अर्थात वंश का होता है। जिसका ज्ञान संगीत शास्त्रियों के लिए जाननें व स्मरण के योग्य है।

पद्माभः पिन्जरः स्वर्णवर्णः कुन्दप्रभः सितः।

पीतः कर्बुर इत्येते तेषां वर्णा निरूपिताः ॥30॥

पदच्छेदः-पद्माभः पिन्जरः स्वर्णवर्णः कुन्दप्रभः सितः पीतः कर्बुर इत्येते तेषां वर्णा निरूपिताः

अनव्य-पद्माभः-भगवान विष्णु, पिन्जरः-लालिमा युक्त पीले रंग का, स्वर्णवर्णः-स्वर्ण के समान वर्ण अर्थात पीला, कुन्दप्रभः-जूही की तरह का एक पौधा, जिसमें सफेद फूल लगते है के समान प्रभायुक्त, सितः-सफेद, पीतः-पीला, कर्वुर-सोना, इत्येते-इसी प्रकार के अन्य, तेषां-उन स्वरों के, वर्णा-वर्णो के अनुसार, निरूपिताः-जिसकी विस्तुत रूप से विवरण हो चुका हो ।

भावार्थ- हे भगवान विष्णु, लालिमा युक्त पीले रंग का स्वर्ण के समान वर्ण अर्थात पीला, जूही की तरह का एक पौधा, जिसमें सफेद फूल लगते है के समान प्रभायुक्त सफेद, पीला, षडज, सोने के समान इसी प्रकार के अन्य स्वरों का वर्णो के अनुसार ऋषभ, गान्धार, मध्यम, पञ्चम, धैवत, निषाद जिसके विस्तुत स्वरूपों का विवरण पूर्व मे हो चुका है।

षडज्ः कमलवर्णः स्याद्दषभः पिञ्जरस्तथा ।

गान्धारः स्वर्णवर्णः स्यान्मध्यमः कुन्दवर्णकः ॥31॥

पदच्छेदः-षडज्ः कमलवर्णः स्याद् ऋषभः पिञ्जरस्तथा गान्धारः स्वर्णवर्णः स्यात् मध्यमः कुन्दवर्णकः

अनव्य-षड्डुः-संगीत के सात स्वरों में से चौथा स्वर, कमलवर्णः-एक प्रकार का वर्णवृत्त जिसका प्रत्येक चरण एक नगण का होता है। स्याह-कृष्णा वर्ण का, द्दषभः- ऋषभ, पिञ्जर-लालिमा युक्त पीले रंग का ,स्तथा-में स्थित रहनें वाला, गान्धारः-गान्धार, स्वर्णवर्णः-सोने के समान, स्यान-सयाना, मध्यमः-मध्यम, कुन्दवर्णकः-चमकदार सफ़ेद

भावार्थ- संगीत के सात स्वरों में से चौथा स्वर एक प्रकार का वर्णवृत्त जिसका प्रत्येक चरण एक नगण का होता है। पिञ्जर लालिमा युक्त पीले रंग का, ऋषभ कृष्ण वर्ण का, पिञ्जर अर्थात लालिमा युक्त पीले रंग में स्थित रहनें वाला, गान्धार सोने के समान, मध्यम सयाना तथा चमकदार सफ़ेद के वर्ण का होता है।

पञ्चमः सितवर्णः स्याध्दैवतः पीतवर्णकः ।

नैषादः कर्बुरो वर्णः सप्तवर्णा निरूपिताः ॥32॥

पदच्छेदः-पञ्चमः सितवर्णः स्याद् धैवतः पीतवर्णकः नैषादः कर्बुरो वर्णः सप्तवर्णा निरूपिताः

अनव्य-पञ्चमः-पंचम, सितवर्णः-सफेद रंग, स्या-कदाचित्, ध्दैवतः-धैवत, पीत-पीला, वर्णकः-वर्ण का, नैषादः-निषाद, कर्वरो-चीता पशु के रंग के समान अर्थात दो रंगों का, वर्णः -वर्ण का, सप्तवर्णा-सात वर्णो, निरूपिताः -का विवरण क्रमशः गुणों का वर्ण-पत्र है।

भावार्थ-सभी सात सुरों के विवरण को क्रमशः रंगों-गुणों का वर्ण-पत्र है, जैसे पंचम स्वर का वर्ण सफेद, धैवत स्वर का वर्ण पीला है, निषाद चीता पशु के रंग के समान अर्थात दो रंगों का वर्णो का ज्ञान ज्ञात पुस्तकों अथवा पांडुलिपियों के आधार पर कहा जाता है ।

जम्बुशाककुशक्रौञ्चशाल्मलीश्वेतनामसु ।

द्वीपेषु पुष्करे चैव जाताः षड्जादयः स्वराः ॥33॥

पदच्छेदः-जम्बु शाक कुश क्रौञ्च शाल्मली श्वेत नामसु द्वीपेषु पुष्करे चैव जाताः षड्जादयः स्वराः

अनव्य- जम्बु-जम्बुद्वीप, शाक- शाकद्वीप- पुराणानुसार सात द्वीपों में से एक द्वीप, विशेष-इसमें ऋतुव्रत, सत्यव्रत, दानव्रत और अनुव्रत बसते है, कुश- पुराणानुसार सात द्वीपों में से एक, जो चारों ओर घृतसमुद्र से घिरा है, क्रौञ्च-पुराणानुसार सात द्विपो में से एक विशेष-इस द्विप के सात खंड या वर्ष है और प्रत्येक वर्ष में एक नदी और एक पहाड़ है शाल्मली- सेमल, श्वेत- जिसमें कोई रंग न मालूम हो बिना रंग का अर्थात पारदर्शी सफेद, नामसु-नाम से जाने जाते है, द्वीपेषु वज्र के समूह को द्वोपपु ज या द्वीपमाला कहते है, पुष्करे-इसका विस्तार शाकद्विप से दूना कहा गया है, च-और, एव-भी, जाताः-उत्तपन्न होते है या बोले जाते है, षड्जादयः स्वराः-षड्ज आदि स्वर कहे जाते है।

भावार्थ-जम्बू, शाक, कुश, क्रौञ्च, शाल्मली, श्वेत, तथा पुष्कर आदि द्वीपों में षड्ज आदि स्वर बोले जाते है।(पुराणानुसार सात द्वीपों में से एक द्वीप, विशेष-यह दीप पृथवी के मष्य में माना गया है। पुराण का मत है कि यह गोल है और चारो ओर से खारे समुद्र से घिरा है। यह एक लाख योजन विस्तीर्ण है और इसके नौ खंड माने गए है जिनमें प्रत्येक खंड़ नौ-नौ हजार योजन विस्तीर्ण है । इन नौ खंड़ों को वर्ष भी कहते है इलावृत खंड इन खंडौ के बीच में बतलाया गया है। इलावृत खंड के उत्तर में तीन खंड है-रम्यक, हिरण्मय, और कुरुवर्ष। नील, श्वेत और श्रृंगवान् नामक पर्वत क्रमशः इलावृत और रम्यक, रम्यक और हिरण्मय तथा हिरण्मय और कुरुवर्ष के मध्य में है। इसी प्रकार इलावृत के दक्षिण में भी तीन वर्ष है जिनके नाम हरिवर्ष, पुरुष और भारतवर्ष है, और दो दो वर्षों के बीच एक एक पर्वत है जिनके नाम निषध, हेमकूट और हिमालय है। इलावृत के पूर्व में मद्राश्व और पश्चिम में केतुमाल वर्ष है तथा गंधमादन और माल्य नाम के दो पर्वत क्रमशः इलावृत खंड़ के पूर्व और पश्चिम सीमारूप है । पुराणों का कथन है कि इस द्वीप का नाम जम्बुद्वीप इसलिये पड़ा है कि इसमें एक बहुत बड़ा जंबु का पेड़ है जिसमें हाथी के इतने बड़े फल लगते है। बोद्ध लोग जंबुद्वीप से केवल भारतवर्ष का ही ग्रहण करते है।)

जम्बुद्वीपे च षड्ज स्याच्छाकले ऋषभोदयः ।

कुशद्वीपे च गान्धारः क्रौञ्चद्वीपे च मध्यमः ॥34॥

पदच्छेदः-जम्बुद्वीपे च षड्ज स्याच्छाकले ऋषभोदयः कुशद्वीपे च गान्धारः क्रौञ्चद्वीपे च मध्यमः

अनव्य-जम्बुद्वीपे-जम्बुद्वीप मे, च षड्जः-और षड्ज, स्यात्-कदाचित्, च-और, शाकले-शाकद्वीप, ऋषभोदयः-ऋषभ का उदय, कुशद्वीपे-कुशद्वीप में, च गान्धारः-और गान्धार, क्रौञ्चद्वीपे-क्रौञ्चद्वीप में, च मध्यमः-और मध्यम

भावार्थ-कदाचित् जम्बुद्वीप में षड्ज और शाकद्वीप में ऋषभ का उदय, कुशद्वीप में गान्धार तथा क्रौञ्चद्वीप में मध्यम स्वर का उदय हुआ है, यह कहा जाता है।

शाल्मलीद्वीपनामाख्ये पञ्चमः (पञ्चमस्य समुद्भवः) स्वर उद्भवः (?) ।

श्वेतद्वीपे तथा जन्म धैर्वतं (क्लिष्टान्दयोऽयं)नामसंज्ञिकम् (?) ॥35॥

पदच्छेदः-शाल्मलीद्वीपनामाख्ये पञ्चमः (पञ्चमस्य समुद्भवः) स्वर उद्भवः (?)। श्वेतद्वीपे तथा जन्म धैर्वतं (क्लिष्टान्दयोऽयं)नामसंज्ञिकम् (?)

अनव्य-शाल्मलीद्वीपनामाख्ये-शाल्मली द्वीप के नाम ख्याति प्राप्त, पञ्चमः स्वर-पञ्चम स्वर, उद्भवः-की उत्पति, श्वेतद्वीपे-श्वेतद्वीप में, तथा-और, जन्म धैर्वतं-धैवत का जन्म, नामसंज्ञिकम्- नाम को संज्ञान में लिया जाना।

भावार्थ-शाल्मली द्वीप के नाम ख्याति प्राप्त में पञ्चम स्वर का तथा श्वेतद्वीप में धैवत का जन्म को नाम को संज्ञान में लिया जाना मानना चाहिये।

पुष्करे चैव जातोऽयं निषादः परिकीर्तितः ।

सप्तस्वरान्समुद्धृत्य वीणादिषु निधाय च ॥36॥

पदच्छेदः-पुष्करे चैव जातोऽयं निषादः परिकीर्तितः सप्तस्वरान् समुद्धृत्य वीणादिषु निधाय च

अनव्य-पुष्करे- पुष्कर, च-और, एव- सहज ही, जातोऽयं-गुण, धर्म, आकृति आदि की समानता के आधार पर विचार करना, निषादः-निषाद स्वर, परिकीर्तितः-किसी अन्य के द्वारा गुणगान से प्राप्त ख्याति, सप्तस्वरान्-सात सुरों में, समुद्धृत्य-समाहित कर देना, वीणादिषु-वीणा आदि वाध्यों में, निधाय-स्थित कर देना, च-और।

भावार्थ- भावार्थ- पुष्कर द्वीप जिससे निषाद स्वर की उतपत्ति हुयी है, वीणा आदि वाध्यों में गुण, धर्म, आकृति आदि की समानता के आधार पर सातो सुरों समाहित कर दिया गया।

दक्षोऽत्रिः कपिलश्चैव वसिष्ठो भार्गवस्तथा।

नारदस्तुम्बुरुश्चैव षड्वादीनां ऋषीश्वराः ॥37॥

पदच्छेदः-दक्षोऽत्रिः कपिलश्चैव वसिष्ठो भार्गवस्तथा नारद स्तुम्बुरु श्चैव षड्वादीनां ऋषीश्वराः

अनव्य-दक्ष-दक्ष, औ-और, ऽत्रिः -अत्री ऋषी (अत्रि जिनको ब्रह्मा जी के पुत्र माना जाता है), कपिलश्चैव-तथा कपिल मुनि, एव-और, वसिष्ठो-तथा गुरू वसिष्ठ, भार्गवस्तथा-भार्गव वंश में स्थित है, नारदस्-नारद, तुम्बुरु-तुम्बुरु-गायकों में सर्वश्रेष्ठ और गंधर्वों के महान संगीतकार है, श्चैव-च-और, एव-भी, षड्डादीनां ऋषीश्वराः -अग्नि, ब्रह्मा, चंद्र, विष्णु, नारद, तुंबरु-ये छः संगीत के महर्षि है ।

भावार्थ-दक्ष, ऋषी अत्री, कपिल मुनि, भार्गव वंश के गुरु वसिष्ठ ,नारद-देवर्षि नारद तथा ऋषी तुम्बुरु-क्रमशः यह छः संगीत के महर्षि है ।

वह्निर्ब्रह्मा शारदा च शर्वश्रीनाथभास्कराः।
गणेश्वरादयो देवाः षज्डादीनां तु देवताः ॥38॥

पदच्छेदः-वह्निर्ब्रह्मा शारदा च शर्व श्रीनाथ भास्कराः गणेश्वरादयो देवाः षज्डादीनां तु देवताः

अनव्य-वह्नि-अग्नि, ब्रह्मा-ब्रह्मा, शारदा-माँ सरस्वती, च-और, शर्वश्रीनाथ-भगवान विष्णु, भास्कराः -सूर्य देव, जो समस्त भूलोक को अपने तेज़ प्रकाशमान करते है,गणेश्वरादयो-पार्वती पुत्र गणाधिपति श्री गणेश, देवाः -देवाधिदेव महादेव भगवान शंकर, षडादीनां तु देवताः -क्रमशः यह छः संगीत के देवता है ।

भावार्थ-देवर्षि नारद द्वारा संगीत के देवताओं में छह देवों का क्रमशः उल्लेख किया गया है। अग्नि, ब्रह्मा, भगवान विष्णु, पार्वती पुत्र गणाधिपति श्री गणेश, आदित्य जो समस्त भूलोक को प्रकाशमान करते है, तथा देवाधिदेव महादेव भगवान शंकर है ।

क्रमादनुष्टुब्गायत्री त्रिष्टुप् च बृहती तथा।
पङक्युष्णिगौ च जगती छन्दांसि परिकीर्तिताः (१) ॥39॥

पदच्छेदः-क्रमाद् अनुष्टुप् गायत्री त्रिष्टुप् च बृहती तथा पंक्ति उष्णिकौ च जगती छन्दांसि परिकीर्तिताः

अनव्य-क्रमादनुष्टुब्गायत्री-क्रमानुसार व्यवस्थित बत्तीस मात्राओं का गायत्री छंद, त्रिष्टुप्-44 त्रिष्टुप् वेदों में प्रयुक्त एक छंद है। इसमें कुल 44 वर्ण होते है जो 11-11-11-11 वर्णों के चार पदों में व्यवस्थित होते है, च-और, बृहती-वेदों में प्रयुक्त एक छंद है। इसमें कुल -36 वर्ण होते है, और इसके चार चरण है-1/8 2/8 3/12 4/8, तथा-तथा, तथा पतयुष्णिगौ-लिखने का क्रम वेदों में प्रयुक्त एक छंद है, इसमें कुल-28 वर्ण होते है। गायत्री से 4 छंदों से अधिक लिपटी होने के कारण इसे उष्णिक कहते है, च-और, जगती छन्दांसि-वेदों में प्रयुक्त एक छंद है। इसमें कुल-वर्ण 48 होते है ,यह चार पाद में होती है प्रत्येक पाद में 12/12 वर्ण समाहित होती है, परिकीर्तिताः -गुणगान से प्राप्त ख्याति

भावार्थ- क्रमादनुष्टुब्गायत्री-क्रमानुसार व्यवस्थित 32 मात्राओं का गायत्री छंद, त्रिष्टुप्-44 त्रिष्टुप् वेदों में प्रयुक्त एक छंद है। इसमें कुल 44 वर्ण होते है जो 11-11-11-11वर्णों के चार पदों में व्यवस्थित होते है, च-और, बृहती-वेदों में प्रयुक्त एक छंद है। इसमें कुल-36 वर्ण होते है और इसके चार चरण है- 1/8 2/8 3/12 4/8, तथा-तथा, पंक्तियुष्णिगौ-लिखने का क्रम वेदों में प्रयुक्त एक छंद है, इसमें कुल- 28 वर्ण होते है। गायत्री से 4 छंदों से अधिक लिपटी होने के कारण इसे उष्णिक कहते है, च-और, जगती छन्दांसि-वेदों में प्रयुक्त एक छंद है। इसमें कुल-वर्ण 48 होते है ,यह चार पाद में होती है प्रत्येक पाद में 12/12 वर्ण समाहित होती है, परिकीर्तिताः -गुणगान से प्राप्त ख्याति

षड्जस्य जमदग्निश्च आत्रेयो ऋषभस्य च (?) ।
गान्धारस्य गौतमस्तु वसिष्ठो मध्यमस्य च ॥40॥

पदच्छेदः-षड्जस्य जमदग्निश्च आत्रेयो ऋषभस्य च (?) गान्धारस्य गौतमस्तु वसिष्ठो मध्यमस्य च

अनव्य-षड्जस्य-षड्ज को, जमदग्निश्-जमदग्नि ऋषि, च-और, आत्रेयो-ऋषि आत्रेय, ऋषभस्य-ऋषभ को, च-और, गान्धारस्य-गान्धार को, गौतमस्तु-गौतम ऋषि का, वसिष्ठो-वसिष्ठ ऋषि का, च-और, मध्यमस्य-मध्यम,

भावार्थ- षड्ज का ऋषि जमदग्नि ऋषि आत्रेय ऋषभ तथा गौतम ऋषि गान्धार का और वसिष्ठ ऋषि क्रमशः मध्यम स्वर के गोत्र कहे गये है।

श्रीवत्सः पञ्चमस्यैव धैवतस्य पराशरः ।
शालङ्कायो निषादस्य गोत्राणि कथितानि च ॥41॥

पदच्छेदः-श्रीवत्सः पञ्चमस्यैव धैवतस्य पराशरः शालङ्कायो निषादस्य गोत्राणि कथितानि च

अनव्य-श्रीवत्सः पञ्चमस्यैव धैवतस्य पराशरः शालङ्कायो निषादस्य गोत्राणि कथितानि च श्रीवत्सः-भृगु के चरण प्रहार का चिह्न अर्थात ऋषि भृगु, पञ्चमस्यैव-पञ्चम स्वर, धैवतस्य-धैवत का, पराशरः -पराशर ऋषि, शालङ्कायो-पाणिनि ऋषि का नाम, निषादस्य-निषाद का, गोत्राणि-गोत्र के, कथितानि च-कहे जाते है।

भावार्थ-गोत्रों के अनुसार पञ्चम स्वर भृगु ऋषि, धैवत पराशर ऋषि तथा पाणिनि ऋषि षाद गोत्र के कहे जाते है।

नि षड्डः शतभिषग्जश्च चित्रा च ऋषभस्य च (?) ।
गान्धारस्य धनिष्ठा भं मध्यमस्य मघा स्मृता ॥42॥

पदच्छेदः-षड्डः शतभिषग्जश्च चित्रा च ऋषभस्य च (?) गान्धारस्य धनिष्ठा भं मध्यमस्य मघा स्मृता

अनव्य-षड्जःशतभिषग्जश्च-षड्ज को शतभिषा नक्षत्र का, चित्रा च ऋषभस्य-ऋषभ को चित्रा का, च गान्धारस्य-और गान्धार को धनिष्ठा भं मध्यमस्य मघा स्मृता

भावार्थ- षड्ज को शतभिषा नक्षत्र का कहा गया है, जो सत्ताइस नक्षत्रों में से चौबीसवाँ नक्षत्र है इसके अधिष्ठाता देवता वरुण कहे गए है, नक्षत्रों में से चौदहवाँ नक्षत्र चित्रा है, शतपथ ब्राह्मण के अनुसार सुंदर और चित्र विचित्र होने के कारण ही इसे चित्रा कहते है, यह ऋषभ स्वर का, और इसी प्रकार गान्धार को घनिठा तथा मध्यम को मघा नक्षत्र का कहा गया है।

पञ्चमस्योत्तरा भं स्यात्पूर्वाषाढा तु धैवतम् ।
अनुराधा निषादस्य षड्डादीनां तु तारकाः ॥43 ॥

पदच्छेदः-पञ्चम अस्य उत्तरा भं स्यात् पूर्वाषाढा तु धैवतम् अनुराधा निषादस्य षड्जा दीनां तु तारकाः

अनव्य-पञ्चम-पंचम स्वर को, स्यो-सहित, उत्तरा-उत्तरा नक्षत्र, भं-*षाढा, स्यात्-कदाचित्, पूर्वाषाढा-नक्षत्रों में बीसवाँ नक्षत्र अर्थात पूर्वाषाढ,तु-का, धैवतम्- धैवत, अनुराधा-27 नक्षत्रों में 17 वाँ नक्षत्र अनुराधा नक्षत्र बड़ा शुम और मंगलिक माना जाता है, निषादस्य-निषाद का, षड्जादीनां- हे दीनों के नाथ, तु-तुम अर्थात शिव, तारकाः-नाराच नामक छंद एक प्रकार का मात्रिक छंद जिसके प्रत्येक चरण में 24 मात्राएँ होती है।

भावार्थ- पंचम स्वर अर्थात पा को उत्तराषाढा नक्षत्र का और कदाचित् धैवत धा स्वर को पूर्वाषाढा नक्षत्र, निषाद अर्थात नी को अनुराधा नक्षत्र के स्वामित्व का स्वर है, हे दीनों के नाथ तुम अर्थात शिव के उर मे बसते है। (पंचम स्वर को नक्षत्रपुरुष के पाँव, रोहिणी और अश्विनी को जाँघ, पूर्वाषाढा और उत्तरा-षाढा को उरु, उत्तराफाल्गुनी और पूर्वाफाल्गुनी को गुह्य, कृत्तिका को कमर, उत्तराभाद्रपदा स्त्री सूचक तथा नक्षत्र मण्डल का छब्बीसवाँ नक्षत्र है। इस नक्षत्र के अन्तर्गत नक्षत्रपुरुष के पैर के पंजे आते है । कदाचित् धैवत स्वर को नक्षत्रों में बीसवाँ नक्षत्र अर्थात पूर्वाषाढ थोडा नकचढ़ा त और ग के संयुक्ति से उत्पन तथा उग्र स्वभाव के होने बावजूद कोमल हृदयी और दूसरों से स्नेह रखने वाला होता है। निषाद स्वर अनुराधा नक्षत्र के स्वामित्व का स्वर है यह उग्र स्वभाव का तुनक मिजाज वाला तथा स्पष्ट होता है। षड्ज स्वर नाराच नामक छंद के समान तथा स्वभाव से वीर जैसा होता है)।

कुम्भस्तुला झषश्चैव सिंहः कन्या धनुस्तथा ।
वृश्चिकश्च तथा राश्यः क्रमाज्ज्ञेया बुधैः सदा ॥ 44 ॥

पदच्छेदः-कुम्भ स्त तुला झष च् श्रैव सिंहः कन्या धनु स्तथा वृश्चिकच् श् तथा राश्यः क्रमा ज्ज्ञेया बुधैः सदा

अनव्य- कुम्भ, तुला, मीन, सिंह, कन्या, धनु और वृश्चिक, तथा इन राशियों का क्रम बुद्धि में रखना चाहिए।

भावार्थ-क्रमानुसार कुम्भ, तुला, मीन, सिंह, कन्या, धनु, और वृश्चिक यह राशियों का क्रम है, इसको सदा प्रकाश में लाना और जानना चाहिए साथ ही बुद्धि में रखना चाहिए।

शनिभृगुः शशी चैव सूर्यश्चन्द्र सुतस्तथा ।

गुरुभूमिसुतश्चैव 'चैते राश्यधिदैवताः ॥45॥

पदच्छेदः-शनि भृगुः शशी चैव सूर्यश्चन्द्र सुत स्तथा गुरु भूमिसुत श्चैव चैते राश्य अधिदैवताः स्वराः सरिगमा श्चैव चत्वारो राक्षसाः स्मृताः

अनव्य-शनि-सूर्य पुत्र, भृगुःपुत्र-शुक्र, शशी-धरती पुत्र चन्द्र, चैव-तथा सूर्य-सूर्य, श्चन्द्र सुत-और बुध स्तथा-वहाँ रहे है। गुरु-देव गुरू ब्रहस्पति, भूमिसुत- मंगल, श्चैव 'चैते राश्य अधिदैवताः-वह मास जिसकी पूर्णिमा को चित्रा नक्षत्र पडे । संवत् का प्रथम मास चैत।

भावार्थ-ध्यान में रखना चाहिए वह मास जिसकी पूर्णिमा को चित्रा नक्षत्र पडे वह संवत् का प्रथम मास चैत (चैत्र) कहलाता है, जो सभी राशियों का अधिष्ठाता भी है। राशियों के क्रम में मेष राशि, वृषभ राशि, मिथुन राशि, कर्क राशि,सिंह राशि, कन्या राशि, तुला राशि, वृश्चिक राशि, धनु राशि, मकर राशि, कुंभ राशि और मीन राशि है। चैते राश्यधिदैवताः-पौराणिक मान्यता अनुसार ब्रह्माजी ने चैत्र शुक्ल प्रतिपदा से ही सृष्टि की रचना शुरू की थी। ब्रह्मा की सृष्टि रचना का पहला दिन।

स्वराः सरिगमाश्चैव चत्वारो राक्षसाः स्मृताः ।

पधौ मानुषसंज्ञौ च निषादं दैवतं विदुः ॥ 46 ॥

पदच्छेदः-स्वराः सरिगमा श्चैव चत्वारो राक्षसाः स्मृताः प धौ मानुष संज्ञौ च निषादं दैवतं विदुः

अनव्य-स्वराः-ब्रह्मा की बड़ी पत्नी का नाम जो गायत्री की सपत्नी कही गई है, सरिगमा-सरगम, श्चैव-च-और, ऐव-विशेष, चत्-चार, वारो-अलग, राक्षसाः -असुरों के समान, स्मृताः -संस्मरण में रखना चाहिए, प-पा स्वर, धौ-धा स्वर, मानुष-मनुष्य की श्रेणी, संज्ञौ-नाम धारण करनेवाला, च-और, निषादं-संगीत का स्वर नी, दैवतं-देवताओं के समान, विदुः -बुद्धिमान

भावार्थ-ब्रह्मा की बड़ी पत्नी का नाम जो गायत्री की सपत्नी कही गई है, के अनुसार सरगम अर्थात सा, रे, गा, मा को चार अलग-अलग असुरों के समान होते है, स्मरण में रखना चाहिए पा स्वर और धा स्वर मनुष्य की श्रेणी का नाम धारण करनें वाले और संगीत का स्वर नी देवताओं के समान बुद्धिमान माना गया है।

षड्जस्याद्भुतवीरौ च ऋषभस्य च रौद्रकः ।

गान्धारस्य च शान्तं च हास्याख्यं मध्यमस्य च ॥ 47

पदच्छेदः-षड्ज स्याद् अद्भुत वीरौ च ऋषभ स्य च रौद्रकः । गान्धार स्य च शान्तं च हास्या ख्यं मध्यम स्य च

अनव्य-षड्ज-संगीत का प्रथम स्वर सा, स्याद् -सापेक्षता, अद्भुत-अनूठा, वीरौ-वीरता सूचक भाव, च-और अथवा तथा, ऋषभ-संगीत का द्वितीय स्वर रे, स्य-होता है, च-और, रौद्रकः-अत्यंत उग्र और प्रचंड, गान्धार-संगीत का तृतीय स्वर गा, स्य-होता है, च-और, शान्तं-स्वभाव से शान्तं, च-और, हास्याख्यं-स्वभाव से हास्य, मध्यम-संगीत का चतुर्थ स्वर मा, स्य-होता है, च-और

भावार्थ-संगीत का प्रथम स्वर सा सापेक्ष रूप से एक अद्भुत, अनूठा वीरता का सूचक भाव से परिपूर्ण, और संगीत का द्वितीय स्वर रे होता है। जो स्वभाव से अत्यंत उग्र और प्रचंड होता है। संगीत का तृतीय स्वर गा होता है। जो स्वभाव से शान्तं और संगीत का चतुर्थ स्वर मा स्वभाव से हास्य होता है।**स्याद्**-सापेक्ष अथवा सापेक्षता का मतलब सापेक्ष होने की अवस्था या भाव को दर्शाता है।

पञ्चमस्य च शृङ्गारो बीभत्सो धैवतस्य च ।

करुणा च निषादस्य सप्तस्थानरसा नव ॥48॥

पदच्छेदः-पञ्चम स्य च शृङ्गारो वीभत्सो धैवत स्य च, करुणा च निषाद स्य सप्त स्थान रसा नव

अनव्य-पञ्चम स्य च शृङ्गारो वीभत्सो धैवत स्य च, करुणा च निषाद स्य सप्त स्थान रसा नव संगीत का पाँचवाँ स्वर अर्थात पा को श्रंगार रस, और संगीत का छटवाँ स्वर धा को विभत्स स्वरूप तथा संगीत के सात स्वरों का संगीत का सातवाँ स्वर नी करुणा का द्योतक तथा स्थान है ।

भावार्थ-संगीत का पाँचवाँ स्वर अर्थात पा को श्रंगार रस से परिपूर्ण और संगीत का तथा छटवाँ स्वर धा को विभत्स स्वरूप को दर्शाता है, तथा संगीत के सात स्वरों में संगीत का सातवाँ स्वर नी करुणा का द्योतक है, करुणा का कोई अर्थ नहीं समझा सकता परंतु इसका स्थान सातवाँ है।

ग्रामः स्वरसमूहः स्यान्मूर्च्छना तु स्वराश्रया।

षड्डमध्यमगान्धारग्रामत्रयमुदाहृतम् ॥ 49॥

पदच्छेदः-ग्रामः स्वर समूहः स्यान् मूर्च्छना तु स्वर आश्रया, षड्ड मध्यम गान्धार ग्राम त्रय मुदा हृतम्

अनव्य-ग्रामः-पहले दो ग्रामों का व्यवहार तो इसी लोक में मनुष्यों द्वारा होता है, स्वरसमूहः-स्वरों का समूह, स्यान्मूर्च्छना-तब इसकी मूर्च्छना, तु-तु, स्वरा-ब्रह्मा की सपत्नी का नाम जो गायत्री की भी कही गई है, श्रया-के आश्रय में, षड्ड-संगीत का प्रथम स्वर सा, मध्यम-चतुर्थ स्वर मा स्वभाव से हास्य होता

है, गान्धार-संगीत का तृतीय स्वर गा, ग्राम-जब कि इस तीसरे ग्राम का व्यवहार स्वर्गलोक में नारद जी करते है, त्रय-तीन, मुदात्-मुद्रायें, हतम्-होती है।

भावार्थ- संगीत के स्वरों के समूह की अधिष्ठात्री ब्रह्मा जी की सपत्नी गायत्री है, जो तथा सभी स्वरों को आश्रय देनें वाली कही गई है, संगीत के कुछ स्वरों की अवस्था मूर्च्छना सी होती है, संगीत का प्रथम स्वर सा, संगीत का तृतीय स्वर गा, संगीत का चतुर्थ स्वर मा स्वभाव से हास्य होता है। इन तीन मुद्राओं का व्यवहार तीसरे ग्राम अर्थात स्वर्गलोक में नारद जी करते है ।

षड्डश्च मध्यमश्चैव चैतौ भूमौ प्रकल्पितौ।

स्वर्गलोकेऽपि गान्धारः प्रसिद्धो न महीतले ॥50॥

पदच्छेदः-षड्डष् च मध्यम च श्रैव चैतौ भूमौ प्रकल्पितौ। स्वर्ग लोके अ्पि गान्धारः प्रसिद्धो न महीतले

अनव्य-षड्डष्-संगीत का प्रथम स्वर सा, च-और, मध्यम-चतुर्थ स्वर मा, च-और, श्रैव-जिसको सुना जा सके, चैतौ-वह चँद्र मास जिसकी पूर्णिमा को चित्रा नक्षत्र पडे, भूमौ-भूमि, प्रकल्पितौ-पूर्व में ही निश्चित किया हुआ, स्वर्गलोके-स्वर्गलोक में, अ्पि-भी, गान्धारः-संगीत का तृतीय स्वर गा, प्रसिद्धो-ख्याति प्राप्त, न-है, महीतले-धरती पर प्राप्त है।

भावार्थ-संगीत का प्रथम स्वर सा और चतुर्थ स्वर मा, यह चँद्र मास जिसकी पूर्णिमा को चित्रा नक्षत्र भूमि पर पडे जो पूर्व में ही निश्चित किया हुआ है, इसकी ख्याति परिकल्पना पूर्व में ही प्राप्त है, तथा स्वर्गलोक तथा पृथ्वी लोक में भी संगीत का तृतीय स्वर गा को ख्याति प्राप्त है।

षड्ग्रामः पञ्चमश्च धैवतश्च श्रुतिक्रमात् । .

मध्यमः पञ्चमः शुद्धषड्जसंवादिरुच्यते ॥51॥

पदच्छेदः-षड् ग्रामः पञ्चमष् च धैवतष् च श्रुति क्रमात् मध्यमः पञ्चमः शुद्धषड्ज संवादि रुच्यते

अनव्य-षड्ग्रामः-चैते राश्यधिदैवताः-पौराणिक मान्यता अनुसार ब्रह्माजी ने चैत्र शुक्ल प्रतिपदा से ही सृष्टि की रचना शुरू की थी। ब्रह्मा की सृष्टि रचना का पहला दिन, पञ्चमष्-संगीत का पाँचवा स्वर मा और, संगीत का छठवाँ स्वर धा, और साथ ही श्रवण करने की क्रिया या भाव के क्रमानुसार, मध्यमः -संगीत का चतुर्थ स्वर मा, पञ्चमः-संगीत का पाँचवा स्वर पा, शुद्धषड्ज-संगीत के शुद्ध भाव का प्रथम स्वर सा, संवादि-स्वरों के द्वारा संवाद, रुच्यते-रुचिकर,सुंदर,खूबसूरत और कातिमत् चमकीला।

भावार्थ-पौराणिक मान्यता अनुसार ब्रह्माजी ने चैत्र शुक्ल प्रतिपदा से ही सृष्टि की रचना शुरू की थी। वह ब्रह्मा जी का सृष्टि रचना का पहला दिन था, उसी प्रकार संगीत का पाँचवा स्वर पा और, संगीत का छठवाँ स्वर धा श्रवण करने की क्रिया या भाव के क्रमानुसार मध्यम पञ्चम और संगीत के शुद्ध

भाव का प्रथम स्वर सा स्वरों के द्वारा संवाद अतिरुचिकर,सुंदर,खूबसूरत और कातिमत् चमकीला लगता है।

अयं तु मध्यमग्रामः।

षड्जग्रामः-चैते राश्यधिदैवताः=पौराणिक मान्यता अनुसार ब्रह्माजी ने चैत्र शुक्ल प्रतिपदा से ही सृष्टि की रचना शुरू की थी। ब्रह्मा की सृष्टि रचना का पहला दिन, अब सा स्वर के ग्रामों मे प्रयोग का अनुभव करेगे।

सोपान्ते पञ्चमस्तिस्रो धैवतस्य चतुःश्रुतिः ।
पञ्चमो धैवतश्चैवर्षभः संवादिरुच्यते ॥52॥

पदच्छेदः-सोपान् अन्ते पञ्चम अस्ति स्त्रो धैवत् अस्य चतुः श्रुतिः पञ्चमो धैवत च् एव वर्षभः संवादि रुच्यते

अनव्य-सोपान्-पायदान अथार्त खण्ड, अन्ते-अन्त में, पञ्चम-पंचम स्वर पा,अस्ति-विद्यमानता अथवा भाव, स्त्रो-स्तिथ, धैवतस्य-धा स्वर की, चतुःश्रुतिः-चार प्रकार की श्रुतियाँ, पञ्चमो धैवत-पंचम स्वर मा और में धा, श्चैव- स्वरों के द्वारा संवाद सुनना, संवादिरुच्यते-रुचिकर,सुंदर,खूबसूरत और कातिमत् चमकीला।

भावार्थ-इस खण्ड के अन्त में महर्षि नारद पंचम स्वर पा के भाव जिसमें चार प्रकार की श्रुतियों विद्यमान होती है, का निरूपण कर रहे है। पंचम स्वर मा और धा में अर्थात पंचम स्वर में स्वर धा का प्रयोग अतिरुचिकर,सुंदर,खूबसूरत और कातिमत् चमकीला प्रतीत होता है।

अप्रसिद्धोऽपि भूलोके क्रमाद्वक्ष्येऽपि नारदः ।
तत्सु(त्स्व?)रूपं देवलोके ज्ञातव्यं शास्त्रलक्षणैः ॥53॥

पदच्छेदः-अप्रसिद्धो अ्पि भूलोके क्रमाद वक्ष्येऽपि नारदः तत्सु(त्स्व?)रूपं देवलोके ज्ञातव्यं शास्त्रलक्षणैः

अनव्य-अप्रसिद्धो-अविख्यात, जिसको लोग न जानते हों, अ्पि-भी, भूलोके-पृथ्वी लोक, क्रमाद-क्रमानुसार, वक्ष्येऽपि नारदः-देखनें पर मुनि नारद ने, तत्सु(त्स्व?)रूपं-उसके स्वरूप को, देवलोके-देवलोक में, ज्ञातव्यं-जानना चाहिये, शास्त्रलक्षणैः -जिसमें संगीत शास्त्र, शास्त्रों के लक्षणों से युक्त होता है।

भावार्थ-महर्षि नारद मुनि नें जब संगीत के स्वरूप को पृथ्वी लोक में अविख्यात रूप में देखा, जिसको लोग न जानते हों, तब महर्षि नारद नें देवलोक में जिसमें संगीत शास्त्र, शास्त्रों के लक्षणों से

युक्त था, को स्वयं के ज्ञान के द्वारा जाननें व उत्कृष्ट स्वरूप में जाननें का प्रयास किया, ताकि पृथ्वी लोक में संगीत के शुद्धस्वरूप को बतलाया जा सके।

यदाधस्त्रिश्रुतिः षड्जे मध्यमे तु चतुःश्रुतिः।

रिमयोः श्रुतिरेकैका गान्धारस्य समाश्रया ॥54॥

पदच्छेदः-यदा, धस्त्रि, श्रुतिः, षड्जे, मध्यमे, तु, चतुःश्रुतिः, रिमयोः, श्रुति रेकैका, गान्धारस्य, समाश्रया

अनव्य-यदा-जब, धस्त्रि-धस् =आधा+त्रि=तीन=अर्थात साढ़े तीन, श्रुतिः -सुननें की अवस्थायें, षड्जे-संगीत का प्रथम स्वर सा, मध्यमे-मध्य की, तु-में अथवा तु, चतुःश्रुतिः -चौथे प्रकार की श्रुतियों, रि-संगीत का द्वितीय स्वर रे, म-संगीत का चतुर्थ स्वर मा, योः -में, श्रुतिरेकैका-एक-एक श्रुति का प्रयोग, गान्धारस्य-संगीत का तृतीय स्वर गा में स्थित करना अथवा समिश्रित करना।

भावार्थ-जब संगीत का प्रथम स्वर सा को साढ़े तीन प्रकार से सुननें की अवस्थाओं को प्रयोग में लाकर तथा संगीत का द्वितीय स्वर रे और संगीत का चतुर्थ स्वर मा की एक-एक श्रुति का प्रयोग करते हुये संगीत का तृतीय स्वर गा में स्थित करना अथवा समाहित करना होता है।ऐसा महर्षि नारद मुनि का संदेश है।

पञ्चमश्रुतिरेका च निषादश्रुतिसंश्रया।

गान्धारग्राममाचष्टे तदा तं नारदोऽब्रवीत् ॥55॥

पदच्छेदः-पञ्चम श्रुतिर् एका च निषाद श्रुति संश्रया, गान्धारग्राम मा च अ्ष्टे तदा तं नारदो अ्ब्रवीत्

अनव्य-पञ्चम-संगीत का पाँचवाँ स्वर अर्थात पा को श्रंगार रस से परिपूर्ण होता है, श्रुतिर्-सुनना, एका-एक, च-और, निषाद-संगीत का सातवाँ स्वर अर्थात नी, श्रुति-सुना हुआ, संश्रया-संयोग होना अथवा आश्रय लेना, गान्धारग्राम-संगीत का तृतीय स्वर गा इस तीसरे ग्राम का व्यवहार स्वर्गलोक में नारद जी करते है, मा-दीप्ति, च-और, अ्ष्टे-आठ अथवा अणिमा, तदा-तब, तं-पवित्रता अथवा पुण्य, नारदो-महर्षि नारद, अ्ब्रवीत्-बात कही गई है।

भावार्थ-महर्षि नारद जी कहते है, संगीत का पाँचवाँ स्वर अर्थात पा को जो श्रंगार रस से परिपूर्ण होता है, में एक (भारतीय संगीत में किसी एक स्वर की ऊँचाई से पूर्ण रूप से दो गुनी ऊँचाई के स्वरों के बीच २२ श्रुतियों का संगीत में उपयोग ही श्रुति है। इन्हीं दोनो ऊँचाईयों के बीच निश्चित श्रुतियों पर सात शुद्ध स्वर विद्यमान है जिन्हें सा, रे, गा, मा, पा, धा और नी, के रूप से जाना जाता है और जिनके नाम क्रम स्वरूप षडज, ऋषभ, गंधार, मध्यम, पंचम, धैवत और निषाद है। इसको सप्तक के नाम से भी जाना जाता है।) का सुनना तथा संगीत का सातवाँ स्वर अर्थात नी इस तीसरे

ग्राम का व्यवहार स्वर्गलोक में नारद जी करते है, का संयोग होना अथवा आश्रय लेना जिसकी दीप्ति अथवा प्रकाश पुन्ज की आठो अणिमायें पवित्राता अथवा पुण्य प्रदान करती है।

इदं लक्षणं ब्रह्मणोक्तम् ।

अनव्य-इदं-यह, लक्षणं-पहचान का चिह्न, ब्रह्मणोक्तम्-ब्रह्म अर्थात ईश्वर के द्वारा कहा हुआ है।

प्रवर्तकः स्वर्गलोके ग्रामोऽसौ न महीतले ।

गान्धारः श्रूयते नित्यं जरामरणवर्जितः ॥56॥

पदच्छेदः-प्रवर्तकः स्वर्गलोके ग्रामोऽसौ न महीतले, गान्धारः श्रूयते नित्यं जरामरणवर्जितः

अनव्य-प्रवर्तकः-अनुष्ठान या प्रचार करनेवाला, स्वर्गलोके-स्वर्ग लोक में, ग्रामोऽसौ-ऐसा कोई गाँव, न महीतले-पृथ्वी पर नहीं है, गान्धारः-संगीत तृतिय स्वर गा, श्रूयते-सुना जाता है, नित्यं-दिन प्रतिदिन, जरामरण-वृद्धावस्था और मृत्यु, वर्जितः -त्यागा हुआ है, के अयोग्य ठहराया गया हो ।

भावार्थ-ब्रह्म अर्थात ईश्वर के द्वारा स्वर्ग लोक कहा हुआ कि यह अर्थात स्वर्ग लोक जो जीवन और मृत्यु से परे है, जहाँ दिन प्रतिदिन संगीत के तृतिय स्वर गा अथार्त गान्धार का अनुष्ठान प्रचार प्रसार गन्धर्वों के द्वारा गन्धर्वगान के रूप में किया जाता है।ऐसा कोई गाँव या स्थान पृथ्वी पर नहीं है।

अथ षड्जग्रामस्वराः।

स रि ग म प ध नि।

अथ-पूर्व काल में किसी ग्रंथ या लेख का आरंभ करते समय प्रयोग किया जाता था, परन्तु बाद में यह ग्रंथ के आरंभ का नाम को संदर्भ देनें के लिये लिखा जाने लगा, षड्जग्रामस्वराः -प्रत्येक ग्राम में सात-सात मूर्च्छनाएँ होती है । सा (षड़ज) से आरंभ करके सा रे ग म प ध नि जो सात स्वर हों, उस स्वर समूह अर्थात स रि ग म प ध नि को षड़ज ग्राम कहा जाता है।

षड्जे तूत्तरमन्द्रादौ रञ्जनी चोत्तरायता।

शुद्धषड्जा मत्सरीकृदश्वक्रान्ताभिरुगता ॥57॥

पदच्छेदः-षड्जे तू उत्तर मन्द्रा अदौ रञ्जनीचोत्तरायता शुद्ध षड्डा मत्सरी कृद श्व क्रान्ता भिरुगता षड्ज, ग्रामे, तु करमम्, मन्दोअपि रटनीयता (षड्जे तूत्तरमन्द्रादौ रजनी चौत्तरायता) तु करमम् मन्दोपि रटनीयता (?) शुद्धषड्जा मत्सरीकृदश्वक्रान्ताभिरुग्ता

अनव्य-षड्जे-संगीत के सात स्वरों में से प्रथम स्वर सा, तू-उसके लिये आता है, जिसे समक्ष संबोधन करते हुये कुछ कहा जाता है, उत्तर-आदि में, मन्द्रा-मन्द, अदौ-लगाना, रञ्जनी-रमणीय, चोत्तरायता-चौपहल के उतार के समय में रहनें वाला अर्थात निशा के नि का प्रयोग किया गया है, जो संगीत का सातवाँ स्वर अर्थात नी इस तीसरे ग्राम का व्यवहार स्वर्गलोक में नारद जी करते है, शुद्धषड्जा-एक

प्रकार का डिंगल छंद जिसमें पहले तेरह मात्राएं होती है, का प्रयोग वर्तमान के राजस्थान के "डिंगल छंद" का प्रयोग किया जाता है, संगीत के सात स्वरों में से प्रथम स्वर सा में किया जाय, मत्सरीकृद-संगीत में एक मूर्छनावस्था का नाम इसका स्वरग्राम इस प्रकार है- म, प, ध, नि, स, रे, ग, ग, म, प, ध, नि, स, रे, ग, म, प, घ, नि, श्वक्रान्ता-अश्व का ऊँचे स्वर में, भिरुगता-भयावस्था में रुदन गान का होना दर्शाता है।

भावार्थ-महर्षि नारद जी स्वरों के प्रयोग की विधियों का विस्तार विवरण प्रस्तुत करनें का प्रयास कर रहे है। संगीत के सात स्वरों में से प्रथम स्वर सा को, जिसके समक्ष संबोधन करते हुये तथा आदि में मन्द स्वर की महात्तता को अति आत्मरमणीयता के साथ होनें का अनुभव है। इसमें चौपहल के उतार के समय को अर्थात निशा के नि का प्रयोग किया गया है, जो संगीत का सातवाँ स्वर अर्थात नी इस तीसरे ग्राम का व्यवहार स्वर्गलोक में नारद जी करते है, डिंगल छंद जिसमें पहले तेरह मात्राएं होती है,अर्थात दिव्य संगीत जो महिमा मण्डन का द्धोयोतक है इस पद्धति का प्रयोग एक वीर रस प्रधान काव्य है (एक प्रकार का अहाल्लाद अर्थात उच्च स्वर की गायन पद्धति जिसमें खुशी और दुख को गायन का माध्यम बनाया जाता है , कुछ स्थानों में एकल नाट्य पांडववाणी संगीत के रूप में भी प्रयोग किया जाता है जिसका अर्थ है पांडववाणी।इसमें संगीत एक प्रकार से मूर्छनावस्था में रहती है, का नाम इसका स्वरग्राम इस प्रकार है- म, प, ध, नि, स, रे, ग । ग, म, प, ध, नि, स, रे, ग, म, प, घ, नि यह अश्व घोडे के भयावस्था के रुदन गान का होना दर्शाता है।

ताः शुद्धमध्यमार्गेण सप्त पारं च हृष्यकाः (?) ।
मध्यस्थानस्थषड्जेनं मूर्च्छनारभ्यते क्रमात् ॥58॥

पदच्छेदः-ताः शुद्धमध्यमा र्गेण सप्त पारं च हृष्यकाः (?)मध्य स्थान स्थ षड्जेनं मूर्च्छ नार भ्यते क्रमात्

अनव्य-ताः -ये ही, शुद्धमध्यमा-मध्यम स्वर दो प्रकार के होते है। शुद्ध मध्यम जिसको श्यामपूरबी भी कहा जा सकता है और इसमें शुद्ध स्वर लगते है, और तीव्र मध्यम-विशेष रूप से संगीत में 5 स्वरों गांधार निषाद तीव्र मध्यम को स्वर (षड़ज) बनानें से सप्तक इस प्रकार होता है तीव्र मध्यम स्वर, कोमल धैवत ऋषभ, कोमल निषाद गांधार, निषाद मध्यम, कोमल, ऋषभ पंचम, मार्गेण-स्वरोचितन्याय के मार्ग को, सप्त= एक स्थान- विशेष जहाँ सात स्वर धाराओं में बहते है, पारं-जो अंत तक पूरा किया गया हो, च-और, हृष्यकाः(?)- संगीत में एक प्रकार की मूर्छना जिसका स्वरग्राम इस प्रकार है-प ध नि स रे ग म । ध नि स रे ग म प ध नि स रे ग । मध्य-बीच का अनुवाद, स्थान-कार्यान्वित करने की स्थल, स्थ-जो स्थिर रहनेवाला स्थित हो, षड्जेनं-संगीत के सात स्वरों में से प्रथम स्वर सा के साथ, मूर्च्छ-वह अवस्था जिसमें उसे किसी बात का ज्ञात नहीं रहता, नार-संकोच सूचक

जैसे मान सम्मान आदि न मिलने के कारण झुकना, भ्यते-पूरी तरह से अपरिहार्य भावना, क्रमात्-क्रमानुसार।

भावार्थ-इस श्लोक में मध्यम स्वर के गुण धर्म की व्याख्या लघु रूप में व्यख्यित की जा रही है। मध्यम स्वर दो प्रकार के होते है।शुद्ध मध्यम और तीव्र मध्यम, इसमें शुद्ध स्वर लगते है, बारह स्वरों में से सात मुख्य स्वरों को शुद्ध स्वर कहते है अर्थात इन स्वरों को एक निश्चित स्थान विशेष जहाँ सात स्वर धाराओं में बहते है, दिया गया है, जब सा, रे, ग, म, प, ध, नि स्वरों में श्रुतियों का क्रम 4, 3, 4, 4, 3, 2, रहता है तो उन स्वरों को शुद्ध स्वर कहते है। और साथ ही जो अंत तक पूरा किया गया हो, संगीत में एक प्रकार की मूर्छना जिसका स्वरग्राम इस प्रकार है-प ध नि स रे ग म । ध नि स रे ग म प ध नि स रे ग । स्वरों को कार्यान्वित करने के स्थल जो स्थिर रहनेवाला तथा स्थित हो संगीत के सात स्वरों में से प्रथम स्वर सा के साथ, स्वरों के प्रयोग क्रमानुसार स्थान मिलनें की वह अवस्था जिसमें स्वर के प्रयोग का ज्ञात नहीं रहता अर्थात स्वर संकोच सूचक होकर जैसे मान सम्मान आदि न मिलने के कारण शर्म से अर्थात पूरी तरह से अपरिहार्य भावना से ग्रसित झुकता है।

अधःस्थानैर्निषादाद्यैः षड्जः स्यान्मूर्च्छना भवेत् ।
षड्गग्रामस्वराः सप्त कथ्यन्ते मूर्च्छनादिभिः ॥ 59॥

पदच्छेदः-अधःस्थानै र्निषाद अद्यैः षड्जः स्यान्मूर्च्छना भवेत् षड्गग्राम स्वराः सप्स कथ्यन्ते मूर्च्छनादिभिः

अनव्य-अधःस्थानैर्-नीचे के स्वरास्थान अर्थात नीचे का स्वर के अतिनिकट, निषाद-जो संगीत का सातवाँ स्वर अर्थात नी इस तीसरे ग्राम का व्यवहार स्वर्गलोक में नारद जी करते है, अद्यै-आदि या आरंभ में रहने या होनेवाला, षड्जः -संगीत के सात स्वरों में से पहला स्वर जो साधारणतः 'सा' कहलाता है। संगीत शास्त्र के अनुसार इस स्वर का उच्चारण नासा, कण्ठ, उर, तालु, जीभ और दाँतों के सम्मिलित प्रयत्न से होता है, स्यान्मूर्च्छना-बुद्धिमान् होते हुये भी मूर्च्छित अवस्था, भवेत्-कृतकृत्य होता है, प्रत्येक ग्राम में सात-सात मूर्च्छनाएँ होती है । षड्गग्रामस्वराः -सा (षड़ज) से आरंभ करके सा रे ग म प ध नि जो सात स्वर हों, उस स्वर समूह अर्थात स रि ग म प ध नि को षड़ज ग्राम कहा जाता है, सप्त-षड्ज से निषाद तक सातों स्वरों के समूह को सप्तक कहते है। कथ्यन्ते-अन्त में कहने योग्य, मूर्च्छना+आदिभिः-एक ग्राम से दूसरे ग्राम तक जाने में सातो स्वरों का आरोह व अवरोह । विशेष-ग्राम के सातवें भाग का नाम मूर्च्छना है, साथ ही यह भी कह सकते है आरम्भ से अन्तिम स्वर तक मूर्च्छना का क्रमण दिखलाई पडता है।

भावार्थ- भावार्थ-सा (षड़ज) से आरंभ करके सा रे ग म प ध नि जो सात स्वर हों, उस स्वर समूह अर्थात स रि ग म प ध नि को षड़ज ग्राम कहा जाता है,नीचे के स्वरस्थान अर्थात नीचे का स्वर के अतिनिकट है तथा जो संगीत का सातवाँ स्वर अर्थात नी इस तीसरे ग्राम का व्यवहार स्वर्गलोक में नारद जी करते है बुद्धिमान् होते हुये भी मूर्च्छित अवस्था में रहता है। प्रत्येक ग्राम में सात-सात मूर्च्छनाएँ होती है, संगीत के सात स्वरों में से पहला स्वर जो साधारणतः 'सा' कहलाता है, यहाँ पर यह भी कह सकते है आरम्भ से अन्तिम स्वर तक मूर्च्छना का क्रमण दिखलाई पडता है।सा (षड़ज) से आरंभ करके सा रे ग म प ध नि जो सात स्वर हों, उस स्वर समूह अर्थात स रि ग म प ध नि को षड़ज ग्राम कहा जाता है, एक ग्राम से दूसरे ग्राम तक जाने में सातो स्वरों का आरोह व अवरोह में भी मूर्च्छित अवस्था का प्रदर्शन दिखलाई पडता है।

मध्यमग्रामस्वराः ।

म (मध्यम) से आरभ करके (म प ध नि सा रे ग) जो सात स्वरों के समूह को मध्यम ग्राम के स्वर कहते है। इसका यह प्रकार है -म ग रि स नि ध प।

संवीरी हरिणाश्वा च स्यात्कल्लोपनता यता (?) ।

शुद्धमध्या तथा चैव मादली पौरकी तथा ॥60॥

पदच्छेदः संवीरी हरिणाश्वा च स्यात् कल्लोपनता यता (?) । शुद्धमध्या तथा चैव मार्दली पौरकी तथा

अनव्य-संवीरी- संगीत में एक प्रकार की मूर्छना जिसका स्वरग्राम इस प्रकार है। म, प, ध, नि, स, रे, ग, नि, स, रे, ग, म, प, ध, नि, स, रे, ग, म , हरिणाश्वा-संगीत के मध्यमग्राम में मूर्च्छना जिसके स्वरग्राम इस प्रकार है-ग, म, प, ध, नि, स, रे। स, रे, ग, म, प, ध, नि, स, रे, ग, म, प, च-और, स्यात्-कदाचित्, कल्लोपनता-आमोंद प्रमोद अथवा केवल मन बहलाने के लिए किया जाने वाला काम जो नमत करता हुआ घनिष्ठता से पूर्ण हो, यता-छदों में विराम का स्थान ,शुद्धमध्या*-इसको सुरों की मूर्च्छना, सूक्ष्म विराम को मूर्च्छना कहते है, तीन ग्राम होने के कारण 21 मूर्च्छनाएँ होती है जिनका व्योरा इस प्रकार है -षडज ग्राम की मध्मम ग्राम की गांधार ग्राम की ललिता पंचमा रौद्री मध्ममा मत्सरी ब्राह्मी चित्रा मृदुमध्या वैष्णवी रोहिणी शुद्धा खेदरी मतंगजा अंता सुरा सौवीरी कलावती नादावती षड़मध्या तीब्रा विशाल अन्य मत से मूर्च्छनाओं के नाम इस प्रकार है - उत्तरमुद्रा, सौवीरी, नंदा, रञ्जनी, हरिणाश्वा, विशाला, उत्तरायणी, कपोलनता, सोमपी, शुद्धषडजा, शुद्धमध्या, विचित्रा, मत्सरीक्रांता, मार्गो, रोहिणी, अश्वक्रांता, पौरवी, सुखा, अभिरुता, मंदाकिनी और अलापी, तथा-इसी तरह, मादली-पखावज के ढंग का एक प्रकार का प्राचीन वाध्ययन्त्र जो वर्तमान में प्रायः कीर्तन, आदि के समय बंगाल में बजाया जाता है।

भावार्थ-संगीत के मध्यमग्राम में मूर्च्छना जिसके स्वरग्राम इस प्रकार है-ग, म, प, ध, नि, स, रे । स, रे, ग, म, प, ध, नि, स, रे, ग, म, प, च और कदाचित् आमोंद प्रमोद अथवा केवल मन बहलाने के लिए किया जाने वाला काम जो नमत करता हुआ, घनिष्ठता से पूर्ण पखावज के ढंग का ढोल जैसा एक प्रकार का प्राचीन वाध्ययन्त्र जो वर्तमान में प्रायः कीर्तन, दुर्गा पूजा आदि के समय में होता है, तथा बंगाल में बजाया जाता है, इसको सुरों की मूर्च्छना, सूक्ष्म विराम को मूर्च्छना कहते है, तीन ग्राम होने के कारण 21 मूर्च्छनाएँ होती है जिनका व्योरा इस प्रकार है-षडज ग्राम की मध्मम ग्राम की गांधार ग्राम की ललिता पंचमा रौद्री मध्ममा मत्सरी ब्राह्मी चित्रा मृदुमध्या वैष्णवी रोहिणी शुद्धा खेदरी मतंगजा अंता सुरा सौवीरी कलावती नादावती षड़मध्या तीब्रा विशाल अन्य मत से मूर्च्छनाओं के नाम इस प्रकार है - उत्तरमुद्रा, सौवीरी, नंदा, रञ्जनी, हरिणाश्वा, विशाला, उत्तरायणी, कपोलनता, सोमपी, शुद्धषडजा, शुद्धमध्या, विचित्रा, मत्सरीक्रांता, मार्गो, रोहिणी, अश्वक्रांता, पौरवी, सुखा, अभिरुता, मंदाकिनी और अलापी, इसी तरह बंगाल में बजाया जाता है।

क्रमात्सप्तस्वरा ह्येते मध्यमग्रामसंश्रिताः।
हष्यकान्तेति विज्ञेया मध्यमग्रामसुस्वराः ॥61॥

पदच्छेदः-क्रमात् सप्त स्वरा ह्येते मध्यमग्राम संश्रिताः हष्यकान्तेति विज्ञेया मध्यमग्रामसुस्वराः

अनव्य-क्रमात्सप्तस्वरा-क्रमानुसार संगीत के सात स्वरो-स, रे, ग, म, प, ध, नि, ह्येते- के साथ संबंध रखने वाले होते है, मध्यमग्रामसंश्रिताः-म (मध्यम) से आरभ करके (म प ध नि सा रे ग) जो सात स्वर हों, उनके समूह को मध्यम ग्राम मानते है, संश्रिताः -का आश्रय में रहनें वाली, हष्यकान्तेति-ध्वनि करने के लिए संदेश न पहुँचानें वाली स्त्री के समान, विज्ञेया-जो जानने, सीखने, या समझने के योग्य हो, मध्यमग्रामसुस्वराः-म (मध्यम) से आरभ करके (म प ध नि सा रे ग) जो सात स्वर हों, उनके समूह को मध्यम ग्राम मानते है, सुंदर या उत्तम स्वरयुक्त, जिसका सुर या कंठध्वनि मधुर हो।

भावार्थ-क्रमानुसार संगीत के सात स्वर-स, रे, ग, म, प, ध, नि के साथ आपस में संबंध रखने वाले होते है, म (मध्यम) से आरभ करके (म प ध नि सा रे ग) जब सात स्वर हों, तो उनके समूह को मध्यम ग्राम मानते है, प्रत्येक ग्राम के सातवें भाग का नाम मूर्च्छना होता है मध्मम ग्राम की मूर्च्छना में भी 21 मूर्च्छनाएँ होती है जिनका व्योरा इस प्रकार है-षड़ज ग्राम की मूर्च्छना, मध्मम ग्राम की मूर्च्छना, तथा गांधार ग्राम की मूर्च्छना क्रमाशः -ललिता, पंचमा, रौद्री, मध्ममा, मत्सरी, ब्राह्मी, चित्रा, मृदुमध्या, वैष्णवी, रोहिणी, शुद्धा, खेदरी, मतंगजा, अंता, सुरा, सौवीरी, कलावती, नादावती, षड़मध्या, तीब्रा, और विशाल अन्य मत के अनुसार मूर्च्छनाओं के नाम इस प्रकार है-उत्तरमुद्रा, सौवीरी, नंदा, रजनी, हरिणाश्वा, विशाला, उत्तरायणी, कपोलनता, सोमपी, शुद्धषड़जा, शुद्धमध्या, विचित्रा,

मत्सरीक्रांता, मार्गो, रोहिणी, अश्वक्रांता, पौरवी, सुखा, अभिरुता, मंदाकिनी, अलापी आदि। मूर्च्छना की शरण ध्वनि करने के लिए संदेश न पहुँचानें वाली स्त्री के समान अर्थात गमनागमन के साधन के रूप में म (मध्यम) से आरभ करके (म प ध नि सा रे ग) जो सात स्वर उनके समूह को मध्यम ग्राम मानते है, सुंदर या उत्तम स्वरयुक्त, जिसका सुर या कंठध्वनि मधुर हो।

अथ गान्धारग्रामसुस्वराः

संरा (नन्दा) विशाला सुमुखी चिता चित्रावती शुभा।

आलापा चेति गान्धारग्रामे स्युः सप्त मूर्च्छनाः ॥62॥

पदच्छेदः-संरा (नन्दा) विशाला सुमुखी चिता चित्रावती शुभा आलापा चेति गान्धारग्रामे स्युः सप्त मूर्च्छनाः

अनव्य-संरा-उदारतापूर्वक देने के लिए आनंद की अधिष्ठात्री देवी, विशाला-राजा दक्ष की एक कन्या का नाम, सुमुखी-सुंदर मुखवाली स्त्री, चिता-शवदाह के लिये लकड़ियों को नीचे ऊपर क्रम से रखना, चित्रावती-चित्रसेन की पुत्री, शुभा-शोभायमान कांति वाली, आलापा-सुर खींचना या तान लगाना, चेति-ध्यान के प्रति सजग रहना, गान्धारग्रामे- गान्धारग्राम की, स्युः -स्थित रहते है, सप्त मूर्च्छनाः -सात स्वरो की मूर्च्छना

भावार्थ-प्रजापति राजा दक्ष की कन्यायें जो क्रम स्वरूप संरा (नन्दा), विशाला, सुमुखी, चिता, चित्रावती, शुभा और आलापा है। उदारतापूर्वक देने में दक्ष आनंद की अधिष्ठात्री देवी, सुंदर मुखवाली स्वरो को नीचे ऊपर क्रम से रखना वाली कला मे निपुर्ण तथा शोभायमान कांति वाली, सुर खींचना या तान लगाना की कला से परिपूरण थीं यह सभी संगीत के सात स्वरो मे विशेषतः गांधार ग्राम की मूर्च्छना मे स्थित रहती है, इसको ध्यान सजगता पूर्वक सदैव रखना चाहिये। गांधार ग्राम की मूर्च्छना क्रमशः ललिता, पंचमा, रौद्री, मध्यमा, मत्सरी, ब्राह्मी, चित्रा, मृदुमध्या, वैष्णवी, रोहिणी, शुद्धा, खेदरी, मतंगजा, अंता, सुरा, सौवीरी, कलावती, नादावती, षड़मध्या, तीब्रा, और विशाला है।

श्रुति-भारतीय शास्त्रीय संगीत श्रुतिव्यवस्था पर प्रतिष्ठित है और अनेक राग, जैसे राग बहार आदि, हमें आज के १२ स्वरों के प्रचलित वातावरण से श्रुतियों की ओर खींचते है। श्रुति का अर्थ है वह सूक्ष्म नाद लहरी जो कि श्रवणेन्द्रिय (कान) के द्वारा सुनी जा सके। और ऐसी 22 श्रुतियां, सा से सां (मध्य सप्तक के सा से तार सप्तक के सा तक) तक अवस्थित है।

शुद्ध षड़जा-शुद्धमध्या-मूर्च्छना एक ग्राम से दूसरे ग्राम तक जाने में सातो स्वरों का आरोह व अवरोह । विशेष- ग्राम के सातवें भाग का नाम मूर्च्छना है। भरत मुनि के मतानुसार से गाते समय गले को कँपाने से ही मूर्च्छना होती है, और अन्य मतानुसार यह मत है, कि स्वर के सूक्ष्म विराम को ही

मूर्च्छना कहते है। तीन ग्राम होने के कारण 21 मूर्च्छनाएँ होती है, जिनका व्योरा इस प्रकार है-षड़ज ग्राम की मूर्च्छना, मध्मम ग्राम की मूर्च्छना, तथा गांधार ग्राम की मूर्च्छना क्रमाशः-ललिता, पंचमा, रौद्री, मध्ममा, मत्सरी, ब्राह्मी, चित्रा, मृदुमध्या, वैष्णवी, रोहिणी, शुद्धा, खेदरी, मतंगजा, अंता, सुरा, सौवीरी, कलावती, नादावती, षड़मध्या, तीब्रा, और विशाल अन्य मत के अनुसार मूर्च्छनाओं के नाम इस प्रकार है-उत्तरमुद्रा, सौवीरी, नंदा, रजनी, हरिणाश्वा, विशाला, उत्तरायणी, कपोलनता, सोमपी, शुद्धपडजा, शुद्धमध्या, विचित्रा, मत्सरीक्रांता, मार्गो, रोहिणी, अश्वक्रांता, पौरवी, सुखा, अभिरुता, मंदाकिनी, अलापी आदि।

ग म प ध नि स रि

षड्जः प्राधान्यमाद्यत्वादमात्यादि गतस्तथा (?)।

ग्रामः स्यादथ लोपत्वान्मध्यमस्तु पुरःसरः ॥63॥

पदच्छेदः-षड्जः प्राधान्य माद्य त्वाद मात्यादि गतस्तथा (?)ग्रामः स्यादथ लोपत्वान् मध्यमस्तु पुरःसरः

अनव्य-षड्जः -संगीत का छटवाँ स्वर अर्थात ध, प्राधान्य-श्रेष्ठता पूर्वक अथवा मुख्य रूप से, माद्य-मध्य में अथवा माध्यम, त्वाद-तुमसे कहता , मात्यादि-जिसमें स्वास बहुत कष्टपूर्वक और कुछ जोर से चलती है, गतस्तथा- बीते हुये में था, ग्रामः -स्वरों के समूह, स्यादथ-किसी वस्तु के गुण को समझनें, समझानें और अभिव्यक्त, लोपत्वान्-नाश अथवा क्षय होनें की अवस्था, मध्यमस्तु-मध्य में स्थित रहनें वाला, पुरःसरः -समक्ष गति

भावार्थ-स्वरों के समूह के प्रसार प्रयोग में जिसमें स्वास बहुत कष्टपूर्वक और कुछ जोर से चलती है, के गुण को समझनें, समझानें और अभिव्यक्त करते हुये संगीत का छटवाँ स्वर अर्थात ध श्रेष्ठता पूर्वक और मुख्य रूप से मध्य में अथवा माध्यम के स्वरूप में प्रयोग होता है और साथ ही कहा जा सकता है कि क्षय होनें की अवस्था में होता है, के समक्ष गति में रहते हुये मध्यम मुख्यतः प्रधानता पूर्वक स्थित रहनें वाला होता है।

क्रमा.द्रामत्रये देवा ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः।

हेमन्तग्रीष्मवर्षासु ज्ञातव्यास्तु यथाक्रमम् ॥64॥

पदच्छेदः-क्रमाद् ग्राम त्रये देवा ब्रह्म विष्णु महेश्वराः हेमन्त ग्रीष्म वर्षासु ज्ञात व्यास्तु यथा क्रमम्

अनव्य-क्रमानुसार कमल से उत्तपन्न हिंदू धर्म के तीन देवताओं में एक और प्रथम, पहले देवता ब्रह्मा जो सृष्टि के रचयिता है, विष्णु सृष्टि के पालनकर्ता तथा महेश्वराः देवाधिदेव महादेव जिनको सृष्टि के संहारकर्ता और साथ ही औघड़महादानी जीव के प्रति समर्पित। हेमन्त छह ऋतुओं में से पाँचवीं ऋतु, ग्रीष्म मुख्यतः गर्मी के ऋतु को कहते है, वर्षासु-छह ऋतुओं के हिसाब से सावन और भादों के

दो महीने वर्षा ऋतु के माने जाते है, सु-श्रेष्ठ, ज्ञात-विदित, व्यास्तु-व्याप्त होना अथवा निहित होना, यथा-जिस प्रकार, क्रमम्-क्रमानुसार

भावार्थ-जिस प्रकार स्वर ग्राम क्रमानुसार षड्जग्राम, मध्यमग्राम और गान्धारग्राम, कमल से उत्तपन्न हिंदू धर्म के तीन देवताओं में एक और प्रथम, देवता ब्रह्मा जो सृष्टि के रचयिता है, विष्णु सृष्टि के पालनकर्ता तथा देवाधिदेव महादेव जिनको सृष्टि के संहारकर्ता और साथ ही महाऔघड़दानी जीव के प्रति समर्पित है, जिस प्रकार छह ऋतुओं (प्राचीन काल में यहां छह ऋतुएं मानी जाती थी । वसंत , ग्रीष्म , वर्षा , शरद , हेमंत और शिशिर। छः ऋतुओं में प्रत्येक ऋतु का चक्र दो-दो महीने का बन जाता है।) में ऋतुओं में से पाँचवीं ऋतु हेमन्त,मुख्यतः गर्मी की ऋतु माने जाते है व्याप्त होना या निहित होना होता है।

पूर्वाह्नकाले मध्याह्ने अपराह्ने नयादिभिः।

षड्जादिमध्यगान्धाराः श्रूयेतैश्वर्यसन्ततिः? ॥65॥

पदच्छेदः-पूर्वाह्नकाले मध्याह्ने अपराह्ने नया दिभिः षड्जादि मध्य गान्धाराः श्रूयेतै श्वर्य सन्ततिः?

अनव्य-पूर्वाह्नकाले-दिन का पहला आधा भाग,मध्याह्ने-दिन के ठीक बीच का वह समय जब सूर्य सबसे ऊपर आ जाता है,अपराह्ने-दिन को अगर दो भागों में बांटा जाए तो आधी रात, दिभिः -इसी प्रकार, स्वर ग्राम के क्रमानुसार षड्जग्राम, मध्यमग्राम और गान्धारग्राम,श्रूयेतै-सुननें से, श्वर्य-वह संगीत जो सुना जा सके और सुनने के योग्य हो, सन्ततिः- फैलाव तथा विस्तार की प्राप्ति।

भावार्थ-जिस प्रकार दिन का पहला आधा भाग,दिन के ठीक बीच का वह समय जब सूर्य सबसे ऊपर आ जाता है और दिन को अगर दो भागों में बांटा जाए तो आधी रात का होना होता है, इसी प्रकार स्वर ग्राम के क्रमानुसार षड्जग्राम, मध्यमग्राम और गान्धारग्राम वह संगीत जो सुना जा सके और सुनने के योग्य हो को सुननें से फैलाव तथा विस्तार की प्राप्ति होती है।

क्रमात्स्वराणां सप्तानामारोहश्चावरोहणम् ।

मूर्छनेत्युच्यते ग्रामद्वये ताः सप्त सप्त च ॥66॥

पदच्छेदः-क्रमात् स्वराणाम् सप्तानाम आरोह च् श्रव अवरोहणम् मूर्छने त्युच्यते ग्राम द्वये ताः सप्त सप्त च

अनव्य-क्रमात्-क्रम से, स्वराणाम्-स्वरों में स्थित होना, सप्तानाम-सात स्वरों के नाम, आरोह-ऊपर की ओर गमन, च्-और, श्रव-सुनना, अवरोहणम्-नीचे की ओर जाना, मूर्छने-मूर्छित होना, त्य-के बाद, उच्यते-क्षणिक अनुराग को हरिद्रा राग कहा है, ग्राम-पहले दो ग्रामों का व्यवहार तो इसी लोक में

मनुष्यों द्वारा होता है, पर तीसरे ग्राम का व्यवहार स्वर्गलोक में नारद करते है।, द्वये-युगल, ताः - उत्तमता, सप्त- सात, सप्त-सात, च-घोष और अल्पप्राण का प्रयोग

भावार्थ-क्रमानुसार षड्जग्राम और मध्यमग्राम इन दो ग्रामों का व्यवहार तो इसी लोक में मनुष्यों द्वारा होता है, पर तीसरे ग्राम का व्यवहार स्वर्गलोक में नारद जी करते है, सात स्वरों में ऊपर की ओर गमन और नीचे की ओर जाना, के बीच में सुननें के क्रम में दो प्रकार की मूर्छना जो षड्जग्राम और मध्यमग्राम के मध्य है, इस क्षणिक अनुराग को हरिद्रा राग भी कहा गया है, इसमें अल्पप्राण का प्रयोग उत्तमता को दर्शाने के लिए युगल रूप से सात और सात अर्थात सप्तक का घोष है।

षड्जग्रामे तु करमम् मन्दोपिरटनीयता (?)।

शुद्धषड्जा मत्सरीकृदश्वक्रान्ताभिरुग्ता ॥67॥

पदच्छेदः-षड्जग्रामे, (षड्जे तू उत्तर मन्द्रा अदौ रञ्जनीचोत्तरायता) तु-दुःख को बुलानें जैसा, करमम्-वह दुःख जो अपने किए हुए कर्मों के कारण हो, मन्दोअपि-मंद बुद्धि भी बिना प्रयोजन के कोई काम नहीं करता। रटनीयता-जो रटने की क्रिया से उत्पन्न किया गया होता है।

अनव्य-षड्जे-संगीत के सात स्वरों में से प्रथम स्वर सा, तू-उसके लिये आता है, जिसे समक्ष संबोधन करते हुये कुछ कहा जाता है, उत्तर-आदि में, मन्द्रा-मन्द, अदौ-लगाना, रञ्जनी-रमणीय, चोत्तरायता-चौपहल के उतार के समय में रहनें वाला अर्थात निशा के नि का प्रयोग किया गया है, जो संगीत का सातवाँ स्वर अर्थात नी इस तीसरे ग्राम का व्यवहार स्वर्गलोक में नारद जी करते है, शुद्धषड्जा-एक प्रकार का डिंगल छंद जिसमें पहले तेरह मात्राएं होती है, का प्रयोग वर्तमान के राजस्थान के "डिंगल छंद" का प्रयोग किया जाता है, संगीत के सात स्वरों में से प्रथम स्वर सा में किया जाय, मत्सरीकृद-संगीत में एक मूर्छनावस्था का नाम इसका स्वरग्राम इस प्रकार है-म,प,ध,नि,स,रे,ग। ग,म,प,ध,नि,स,रे,ग,म,प,घ,नि, श्वक्रान्ता-अश्व का ऊँचे स्वर में, भिरुगता-भयावस्था में रुदन गान का होना दर्शाता है।

भावार्थ-महर्षि नारद जी स्वरों के प्रयोग की विधियों का विस्तार विवरण प्रस्तुत करनें का प्रयास कर रहे है। संगीत के सात स्वरों में से प्रथम स्वर सा को, जिसके समक्ष संबोधन करते हुये तथा आदि में मन्द स्वर की महात्तता को अति आत्मरमणीयता के साथ होनें का अनुभव है। इसमें चौपहल के उतार के समय को अर्थात निशा के नि का प्रयोग किया गया है, जो संगीत का सातवाँ स्वर अर्थात नी इस तीसरे ग्राम का व्यवहार स्वर्गलोक में नारद जी करते है, डिंगल छंद जिसमें पहले तेरह मात्राएं होती है,अर्थात दिव्य संगीत जो महिमा मण्डन का द्धोयोतक है इस पद्धति का प्रयोग एक वीर रस प्रधान काव्य है (एक प्रकार का अहाल्लाद अर्थात उच्च स्वर की गायन पद्धति जिसमें खुशी और दुख

को गायन का माध्यम बनाया जाता है , कुछ स्थानों में एकल नाट्य पांडववाणी संगीत के रूप में भी प्रयोग किया जाता है जिसका अर्थ है पांडववाणी। इसमें संगीत एक प्रकार से मूर्छनावस्था में रहती है, का नाम इसका स्वरग्राम इस प्रकार है- म, प, ध, नि, स, रे, ग । ग, म, प, ध, नि, स, रे, ग, म, प, घ, नि । यह अश्व घोडे के भयावस्था के रुदन गान का होना दर्शाता है।

ताः शुद्धमध्यमार्गेण सप्त पारं च हृष्यकाः (?) ।

मध्यस्थानस्थषड्जेनं मूर्च्छनारभ्यते क्रमात् ॥68॥

पदच्छेदः-ताः शुद्धमध्यमा र्गेण सप्त पारं च हृष्यकाः (?) मध्य स्थान स्थ षड्जेनं मूर्च्छ नार भ्यते क्रमात्

अनव्य-ताः -ये ही, शुद्धमध्यमा-मध्यम स्वर दो प्रकार के होते है। शुद्ध मध्यम जिसको श्यामपूरबी भी कहा जा सकता है और इसमें शुद्ध स्वर लगते है, और तीव्र मध्यम-विशेष रूप से संगीत में ५ स्वरों गांधार निषाद तीव्र मध्यम को स्वर (षड़ज) बनानें से सप्तक इस प्रकार होता है तीव्र मध्यम स्वर, कोमल धैवत ऋषभ, कोमल निषाद गांधार, निषाद मध्यम, कोमल, ऋषभ पंचम, मार्गेण-स्वरोचितन्याय के मार्ग को, सप्त- एक स्थान- विशेष जहाँ सात स्वर धाराओं में बहते है, पारं-जो अंत तक पूरा किया गया हो, च-और, हृष्यकाः(?)- संगीत में एक प्रकार की मूर्छना जिसका स्वरग्राम इस प्रकार है-प ध नि स रे ग म । ध नि स रे ग म प ध नि स रे ग । मध्य-बीच का अनुवाद, स्थान-कार्यान्वित करने की स्थल, स्थ-जो स्थिर रहनेवाला स्थित हो, षड्जेनं-संगीत के सात स्वरों में से प्रथम स्वर सा के साथ, मूर्च्छ-वह अवस्था जिसमें उसे किसी बात का ज्ञात नहीं रहता, नार-संकोच सूचक जैसे मान सम्मान आदि न मिलने के कारण झुकना, भ्यते-पूरी तरह से अपरिहार्य भावना, क्रमात्-क्रमानुसार।

भावार्थ-इस श्लोक में मध्यम स्वर के गुण धर्म की व्याख्या लघु रूप में व्यख्यित की जा रही है। मध्यम स्वर दो प्रकार के होते है। शुद्ध मध्यम और तीव्र मध्यम, इसमें शुद्ध स्वर लगते है, बारह स्वरों में से सात मुख्य स्वरों को शुद्ध स्वर कहते है,अर्थात इन स्वरों को एक निश्चित स्थान विशेष जहाँ सात स्वर धाराओं में बहते है, दिया गया है, जब सा, रे, ग, म, प, ध, नि स्वरों में श्रुतियों का क्रम 4, 3, 4, 4, 3, 2, रहता है तो उन स्वरों को शुद्ध स्वर कहते है। और साथ ही जो अंत तक पूरा किया गया हो, संगीत में एक प्रकार की मूर्छना जिसका स्वरग्राम इस प्रकार है-प ध नि स रे ग म । ध नि स रे ग म प ध नि स रे ग । स्वरों को कार्यान्वित करने के स्थल जो स्थिर रहनेवाला तथा स्थित हो संगीत के सात स्वरों में से प्रथम स्वर सा के साथ, स्वरों के प्रयोग क्रमानुसार स्थान मिलनें की वह अवस्था

जिसमें स्वर के प्रयोग का ज्ञात नहीं रहता अर्थात स्वर संकोच सूचक होकर जैसे मान सम्मान आदि न मिलने के कारण शर्म से अर्थात पूरी तरह से अपरिहार्य भावना से ग्रसित झुकता है।

अधःस्थानैर्निषादाद्यैः षड्ःज स्यान्मूर्च्छनाक्रमात् ।
मध्यमध्यममारभ्य संवीरी मूर्च्छना भवेत् ॥69॥

पदच्छेदः-अधःस्थानै र्निषाद अद्यैः षड्जः स्यान्मूर्च्छना क्रमात् । मध्य मध्यममा रभ्य संवीरी मूर्च्छना भवेत्

अनव्य-अधःस्थानैर्-नीचे के स्वरास्थान अर्थात नीचे का स्वर के अतिनिकट, निषाद-जो संगीत का सातवाँ स्वर अर्थात नी इस तीसरे ग्राम का व्यवहार स्वर्गलोक में नारद जी करते है, अद्यै-आदि या आरंभ में रहने या होनेवाला, षड्जः -संगीत के सात स्वरों में से पहला स्वर जो साधारणतः 'सा' कहलाता है। संगीत शास्त्र के अनुसार इस स्वर का उच्चारण नासा, कण्ठ, उर, तालु, जीभ और दाँतों के सम्मिलित प्रयत्न से होता है, स्यान्मूर्च्छना-बुद्धिमान् होते हुये भी मूर्च्छित अवस्था, क्रमात्-क्रम के अनुसार होता है, मध्य-बीच का स्वर, मध्यम-जो दो विपरीत सीमाओं के बीच में हो, जो गुण, विस्तार, मान आदि के विचार से न बहुत बड़ा हो, न बहुत छोटा, आरभ्य-आरम्भ के बाद से, संवीरी-संगीत में एक प्रकार की मूर्छना जिसका स्वरग्राम इस प्रकार है-म, प, ध, नि, स, रे, ग, नि, स, रे, ग, म, प, ध, नि, स, रे, ग, म , मूर्च्छना-मूर्च्छित अवस्था, भवेत्-कृतकृत्य होता है।

भावार्थ-भावार्थ-सा (षड़ज) से आरंभ करके सा रे ग म प ध नि जो सात स्वर हों, उस स्वर समूह अर्थात स रि ग म प ध नि को षड़ज ग्राम कहा जाता है,नीचे के स्वरस्थान अर्थात नीचे का स्वर के अतिनिकट है तथा जो संगीत का सातवाँ स्वर अर्थात नी इस तीसरे ग्राम का व्यवहार स्वर्गलोक में नारद जी करते है, जो बुद्धिमान् होते हुये भी मूर्च्छित अवस्था में रहता है। प्रत्येक ग्राम में सात-सात मूर्च्छनाएँ होती है, संगीत के सात स्वरों में से पहला स्वर जो साधारणतः 'स' कहलाता है, यहाँ पर यह भी कह सकते है आरम्भ से अन्तिम स्वर तक मूर्च्छना का क्रमण दिखलाई पडता है। बीच का स्वर जो दो विपरीत सीमाओं के बीच में हो, जो गुण, विस्तार, मान आदि के विचार से न बहुत बड़ा हो, न बहुत छोटा हो, आरम्भ करनें के बाद से संगीत में एक प्रकार की मूर्छना जिसका स्वरग्राम इस प्रकार है-म, प, ध, नि, स, रे, ग, नि, स, रे, ग, म, प, ध, नि, स, रे, ग, म , की अवस्था, मूर्च्छित अवस्था की सी होती है।

षड्जस्थानपदोधस्थस्वरादारभ्यते क्रमात् ।
षड्जस्थानस्थितैराद्यैरथान्याद्याः परे विदुः (१) ॥70॥

पदच्छेदः-षड्जस्थान पदोधस्थ स्वरादार भ्यते क्रमात् षड्डजस्थान स्थितै राद्यैर थान्यआद्याः परे विदुः

अनव्य-षड्जस्थान-नासा, कंठ, उर, तालु, जिह्वा और दंत, इसी से इसका नाम षड्ज पड़ा है, को कार्यान्वित करने की स्थल, पदोधस्थ-किसी पद को धारण करने का स्थान, स्वरादार-सुस्वर और सुरीला, भ्यते-होता है, क्रमात्-उत्तरोत्तर आनेवाली अवस्थाएँ अधिकार युक्त, षड्डजस्थान-नासा, कंठ, उर, तालु, जीभ और दाँत इन छह स्थानों में उत्पन्न होने के कारण पहला स्वर षड्ज कहलाता है, स्थितै-ठहराव का रहना, राद्यैर-राध्यै-आराधना करने के योग्य, थान्यआद्याः-शुरू से अंत तक, परे-उस ओर, विदुः -बीच के भाग को कहते है, जिसको पंडित अथवा विद्वान् समझ सके।

भावार्थ-नासा, कंठ, उर, तालु, जिह्वा और दंत, इसी से इसका नाम षड्ज पड़ा है, को कार्यान्वित करने की स्थल जो संगीत के स्वर स को धारण करने का स्थान है जो सुस्वर और सुरीला होता है तथा जो उत्तरोत्तर आनेवाली अवस्थाएँ अधिकार से युक्त नासा, कंठ, उर, तालु, जीभ और दाँत इन छह स्थानों में उत्पन्न होने के कारण पहला स्वर षड्ज कहलाता है जो आराधना करने के योग्य शुरू से अंत तक ठहराव में रहनें वाला उस ओर का अर्थात जिसको मस्तक के बीच का भाग कहते है, जिसको पंडित अथवा विद्वान् समझ सके।

हरिणाश्वादिरागाद्यैर्मध्यमस्थानसंज्ञितैः ।
षड्जादीन्मध्यमादींश्च ततोऽर्द्धः सः स्वरः क्रमात् ॥71॥

पदच्छेदः-हरिणाश्वादि रागाद्यैर् मध्यम स्थान संज्ञितैः षड्जआदिन् मध्यमा दींश्च ततोऽर्द्धः सः स्वरः क्रमात्

अनव्य-हरिणाश्वादि-संगीत के मध्यमग्राम में मूर्च्छना जिसके स्वरग्राम इस प्रकार है-ग, म, प, ध, नि, स, रे । स, रे, ग, म, प, ध, नि, स, रे, ग, म, प, रागा-रागों के, ध्यैर-धैर्य, मध्यम-मध्य में, स्थान-कार्यान्वित करने का स्थल, संज्ञितैः -संरक्षित ज्ञान में सुरक्षित, षड्जादीन्-संगीत के सात स्वरों में प्रथम स्वर स आदि, मध्यमादींश्च-संगीत के सात स्वरों में से चौथा स्वर जिसको 'म' कहते है। इसका मूलस्थान नासिका है, यह साधारण और तीव्र दो प्रकार का होता है, इसको साधारण षड़ज स्वर बनानें में सप्तक इस प्रकार से होता है-मध्यम पंचम ऋषभ, धैवत गांधार, कोमल निषाद तथा मध्यग, षड़ज स्वर पंचम ऋषभ, धैवत, गांधार तथा निषाद, तथा तीव्र मध्यम को षड़ज स्वर बनाने के लिए सप्तक इस प्रकार होता है-तीव्र मध्यम स्वर, कोमल धेवत ऋषभ, कोम ल निषाद गांधार, निषाद मध्यम, कोमल, ऋषभ पंचम, कोमल गांधार धैवत, मध्यम, निषाद, ततोऽर्द्धः -वहाँ से आधा, सः स्वरः क्रमात्-वह स्वर क्रम से

भावार्थ-संगीत के मध्यमग्राम में मूर्च्छना जिसके स्वरग्राम इस प्रकार है-ग, म, प, ध, नि, स, रे । स, रे, ग, म, प, ध, नि, स, रे, ग, म, प रागों के मध्य में जिसको कार्यान्वित करने का स्थल है, को धैर्यता पूर्वक संरक्षित ज्ञान में सुरक्षित कर लेना चाहिए। संगीत के सात स्वरों में प्रथम स्वर स आदि संगीत के सात स्वरों में से चौथा स्वर जिसको 'म' कहते है। इसका मूलस्थान नासिका है, यह साधारण और तीव्र दो प्रकार का होता है, इसको साधारण षड़ज स्वर बनानें में सप्तक इस प्रकार से होता है-मध्यम पंचम ऋषभ, धैवत गांधार, कोमल निषाद तथा मध्यग, षड़ज स्वर पंचम ऋषभ, धैवत, गांधार तथा निषाद, तथा तीव्र मध्यम को षड़ज स्वर बनाने के लिए सप्तक इस प्रकार होता है-तीव्र मध्यम स्वर, कोमल धेवत ऋषभ, कोम ल निषाद गांधार, निषाद मध्यम, कोमल, ऋषभ पंचम, कोमल गांधार धैवत, मध्यम, निषाद वह स्वर क्रम से आधा होता है।

चतुर्धा ताः पृथक् शुद्धाः काकलीकलितास्तथा।
सान्तराः सद्वयोपेताः षट्पञ्चाशदुदीरिताः ॥72॥

पदच्छेदः-चतुर्धा ताः पृथक् शुद्धाः काकली कलि ता स्तथा सान्तराः सद्वयोपेताः षट्पञ्चाशदुदीरिताः
अनव्य-चतुर्धा-चार तरह से अथवा चार प्रकार से, ताः- पृथक्-अलग, शुद्धाः -संगीत में राग के तीन भेदों में से एक भेद । वह राग जिसमें और किसी राग का मेल न हो जैसे-राग भैरव और राग मेघ, काकली-एक विकृत स्वर, कलि-विवाद, ता-शत्रुता, स्तथा-स्थित रहता हुआ, सान्तराः-अंतराल या अवकाशयुक्त है, सद्वयोपेताः-संगीत में षड़ज स्वर का सूचक अक्षर जो द्वैत संबंधी उपयोगिता को दर्शाना, षट्पञ्चाश-छप्पन की संख्या, दुदीरिताः-दुविधा युक्त सितार का एक बोल जैसे-दिर दा दिर दारा दारा दा दार दार दा दार उत्तमता रखनें वाला ।
भावार्थ-चार तरह से अथवा चार प्रकार से संगीत में राग के तीन भेदों में से एक भेद वह राग जिसमें और किसी राग का मेल न हो जैसे-राग भैरव और राग मेघ, एक विकृत तथा विवादित स्वर जो शत्रुता के रूप में स्थित रहता है। संगीत में षड़ज स्वर का सूचक अक्षर जो द्वैत संबंधी उपयोगिता को दर्शाता है, जो छप्पन की संख्या वाला दुविधा युक्त उत्तमता रखनें वाला सितार का एक बोल-जैसे-दिर दा दिर दारा दारा दा दार दार दा दार।

श्रुतिद्वयं चेत् षड्जस्य निषादः संश्रयेदसौ ।
सा काकली मध्यमस्य गान्धारस्त्वन्तरः स्वरः ॥73॥

पदच्छेदः-श्रुतिद्वयं चेत् षड्जस्य निषादः संश्रये दसौ सा काकली मध्यमस्य गान्धार स्त्वन्तरः स्वरः
अनव्य-श्रुतिद्वयं-श्रवण करने की क्रिया या भाव के दो भिन्न प्रकार की श्रुति, चेत्-कदाचित्, षड्जस्य-षड्ज का, निषादः-संगीत के सात स्वरों में से अंतिम स्वर जो सबसे ऊँचा भी है, संश्रये-किसी उद्देश्य

की सिद्धि के लिए, दसौ-दिखलाई पड़ना, सा-एक प्रकार का मानसूचक शब्द, काकली-एक विकृत स्वर, मध्यमस्य-मध्य में होने का भाव या अवस्था, गान्धार-संगीत के सात स्वरों में से तीसरा स्वर, स्त्वन्तरः -में स्वतंत्र रूप में, स्वरः -स्वर में है।

भावार्थ-किसी उद्देश्य की सिद्धि के लिए श्रवण करने की क्रिया या भाव को दो भिन्न-भिन्न प्रकार की श्रुतियों में, संगीत के सात स्वरों में से प्रथम स्वर षड्ज अर्थात स जो सबसे ऊँचा भी है और संगीत के सात स्वरों में से तीसरा स्वर गान्धार अर्थात ग एक प्रकार का मानसूचक स्वर-शब्द है।कदाचित् जो एक विकृत होता हुये भी स्वतंत्र रूप से स्वरों के मध्य में होने का भाव या अवस्था में हो।

यस्यां यावन्ति यौ मध्ये तस्येमौ ग्रामयोः क्रमात् ।
मूर्च्छनास्तावदित्येवं भरतेन च चर्चिताः ॥74॥

पदच्छेदः-यस्यां यावन्ति यौ मध्ये तस्येमौ ग्रामयोः क्रमात् । मूर्च्छना स्ता वदि त्येवं भरतेन च चर्चिताः

अनव्य-यस्यां-जिसमें, यावन्ति-आती है, यौ मध्ये-दोनों के बीच में, तस्येमौ-ये दोनों, ग्रामयोः -षड्जग्राम,मध्यमग्राम और गान्धारग्राम क्रमात्-में क्रम से, मूर्च्छना स्ता-तीन ग्राम होने के कारण 21 मूर्च्छनाएँ होती है जिनका व्योरा इस प्रकार है-षड़ज ग्राम की मूर्च्छना, मध्मम ग्राम की मूर्च्छना, तथा गांधार ग्राम की मूर्च्छना क्रमाशः -ललिता, पंचमा, रौद्री, मध्ममा, मत्सरी, ब्राह्मी, चित्रा, मृदुमध्या, वैष्णवी, रोहिणी, शुद्धा, खेदरी, मतंगजा, अंता, सुरा, सौवीरी, कलावती, नादावती, षड़मध्या, तीब्रा, और विशाल अन्य मत के अनुसार मूर्च्छनाओं के नाम इस प्रकार है-उत्तरमुद्रा, सौवीरी, नंदा, रजनी, हरिणाश्वा, विशाला, उत्तरायणी, कपोलनता, सोमपी, शुद्धपडजा, शुद्धमध्या, विचित्रा, मत्सरीक्रांता, मार्गो, रोहिणी, अश्वक्रांता, पौरवी, सुखा, अभिरुता, मंदाकिनी, अलापी आदि। वदि त्येवं-बोलने योग्य अथवा कहने लायक हो, भरतेन-भरतमुनि जी नें, च चर्चिताः -और जिसकी चर्चा की जाये।

भावार्थ-भरतमुनि जी नें जिसकी चर्चा की है वह जिसमें दोनों के बीच में ये दोनों आती है,और जिसकी चर्चा की जाये, षड्जग्राम,मध्यमग्राम और गान्धारग्राम में क्रम से तीन ग्राम होने के कारण इक्कीस मूर्च्छनाएँ होती है जिनका व्योरा इस प्रकार है-षड़ज ग्राम की मूर्च्छना, मध्मम ग्राम की मूर्च्छना, तथा गांधार ग्राम की मूर्च्छनायें क्रमाशः -ललिता, पंचमा, रौद्री, मध्ममा, मत्सरी, ब्राह्मी, चित्रा, मृदुमध्या, वैष्णवी, रोहिणी, शुद्धा, खेदरी, मतंगजा, अंता, सुरा, सौवीरी, कलावती, नादावती, षड़्जमध्या, तीब्रा, और विशाल अन्य मत के अनुसार मूर्च्छनाओं के नाम इस प्रकार है-उत्तरमुद्रा, सौवीरी, नंदा, रजनी, हरिणाश्वा, विशाला, उत्तरायणी, कपोलनता, सोमपी, शुद्धपडजा, शुद्धमध्या, विचित्रा, मत्सरीक्रांता, मार्गो, रोहिणी, अश्वक्रांता, पौरवी, सुखा, अभिरुता, मंदाकिनी, अलापी आदि।

प्रथमादिस्वरारम्भादेकैका सप्तधा भवेत् ।

तांस्तानुच्चारयेदन्त्यान् पूर्वादुच्चारयेत्क्रमात् ॥75॥

पदच्छेदः-प्रथमादि स्वरारम्भाद एकैका सप्तधाभवेत् । तां स्तानु च्चारये दन्त्यान् पूर्वाद् उच्चारयेत् क्रमात्

अनव्य-प्रथमादि-जिसका स्थान सबसे पहले हो, स्वरारम्भादे-स्वर के आरम्भ से, एकैका-एक-एक कर के, सप्तधाभवेत्-सात भागों में होगा, तां-तब तक, स्तान्-उनको, उच्चारये-उच्चारण करें, दन्त्यान्-जिसका उच्चारण दाँत की सहायता से हो, पूर्वाद्-पहले से, उच्चारयेत्-शब्दों को मुँह से निकालना की क्रिया, क्रमात्-क्रम से।

भावार्थ-प्रथम स्वर का उच्चारण दाँत की सहायता से होता है, से आरम्भ करते हुये एक-एक करके क्रम से स्वर जो सात भागों में होते है, स, रे, ग, म, प, ध, नि, प्रथम स्वर से आरम्भ करते हुये अन्तिम स्वर नि तक उच्चारण करें।

श्रुतयोऽथ स्वरा ग्रामौ मूर्च्छनास्तानसंयुताः।

तानानि (?) वृत्तयश्चैव पुष्पसाधारणे तथा ॥76॥

पदच्छेदः-श्रुतयो ऽथ स्वरा ग्रामौमूर्च्छना स्तान संयुताः तानानि (?) वृत्तय श्चैव पुष्प साधारणे तथा

अनव्य-श्रुतयोऽथ-आरम्भ करनें का मंगलसूचक सुशब्द जो सुना जाने योग्य हो, (भारतीय शास्त्रीय संगीत श्रुतिव्यवस्था पर प्रतिष्ठित है और अनेक राग, जैसे राग बहार आदि, हमें आज के १२ स्वरों के प्रचलित वातावरण से श्रुतियों की ओर खींचते है। श्रुति का अर्थ है वह सूक्ष्म नाद लहरी जो कि श्रवणेन्द्रिय (कान) के द्वारा सुनी जा सके। और ऐसी 22 श्रुतियां, सा से सां (मध्य सप्तक के सा से तार सप्तक के सा तक) तक अवस्थित है।स्वरा-ब्रह्मा की बड़ी पत्नी का नाम जो गायत्री की सपत्नी कही गई है तथा सप्तस्वरों की अधिष्ठात्री है, ग्रामौमूर्च्छना-एक ग्राम से दूसरे ग्राम तक जाने में सातो स्वरों का आरोह व अवरोह । विशेष- ग्राम के सातवें भाग का नाम मूर्च्छना है । भरत मुनि के मतानुसार से गाते समय गले को कँपाने से ही मूर्च्छना होती है, और अन्य मतानुसार यह मत है कि स्वर के सूक्ष्म विराम को ही मूर्च्छना कहते है । तीन ग्राम होने के कारण 21 मूर्च्छनाएँ होती है जिनका व्योरा इस प्रकार है-षड़ज ग्राम की मूर्च्छना, मध्मम ग्राम की मूर्च्छना, तथा गांधार ग्राम की मूर्च्छना क्रमाशः - ललिता, पंचमा, रौद्री, मध्मा, मत्सरी, ब्राह्मी, चित्रा, मृदुमध्या, वैष्णवी, रोहिणी, शुद्धा, खेदरी, मतंगजा, अंता, सुरा, सौवीरी, कलावती, नादावती, षड़मध्या, तीब्रा, और विशाल अन्य मत के अनुसार मूर्च्छनाओं के नाम इस प्रकार है-उत्तरमुद्रा, सौवीरी, नंदा, रजनी, हरिणाश्वा, विशाला, उत्तरायणी, कपोलनता, सोमपी, शुद्धपडजा, शुद्धमध्या, विचित्रा, मत्सरीक्रांता, मार्गो, रोहिणी, अश्वक्रांता, पौरवी, सुखा, अभिरुता, मंदाकिनी, अलापी आदि।) स्तान-स्थान सूचक शब्द, संयुता-संबद्ध, तानानि-तानों

को, वृत्तयश्चैव-और जो आवृत में किया जाय, पुष्पसाधारणे-जिस प्रकार वसंतऋतु में पुष्पों की उपलब्धता सरलता से हो जाती है, तथा-विधान है।

भावार्थ-श्रुतियों से आरम्भ करते हुये श्रुति का अर्थ है वह सूक्ष्म नाद लहरी जो कि श्रवणेन्द्रिय (कान) के द्वारा सुनी जा सके। और ऐसी 22 श्रुतियां, सा से सां (मध्य सप्तक के सा से तार सप्तक के सा तक) तक अवस्थित है। एक ग्राम से दूसरे ग्राम तक जाने में सातो स्वरों का आरोह व अवरोह तक के क्रम में विशेष- ग्राम के सातवें भाग का नाम मूर्च्छना है । भरत मुनि के मतानुसार से गाते समय गले को कँपाने से ही मूर्च्छना होती है, और अन्य मतानुसार यह मत है कि स्वर के सूक्ष्म विराम को ही मूर्च्छना कहते है । तीन ग्राम होने के कारण 21 मूर्च्छनाएँ होती है जिनका व्योरा इस प्रकार है-षड़ज ग्राम की मूर्च्छना, मध्मम ग्राम की मूर्च्छना, तथा गांधार ग्राम की मूर्च्छना क्रमाशः-ललिता, पंचमा, रौद्री, मध्ममा, मत्सरी, ब्राह्मी, चित्रा, मृदुमध्या, वैष्णवी, रोहिणी, शुद्धा, खेदरी, मतंगजा, अंता, सुरा, सौवीरी, कलावती, नादावती, षड़मध्या, तीब्रा, और विशाल अन्य मत के अनुसार मूर्च्छनाओं के नाम इस प्रकार है-उत्तरमुद्रा, सौवीरी, नंदा, रजनी, हरिणाश्वा, विशाला, उत्तरायणी, कपोलनता, सोमपी, शुद्धपडजा, शुद्धमध्या, विचित्रा, मत्सरीक्रांता, मार्गो, रोहिणी, अश्वक्रांता, पौरवी, सुखा, अभिरुता, मंदाकिनी, अलापी आदि।) को स्थान सूचक शब्द को तानों से आवृत में संबद्ध किया जाय, वैसे ही जिस प्रकार विधि-विधान के अनुसार वसंतऋतु में पुष्पों की उपलब्धता सरलता से हो जाती है।

जातयश्चैव वर्णाश्च नानालङ्कारभूषिताः।

एतत्स्वरगतोद्देशः सङ्क्षेपेणार्थनिर्णयः ॥77॥

पदच्छेदः-जातय श्च एव वर्णा श्च एव नानालङ्कार भूषिताः एतत् स्वर गतोद्देशः सङ्क्षेपेणार्थ निर्णयः

अनव्य-जातय-जातियाँ (नाट्य शास्त्र के 2 ग्रामों की 18), वर्ण (1-स्थायी, 2-अन्तरा, 3-संचारी, 4-आभोग), नानालङ्कार-अनेक अलंकारों के समेत, भूषिताः-सजाया और सँवारा हुआ, एतत्-यह, स्वर-स्वर से सम्बन्धित, गतोद्देशः-संगीत का समुद्देश है, सङ्क्षेपेणार्थ-संक्षेप में किया जाना, निर्णयः-निर्णय किया जायगा।

भावार्थ-नाट्य शास्त्र के २ ग्रामों में क्रमशः १८ स्वर जातियोँ का वर्णन किया गया है, और साथ ही वर्णों को चार भागों में क्रमनुसार -१-स्थायी, २-अन्तरा, ३-संचारी और ४-आभोग को अनेक अलंकारों के समेत सजाया और सँवारा गया है। यहाँ स्वर से सम्बन्धित संगीत का समुद्देश है, जिसका निर्णय संक्षेप में किया जायगा।

अथ षड्जादिस्वरेषु श्रुतयो वक्ष्यन्ते ।

पदच्छेदः-अथ षड्ज आदि स्वरेषु श्रुतयो वक्ष्यन्ते संगीत के सात स्वरों में षड्ज आदि स्वरों की श्रुतियाँ कहा जाता है।

सिद्धा प्रभावती कान्ता सुप्रभा च मनोहरा।

साधयन्ति श्रुतिः (१) षड्जे प्रजापतिमुखोद्गताः ॥78॥

पदच्छेदः-सिद्धा प्रभावती कान्ता सुप्रभा च मनोहरा साधयन्ति श्रुतिः(१) षड्जे प्रजापति मुखोद्गताः

अनव्य-सिद्धा-सिद्धा (आर्या छंद का 15वाँ भेद, जिसमें 13 गुरु और 31 लघु होते है), प्रभावती-महाभारत के अनुसार अंग देश के राजा चित्ररथ की रानी, संगीत में एक श्रुति, तेरह अक्षरों का एक छंद जिसे 'रुचिरा' कहते है, शिव के एक गण की वीणा का नाम और प्रभाती नाम का एक राग या गीत, कान्ता-प्रिया अथवा सुंदरी स्त्री, सुप्रभा-सात सरस्वतियों में से एक साथ ही स्कंद की एक मातृका का नाम और मनोहरा-त्रिशिर की माता का नाम य़ा त्रिशिर की माता का नाम, साधयन्ति-साधना करनेवाली उपासिका या आराधिका, श्रुतिः-श्रवण करने की क्रिया या भाव, षड्जे-संगीत के सात स्वरों में से चौथा स्वर इसके उच्चारणस्थान छह् कहे गए है-नासा, कंठ, उर, तालु, जिह्वा और दंत; इसी से इसका नाम षड्ज पड़ा। मूल स्थान दंत और अंत स्थान कंठ है । देवता इसके अग्नि है। वर्ण रक्त, आकृति ब्रह्मा की, ऋतु हिम, वार रविवार, छंद अनुष्टुप् और संतति इसकी भैरव राग है । कुछ के मतानुसार यह प्रथम स्वर है और मोर के स्वर से मिलता जुलता है।प्रजापतिमुखोद्गताः-सृष्टि को उत्पन्न करनेवाला। वह जिसने सृष्टि उत्पन्न की है, पुराणों में ब्रह्मा के पुत्र अनेक प्रजापतियों का उल्लेख है । कहीं ये दस प्रजापति कहे गए है-(1) मरीचि (2) अत्रि (3) अंगिरा (4) पुलस्त्य (5) पुलह (6) क्रतु (7) प्रचेता (8) वशिष्ठ (9) भृगु (10) नारद और कहीं इन इक्कीस प्रजापतियों का उल्लेख है। (1) ब्रह्मा (2) सूर्य (3) मनु (4) दक्ष (5) भृगु (6) धर्मराज (7) यमराज (8) मरीचि (9) अंगिरा (10) अत्रि (11) पुलस्त्य (12) पुलह (13) क्रतु (14) वशिष्ठ (15) परमेष्ठी (16) विवस्वान् (17) सोम (18) कर्दम (19) क्रोध (20) अर्वाक और (21) क्रीत, मुखोद्गताः-मुख से निकली हुई।

भावार्थ-सिद्धा-**सिद्धा**(आर्या छंद का 15वाँ भेद, जिसमें 13 गुरु और 39 लघु होते है), **प्रभावती**-महाभारत के अनुसार अंग देश के राजा चित्ररथ की रानी, संगीत में एक श्रुति, तेरह अक्षरों का एक छंद जिसे 'रुचिरा' कहते है, शिव के एक गण की वीणा का नाम और प्रभाती नाम का एक राग या गीत, **कान्ता**-प्रिया अथवा सुंदर स्त्री, **सुप्रभा**-सात सरस्वतियों में से एक साथ ही स्कंद की एक मातृका का नाम और **मनोहरा**-त्रिशिर की माता का नाम य़ा त्रिशिर की माता का नाम, साधयन्ति-साधना करनेवाली उपासिका या आराधिका, **श्रुतिः**-श्रवण करने की क्रिया या भाव, षड्जे-संगीत के सात स्वरों में से चौथा स्वर इसके उच्चारणस्थान छह् कहे गए है-नासा, कंठ, उर, तालु, जिह्वा और

दंत इसी से इसका नाम षड्ज पड़ा। मूल स्थान दंत और अंत स्थान कंठ है ।देवता इसके अग्नि है। वर्ण रक्त,आकृति ब्रह्मा की, ऋतु हिम, वार रविवार, छंद अनुष्टुप् और संतति इसकी भैरव राग है। कुछ के मतानुसार यह प्रथम स्वर है और मोर के स्वर से मिलता जुलता है। प्रजापति जो सृष्टि को उत्पन्न करनेवाले अथवा वह जिसने सृष्टि उत्पन्न की है, पुराणों में ब्रह्मा के पुत्र अनेक प्रजापतियों का उल्लेख है । कहीं ये दस प्रजापति कहे गए है—(1) मरीचि (2) अत्रि (3) अंगिरा (4) पुलस्त्य (5) पुलह (6) क्रतु (7) प्रचेता (8) वशिष्ठ (9) भृगु (10) नारद और कही इन इक्कीस प्रजापतियों का उल्लेख है । (1) ब्रह्मा (2) सूर्य (3) मनु (4) दक्ष (5) भृगु (6) धर्मराज । (7) यमराज (8) मरीचि (9)अंगिरा (10) अत्रि (11) पुलस्त्य (12) पुलह (13) क्रतु (14) वशिष्ठ (15) परमेष्ठी (16) विवस्वान् (17) सोम (18) कर्दम (19) क्रोध (20) अर्वाक और (21) क्रीत, के मुख से निकली हुई मानी जाती है।

अंततोगत्वा सिद्धा, प्रभावती, कान्ता, सुप्रभा, और मनोहरा साधना, उपासिका या आराधिका करने योग्य होती है। श्रवण करने की क्रिया या भाव जो संगीत के सात स्वरों में से चौथा स्वर इसके उच्चारण स्थान छह् कहे गए है- नासा, कंठ, उर, तालु, जिह्वा और दंत इसी से इसका नाम षड्ज पड़ा। सृष्टि को उत्पन्न करनेवाले अथवा वह जिसने सृष्टि उत्पन्न की है के मुख से निकली हुई।

शिखा दीप्तिमती चैव उग्रा चाग्निसमुद्भवा ।

श्रुतयः साधयन्त्येनमृषभं नामतः स्वरम् ॥79॥

पदच्छेदः-शिखा दीप्तिमती चैव उग्रा च अग्नि समुद्भवा श्रुतयः साधयन्त् येन मृषभं नामतः स्वरम्

अनव्य-शिखा-शिखा, एक वर्णवृत्त जिसके विषय पादों में 28 लघु मात्राएँ और अंत में एक गुरु होता है और सम पादों में 30 लघु मात्रएँ और अंत में एक गुरु होता है, दीप्तिमती-दीप्तिमती, ज्ञान का प्रकाश जिससे विवेक उत्पन्न होता है और अज्ञानांधकार दूर हो जाता है, चैव-और तथा, उग्रा-निषाद स्वर की दो श्रुतियों में से पहली श्रुति, अग्नि-अग्नि, अग्नि की सात जिह्वाएँ मानी गई है, जिनके अलग अलग नाम है, जैसे—काली, कराली, मनोजवा, सुलोहिता, धूम्रवर्णा, उग्रा और प्रदीप्ता, अग्नि समुद्भवा-अग्निमुख से उत्पन्न हुई, श्रुतयः -सुना जाने योग्य तथा ख्याति दिलाने वाला, साधयन्त्-साधना, त्येन-के उपरान्त, मृषभं नामतः स्वरम्-ऋषभ नाम के स्वर को,

भावार्थ-एक वर्णवृत्त जिसके विषय पादों में २८ लघु मात्राएँ और अंत में एक गुरु होता है और सम पादों में ३० लघु मात्रएँ और अंत में एक गुरु होता है, दीप्तिमती, ज्ञान का प्रकाश जिससे विवेक उत्पन्न होता है और अज्ञानांधकार दूर हो जाता है निषाद स्वर की दो श्रुतियों में से पहली श्रुति, अग्नि-अग्नि, अग्नि की सात जिह्वाएँ मानी गई है जिनके अलग अलग नाम है, जैसे- काली, कराली, मनोजवा, सुलोहिता, धूम्रवर्णा, उग्रा और प्रदीप्ता और तथा निषाद स्वर की दो श्रुतियों में से पहली श्रुति, अग्नि-

अग्नि, अग्नि की सात जिह्वाएँ मानी गई है जिनके अलग अलग नाम है तथा अग्निमुख से उत्पन्न हुई है और ऋषभ नाम के स्वर को साधनें के योग्य बनाती है।

ह्लादी च निर्विरी चैव श्रुती व्याहृतिसम्भवे ।

गान्धारं च साधयत (ः) यथार्थे गुणसंश्रये ॥80॥

पदच्छेदः-ह्लादी च निर्विरी चैव श्रुती व्याहृतिसम्भवे गान्धारं च साधयत (ः) यथार्थे गुणसंश्रये

अनव्य-ह्लादी-आनंदयुक्त प्रसन्न, च-और, निनाद करने वाला, निर्विरी-जिसमें वैर न हो और जो द्वेष से रहित हो, चैव श्रुती-और जिसे परंपरा से सुनते आते हों, व्याहृतिसम्भवे-व्यवहार में संयोग से संभव होना, गान्धारं च-एक षा़ड़व राग अथवा गांधार पंचम, यह मंगलीक राग है और अदभुत हास्य तथा करुण रस में इसका प्रयोग होता है । इसमें ऋषभ नहीं लगता । म, प, ध, नि, स, ग, म इसका सरगम है । इसमें प्रसन्न मध्यम अलंकार और काकली का संचार होना आवश्यक है । इसे केवल गांधार भी कहते है । यह राग देवगांधार के मेल से बनता है । इसमें सातों स्वर लगते है और यह प्रातः काल गाया जाता है । इसका सरगम यह है-ध, नि, स, रि, ग, म, प, ध, साधयत (ः)-साधती हुयी, यथार्थे-ज्यों का त्यों, गुणसंश्रये-वह भाव जो किसी वस्तु के साथ आश्रय देता है ।

भावार्थ-आनंदयुक्त प्रसन्न और निनाद करने वाला जिसमें वैर न हो और जो द्वेष से रहित हो और जिसे परंपरा से सुनते आते हों और जो व्यवहार में तथा जिसका संयोग संभव हो, एक षा़ड़व राग अथवा गांधार पंचम, यह मंगलीक राग है और अदभुत हास्य तथा करुण रस में इसका प्रयोग होता है । इसमें ऋषभ नहीं लगता । म, प, ध, नि, स, ग, म इसका सरगम है । इसमें प्रसन्न मध्यम अलंकार और काकली का संचार होना आवश्यक है। इसे केवल गांधार भी कहते है । यह राग देवगांधार के मेल से बनता है । इसमें सातों स्वर लगते है और यह प्रातः काल गाया जाता है । इसका सरगम यह है-ध, नि, स, रि, ग, म, प, ध। वह भाव जो किसी को साधते हुये ज्यों का त्यों आश्रय देता है।

दिरा सर्पसहा क्षान्तिर्विभूतिस्तदनन्तरम् ।

मध्यमं साधयन्त्येताः श्रुतयः पृथिवीभवाः ॥81॥

पदच्छेदः-दिरा सर्पसहा क्षान्ति र्विभूति स्तदनन्तरम् मध्यमं साधयन्त्येताः श्रुतयः पृथिवीभवाः

अनव्य-दिरा-दिरा, सर्पसहा-सर्पसहा, क्षान्ति-क्षान्ति, र्विभूति-र्विभूति, स्तदनन्तरम्-अनन्तर, मध्यमं-मध्यम स्वर के द्वारा, साधयन्त्येताः --साधी जाती है, श्रुतयः -श्रुतियाँ पृथिवीभवाः -पृथ्वी से उत्पन्न हुयी है।

भावार्थ-दिरा, सर्पसहा, क्षान्ति, विभूति अनन्तर श्रुतियाँ मध्यम स्वर के द्वारा साधी जाती है, यह श्रुतियाँ पृथ्वी से उत्पन्न हुयी है।

मालिनी चपला बाला सर्वरत्ना प्रभावती ।

श्रुतयः सोमपुत्रस्तु साधयिष्यन्ति पञ्चमम् ॥82॥

पदच्छेदः-मालिनी चपला बाला सर्वरत्ना प्रभावती श्रुतयः सोमपुत्रस्तु साधयिष्यन्ति पञ्चमम्

अनव्य-मालिनी-मालिनी,स्कंद की सात माताओं में से एक माँ का नाम, चपला-चपला,आर्या छंद का एक भेद, जिस आर्या दल के प्रथम गण के अंत में गुरु हो, दूसरा गण जगण हो, तीसरा गण दो गुरु का हो, चौथा गण जगण हो, पाँचवा गण का आदि गुरु का हो, छठा गण जगण हो, सातवाँ जगण न हो, अंत में गुरु हो, उसे चपला कहते है, बाला-बाला,एक वर्णवृत्त जिसके प्रत्येक चरण में तीन रगण और एक गुरु होता है, सर्वरत्ना-सर्वरत्ना,संगीत में एक श्रुति का नाम, प्रभावती-प्रभावती,संगीत में एक श्रुति का नाम, श्रुतयः -श्रुतियाँ, सोमपुत्रस्तु-बुद्ध ग्रह से उतपन्न, साधयिष्यन्ति-साधेंगी, पञ्चमम्-पंचम स्वर को।

भावार्थ-मालिनी स्कंद की सात माताओं में से एक माँ का नाम, चपला, बाला, सर्वरत्ना और प्रभावती बुद्ध ग्रह से उतपन्न श्रुतियाँ है, यह सभी पंचम स्वर को साधती है। आर्या छंद का एक भेद, जिस आर्या दल के प्रथम गण के अंत में गुरु हो, दूसरा गण जगण हो, तीसरा गण दो गुरु का हो, चौथा गण जगण हो, पाँचवा गण का आदि गुरु का हो, छठा गण जगण हो, सातवाँ जगण न हो, अंत में गुरु हो, उसे चपला कहते है, बाला,एक वर्णवृत्त जिसके प्रत्येक चरण में तीन रगण और एक गुरु होता है, संगीत में एक श्रुति का नाम सर्वरत्ना, प्रभावती,संगीत में एक श्रुति का नाम, यह सभी श्रुतियाँ बुद्ध ग्रह से उतपन्न हुयीं और पंचम स्वर को साधती है।

शान्ता विकलिनी चैव हृदयोन्मलिनी तथा ।

धैवतं साधयन्त्येता यक्षराजविनिर्मिताः ॥83॥

पदच्छेदः-शान्ता विकलिनी चैव हृदयोन् मलिनी तथा धैवतं साधयन्त्येता यक्षराज विनिर्मिताः

अनव्य-शान्ता-संगीत में एक श्रुति, विकलिनी-व्याकुल कर देनें वाली संगीत में एक श्रुति, चैव-और भी, हृदयोन्मलिनी-हृदय को मलिन करनें वाली संगीत में एक श्रुति, तथा-और, धैवतं-संगीत के सात स्वरों में से छठा स्वर जो मध्यम के आगे खींचा जाता है, यह षाड़व जाति का स्वर माना गया है। इसकी 720 तानें मानी गई है जिनमें प्रत्येक के 48 भेद होने से सब 34,560 तानें हुईं । श्रुतियाँ इसकी तीन है-रम्या, रोहिणी और मदती, साधयन्त्येता-धैवत स्वर को साधती है, यक्षराज-यक्षों का राजा, कुबेर, विनिर्मिताः-निर्मित की गयी है।

भावार्थ-संगीत में एक श्रुति शान्ता, व्याकुल कर देनें वाली संगीत में एक श्रुति विकलिनी और हृदय को मलिन करनें वाली हृदयोन्मलिनी संगीत की एक श्रुति यह सभी श्रुतियाँ संगीत के सात स्वरों में से

छठा स्वर जो मध्यम के आगे खींचा जाता है, यह षाड़व जाति का स्वर माना गया है । इसकी 720 तानें मानी गई है जिनमें प्रत्येक के 48 भेद होने से सब 34, 560 तानें हुईं।इसकी तीन श्रुतियाँ है- रम्या, रोहिणी और मदती, धैवत स्वर को साधती है, यक्षों का राजा, कुबेर के द्वारा निर्मित की गयी है।

विसारिणी प्रसूना च निषादेन समुत्थितम् ।

श्रुतिः साधयते नित्यं यमराजमुखोद्भवा ॥84॥

पदच्छेदः-विसारिणी प्रसूना च निषादेन समुत्थितम् श्रुतिः साधयते नित्यं यमराज मुखोद्भवा

अनव्य-विसारिणी-प्रसरणशील, च-और, प्रसूना-पुष्प के समान, निषादेन-संगीत का एक स्वर, समुत्थितम्-अत्यंत ऊँचा उठा हुआ, श्रुतिः-श्रवण करने की क्रिया या भाव, साधयते-साधती है, नित्यं-शाश्वत, यमराज-यमों के राजा धर्मराज, मुखोद्भवा-मुख से उत्पन्न होकर अस्तित्व में आना।

भावार्थ-विसारिणी, प्रसूना और निषाद जो संगीत का एक स्वर है, जो अत्यंत ऊँचा उठा हुआ होता है तथा श्रवण करने की क्रिया या भाव को शाश्वत साधती है। यमों के राजा धर्मराज के मुख से उत्पन्न होकर अस्तित्व में आती है।

चतुश्चतुश्चतुश्चैव षड्जमध्यमपञ्चमाः।

द्वे द्वे निषादगान्धारौ त्रिस्त्रि ऋषभधैवतौ ॥85॥

पदच्छेदः-चतुश् च चतुश् चतुश् च एव षड्ज मध्यम पञ्चमाः द्वे द्वे निषाद गान्धारौ त्रिस्त्रि ऋषभ धैवतौ

अनव्य-चतुश्-चार, चतुश्-चार और चतुश्-चार, षड्ज-संगीत के सात स्वरों में से चौथा स्वर, संगीत के सात स्वरों में प्रथम स्वर भी कहा जाता है इसके उच्चारणस्थान छह् कहे गए है-नासा, कंठ, उर, तालु, जिह्वा और दंत; इसी से इसका नाम षड्ज पड़ा है, मध्यम-जो गुण, विस्तार, मान आदि के विचार से न बहुत बड़ा हो, न बहुत छोटा, संगीत का सात स्वरों में से चौथा, पञ्चमाः -संगीत का सात स्वरों में से पाँचवाँ स्वर, द्वे-दो, द्वे-दो, निषाद-संगीत का सात स्वरों में से सातवाँ स्वर नि जो संगीत का एक स्वर है, तथा जो अत्यंत ऊँचा उठा हुआ होता है, गान्धारौ-संगीत का सात स्वरों में से तीसरा स्वर जो एक प्रकार का विकृत स्वर जो वज्रिका नामक श्रुति से आरंभ होता है । इसमें तीन प्रकार की श्रुतियाँ होती है, त्रिस्त्रि-तीन-तीन हों, ऋषभ-संगीत के सात स्वरों में से दूसरा स्वर जिसकी तीन श्रृतियाँ है-दयावती, रंजनी और रतिका, धैवतौ-संगीत के सात स्वरों में से छठा स्वर जो मध्यम के आगे खींचा जाता है श्रुतियाँ इसकी तीन है-रम्या, रोहिणी और मदती।

भावार्थ-सा, म और प की चार-चार श्रुतियाँ, नि और ग की दो-दो श्रुतियाँ, रे और ध की तीन-तीन श्रुतियाँ है। इस प्रकार स्वरों की संख्या सात और श्रुतियोँ की संख्या बाइस हो जाती है।

जातिभिः श्रुतिभिश्चैव स्वरा ग्रामत्वमागताः।

तद्वत्तथैव भृत्यैव काव्यबन्धप्रतिष्ठिताः ॥86॥

पदच्छेदः-जातिभिः श्रुतिभिश्चैव स्वरा ग्रामत्वमागताः तद्वत्तथैव भृत्यैव काव्यबन्धप्रतिष्ठिताः

अनव्य-जातिभिः -जातियों के द्वारा, श्रुतिभिश्चैव-और श्रुतियों के द्वारा, स्वरा-स्वरों को, ग्रामत्वमागताः -सात स्वरों के ग्राम समूहों को क्रम से, तद्वत्-तथैव-उसी प्रकार वैसे ही, भृत्यैव-भाई के समान, काव्यबन्धप्रतिष्ठिताः-वह रचना जिससे चित्त किसी रस या मनोवेग से पूर्ण होते हुये आपस में जुड़कर जिसकी प्रतिष्ठा हुई हो।

भावार्थ-स्वर जातियों और श्रुतियों के द्वारा सात स्वरों के ग्राम समूहों को क्रम से उसी प्रकार रखा जाता है जैसे दो भाई। वह रचना जिसमें काव्यरूपी प्रबन्धन, जिसमें चित्त किसी रस या मनोवेग से पूर्ण होते हुये आपस में जुड़कर प्रतिष्ठा को प्राप्त हो।

स्वराः षड्जादयस्तत्र ग्रामौ द्वौ षड्जामध्यमौ ।

केचिद्गान्धारमप्याहुः स तु नेहोपलश्यते ॥ 87॥

पदच्छेदः-स्वराः षड्जादयस् तत्र ग्रामौ द्वौ षड्जा मध्यमौ केचिद् गान्धारमप्याहुः स तु नेहोपलश्यते

अनव्य-स्वराः -संगीत के सात स्वरों की अधिष्ठात्री माँ गायत्री, षड्जादय-संगीत के सात स्वरों में से पहला स्वर सा जो करुणामय होता है, तत्र-उस स्थान पर, ग्रामौ-सात स्वरों का समूह क्रमानुसार षड़ज, मध्यम और गांधार नामक तीन ग्राम, द्वौ-दो, षड्जा मध्यमौ-षड़ज और मध्यम, केचिद्-कभी कभी, शायद अथवा कदाचित्, गान्धारमप्याहुः -गान्धार को भी कहते है, स-वह (ईश्वर), तु-किसी बहुत प्रिय या छोटे के लिए अथवा किसी को अशिष्टता से पुकारने के लिए प्रयुक्त होने वाला शब्द, नेहोपलश्यते-वह यहाँ उपलब्ध नहीं है। इस ग्रन्थ में चर्चा में नहीं आया है।

भावार्थ-संगीत के सात स्वरों की अधिष्ठात्री माँ गायत्री, संगीत के सात स्वरों में से पहला स्वर सा जो करुणामय होता है, उस स्थान पर सात स्वरों का समूह जो क्रमानुसार षड़ज, मध्यम और गांधार नामक तीन ग्राम होते है, में से षड़ज और मध्यम को कभी कभी गांधार नामक ग्राम स्वर कहते है। वह यहाँ उपलब्ध नहीं है। तथा इस ग्रन्थ की चर्चा में नहीं आया है।

सप्तस्वरादयो१ ग्रामे चतुर्दश च मूर्च्छनाः ।

तासामेकोनपञ्चाशदित्येतत्स्वरमण्डलम् ॥88॥

पदच्छेदः-सप्तस्वरादयो१ ग्रामे चतुर्दश च मूर्च्छनाः तासाम् एकोनपञ्चाशद् इति एतत् स्वरमण्डलम्

अनव्य-सप्तस्वरादयो-सात स्वर आदि, ग्रामे-ग्राम में, चतुर्दश-चौदह, च-और, मूर्च्छनाः -संगीत में एक ग्राम से दूसरे ग्राम तक जाने में सातो स्वरों का आरोह अवरोह तक के क्रम में स्वर के सूक्ष्म

विराम को ही मूर्च्छना कहते है, तासाम्-उन मूर्च्छनाओं का अथवा के, एकोनपञ्चाशदि-उनचास(सात स्वरों की सात-सात मूर्च्छना), इति एतत्-यह, स्वरमण्डलम्-स्वर मण्ड़ल होते है।

भावार्थ-संगीत में एक ग्राम से दूसरे ग्राम तक जाने में सातो स्वरों का आरोह अवरोह तक के क्रम में स्वर के सूक्ष्म विराम को ही मूर्च्छना कहते है, सात स्वरों की सात-सात मूर्च्छनायें होती है जसका कुल योग उनचास स्वर मण्ड़ल होते है।

भूर्लोकाज्जायते षड्जो भुवर्लोकात्तु मध्यमः।
स्वर्गलोकात्तु गान्धारो नारदस्य मतं यथा॥ 89॥

पदच्छेदः-भूर्लोकाज् जायते षड्जो भुवर्लोकात्तु मध्यमः। स्वर्गलोकात्तु गान्धारो नारदस्य मतं यथा॥

अनव्य-भूर्लोकाज्-मर्त्यलोक, कर्मलोक अथवा संसार अर्थात भू-लोक, जायते-पैदा होता है, षड्जो-संगीत के सात स्वरों में से चौथा स्वर (कुछ के मत है कि यह संगीत का प्रथम स्वर है), भुवर्लोकात्त-पृथ्वी और सूर्य का मध्यवर्ती भाग अथवा अंतरिक्ष लोक, मध्यमः -मध्यम, स्वर्गलोकात्तु-स्वर्गलोक से, गान्धारो-गान्धार, नारदस्य-नारद के, मतं- मत में, यथा-जैसे।

भावार्थ-मर्त्यलोक, कर्मलोक अथवा संसार अर्थात भू-लोक से संगीत के सात स्वरों में से चौथा स्वर षड्ज अर्थात सा स्वर (कुछ के मत है कि यह संगीत का प्रथम स्वर है) पृथ्वी और सूर्य का मध्यवर्ती भाग अथवा अंतरिक्ष लोक से मध्यम स्वर अर्थात म स्वर, स्वर्गलोक से गान्धार स्वर पैदा होता है। ऐसा नारद जी कहते है।

आद्या ह्युत्तरमन्द्रा स्याद्रञ्जनी चोत्तरायता।
२चतुर्विधषड्जौ पञ्चमी मत्सरीकृता ॥90॥

पदच्छेदः-आद्या ह्य उत्तरमन्द्रा स्याद् रञ्जनी चोत्तरायता। चतुर्विध शुद्धषड्जौ पञ्चमी मत्सरीकृता

अनव्य-आद्या-प्रधान शक्ति के प्रारम्भ में, ह्य-पीछे अथवा बाद में, उत्तरमन्द्रा-यह संगीत की एक मूर्छना है। जिसके स्वरग्राम का क्रम इस प्रकार है-स, रे, ग, म, प, ध, नि, ध, नि, स, रे, ग, म, प, ध, नि, स्याद्-हो, रञ्जनी-संगीत में ऋषभ स्वर की तीन श्रुतियों में से दूसरी श्रुति, चोत्तरायता-बाद में, चतुर्विध-चार रूपोंवाला अथवा चार प्रकार का, शुद्धषड्जौ-शुद्ध षड्ज, पञ्चमी-पंचम, मत्सरीकृता-संगीत में एक मूर्छना का नाम । इसका स्वरग्राम इस प्रकार है-म,प,ध,नि,स,रे,ग । ग,म,प,ध,नि,स,रे,ग,म,प,घ,नि

भावार्थ-उत्तरमन्द्रा जिसके स्वरग्राम का क्रम इस प्रकार है-स, रे, ग, म, प, ध, नि, ध, नि, स, रे, ग, म, प, ध, नि, जो एक प्रधान शक्ति के रूप में है, को प्रारम्भ में और पीछे अथवा बाद में रञ्जनी जो संगीत में ऋषभ स्वर की तीन श्रुतियों में से दूसरी श्रुति के रूप में होती है, बाद में शुद्ध षड्ज जो चार प्रकार

अथवा का चार रूपोंवाला तथा पंचम मत्सरीकृता यह भी संगीत में एक मूर्छना का नाम है, इसके स्वरग्रामों संरचना इस प्रकार है-म,प,ध,नि,स,रे,ग । ग,म,प,ध,नि,स,रे,ग,म,प,घ,नि।

अजक्रान्ता३ तु षष्ठी च सप्तमी .... रूद्वता।

प्रतिपद्यादितिथिषु जाता मन्द्रास्तु संयुताः ॥91॥

पदच्छेदः-अजक्रान्ता३(अश्वक्रान्ता) तु षष्ठी च सप्तमी....रूद्वता(चाभिरूद्वता) प्रतिपद्या आदि तिथिषु जाता मन्द्रा अस्तु संयुताः

अनव्य-अजक्रान्ता(अश्वक्रान्ता)-अश्वक्रान्ता-अश्व का ऊँचे स्वर के समान संगीत में एक तरह की स्वर मूर्च्छना, तु षष्ठी-षष्ठी, च सप्तमी-और सप्तमी,अभिरूद्वता-कुलीनता या शालीनता, प्रतिपद्या-प्रतिपदा किसी पक्ष की पहली तिथि, आदि-भी, तिथिषु-तिथियों में, जाता-पैदा होती है, मन्द्रा-संगीत में स्वरों के तीन भेदों में से एक इस जाति के स्वर मध्य से अवरोहित होते है, अस्तु-चाहे जो हो, संयुताः-संयुक्त होती है।

भावार्थ-अश्वक्रान्ता अर्थातअश्व का ऊँचे स्वर के समान संगीत में एक तरह की स्वर मूर्च्छना, षष्ठी और सप्तमी जो कुलीनता या शालीनता के क्रम में प्रतिपदा अर्थात माह के (प्रत्येक माह में दो पक्ष होते है) पक्ष की पहली तिथि पैदा होती है। संगीत में स्वरों के तीन भेदों में से मन्द्रा जो एक जाति के स्वर मध्य से अवरोहित होते है, चाहे जो हो संयुक्त होती है। अर्थात अजक्रान्ता, षष्ठी और सप्तमी का उद्भव प्रतिपदा तिथि में होता है जिसमें मन्द्रा, संगीत में स्वरों के तीन भेदों में से एक जिसमें इस जाति के स्वर मध्य से अवरोहित होते है में संयुक्त रूप से होती है।

सनिघपमगरिसा ज्ञातव्याः सप्त मूर्च्छनाः।

षड्जमाश्रिता ह्येता नारदेन विवक्षिताः ॥92॥

पदच्छेदः-स नि घ प म ग रि सा ज्ञातव्याः सप्त मूर्च्छनाः षड्जमाश्रिता ह्येता नारदेन विवक्षिताः

अनव्य-सनिघपमगरिसा-षड्ज, निषाद, धैवत, मंचम, मध्यम, गान्धार, ऋषभ, षड्ज, ज्ञातव्याः-जिसे जानना उचित है, सप्त-सात, मूर्च्छनाः-संगीत में एक ग्राम से दूसरे ग्राम तक जाने में सातो स्वरों का आरोह व अवरोह, षड्जम्-सात स्वरों में से चौथा स्वर षड्ज अर्थात सा स्वर (कुछ के मत है कि यह संगीत का प्रथम स्वर है),आश्रिता-आश्रित रहना, ह्येता-होता है, नारदेन-नारद जी के द्वारा, विवक्षिताः-कही गयी है।

भावार्थ-षड्ज, निषाद, धैवत, पंचम, मध्यम, गान्धार, ऋषभ और षड्ज सात स्वरों मे से चौथा स्वर षड्ज अर्थात सा स्वर (कुछ के मत है, कि यह संगीत का प्रथम स्वर है) आदि में अर्थात सातो स्वरों

का आरोह अवरोह तक के क्रम में स्वर के सूक्ष्म विराम को ही मूर्च्छना कहते है, सात स्वरों की सात-सात मूर्च्छनायें होती है, पर आश्रित रहती है। नारद जी के द्वारा कही गयी है।

मध्यसंवीरादिस्वरः।

म (मध्यम) से आरभ करके (म प ध नि सा रे ग) जो सात स्वरों के समूह को मध्यम ग्राम के स्वर कहते है। इसका यह प्रकार है -म ग रि स नि ध प।

संवीरा हरिणाश्वा च स्यात्कलोपनतायता।

शुद्धमध्या तथा चैव मार्द्दली पौरली तथा ॥93॥

पदच्छेदः-संवीरी हरिणाश्वा च स्यात् कल्लोपनता यता (?)शुद्धमध्या तथा चैव मार्द्दली पौरकी तथा

अनव्य-संवीरी-संगीत में एक प्रकार की मूर्छना जिसका स्वरग्राम इस प्रकार है-म, प, ध, नि, स, रे, ग, नि, स, रे, ग, म, प, ध, नि, स, रे, ग, म , हरिणाश्वा-संगीत के मध्यमग्राम में मूर्च्छना जिसके स्वरग्राम इस प्रकार है-ग, म, प, ध, नि, स, रे। स, रे, ग, म, प, ध, नि, स, रे, ग, म, प, च-और, स्यात्-कदाचित्, कल्लोपनता-आमोंद प्रमोद अथवा केवल मन बहलाने के लिए किया जाने वाला काम जो नमत करता हुआ घनिष्ठता से पूर्ण हो, यता-छदों में विराम का स्थान ,शुद्धमध्या*-इसको सुरों की मूर्च्छना, सूक्ष्म विराम को मूर्च्छना कहते है, तीन ग्राम होने के कारण 21 मूर्च्छनाएँ होती है जिनका व्योरा इस प्रकार है -षडज ग्राम की मध्मम ग्राम की गांधार ग्राम की ललिता पंचमा रौद्री मध्ममा मत्सरी ब्राह्मी चित्रा मृदुमध्या वैष्णवी रोहिणी शुद्धा खेदरी मतंगजा अंता सुरा सौवीरी कलावती नादावती षड़मध्या तीब्रा विशाल अन्य मत से मूर्च्छनाओं के नाम इस प्रकार है-उत्तरमुद्रा, सौवीरी, नंदा, रञ्जनी, हरिणाश्वा, विशाला, उत्तरायणी, कपोलनता, सोमपी, शुद्धषडजा, शुद्धमध्या, विचित्रा, मत्सरीक्रांता, मार्गो, रोहिणी, अश्वक्रांता, पौरवी, सुखा, अभिरुता, मंदाकिनी और अलापी, तथा-इसी तरह, मार्द्दली-पखावज के ढंग का एक प्रकार का प्राचीन वाध्ययन्त्र जो वर्तमान में प्रायः कीर्तन, आदि के समय बंगाल में बजाया जाता है।

भावार्थ-संगीत के मध्यमग्राम में मूर्च्छना जिसके स्वरग्राम इस प्रकार है-ग, म, प, ध, नि, स, रे । स, रे, ग, म, प, ध, नि, स, रे, ग, म, प, च और कदाचित् आमोंद प्रमोद अथवा केवल मन बहलाने के लिए किया जाने वाला काम जो नमत करता हुआ, घनिष्ठता से पूर्ण पखावज के ढंग का ढोल जैसा एक प्रकार का प्राचीन वाध्ययन्त्र जो वर्तमान में प्रायः कीर्तन, दुर्गा पूजा आदि के समय में होता है तथा बंगाल में बजाया जाता है, इसको सुरों की मूर्च्छना, सूक्ष्म विराम को मूर्च्छना कहते है, तीन ग्राम होने के कारण 21 मूर्च्छनाएँ होती है जिनका व्योरा इस प्रकार है-षडज ग्राम की मध्मम ग्राम की गांधार ग्राम की ललिता पंचमा रौद्री मध्ममा मत्सरी ब्राह्मी चित्रा मृदुमध्या वैष्णवी रोहिणी शुद्धा खेदरी

मतंगजा अंता सुरा सौवीरी कलावती नादावती षड़मध्या तीब्रा विशाल अन्य मत से मूर्च्छनाओं के नाम इस प्रकार है-उत्तरमुद्रा, सौवीरी, नंदा, रञ्जनी, हरिणाश्वा, विशाला, उत्तरायणी, कपोलनता, सोमपी, शुद्धषडजा, शुद्धमध्या, विचित्रा, मत्सरीक्रांता, मार्गो, रोहिणी, अश्वक्रांता,पौरवी, सुखा, अभिरुता, मंदाकिनी और अलापी, इसी तरह बंगाल में बजाया जाता है।

कृष्णप्रतिपदः सप्त तिथीषु (?) जनिताः स्वराः ।

तास्वरा (?) मध्यमग्रामे स्थापिता नारदेन च ॥94॥

पदच्छेदः-कृष्णप्रतिपदः सप्त तिथीषु (?) जनिताः स्वराः तास्वरा (?) मध्यमग्रामे स्थापिता नारदेन च

अनव्य-कृष्णप्रतिपदः-कृष्णपक्ष की अष्टमी तिथि से लेकर चतुर्दशी तक, सप्त तिथीषु-सात तिथियों में (?) जनिताः -उत्पन्न करनेवाला, स्वराः -स्वर, तास्वरा-वे स्वर (?), मध्यमग्रामे-मध्यम ग्राम में, स्थापिता-स्थापित, नारदेन च-नारद जी के द्वारा।

भावार्थ- कृष्णपक्ष की अष्टमी तिथि से लेकर चतुर्दशी तक सात तिथियों में उत्पन्न होनेंवाले वे सभी स्वर मध्यम ग्राम में नारद जी के द्वारा स्थापित किये गये है।

नन्दा विशाला सुमुखी चिता चित्रावती शुभा।

आलापा चेति गान्धारग्रामे स्युः सप्त मूर्च्छनाः ॥95॥

पदच्छेदः-नन्दा विशाला सुमुखी चिता चित्रावती शुभा आलापा चेति गान्धारग्रामे स्युः सप्त मूर्च्छनाः

अनव्य-संरा-उदारतापूर्वक देने के लिए आनंद की अधिष्ठात्री देवी, विशाला-राजा दक्ष की एक कन्या का नाम, सुमुखी-सुंदर मुखवाली स्त्री, चिता-शवदाह के लिये लकड़ियों को नीचे ऊपर क्रम से रखना, चित्रावती-चित्रसेन की पुत्री, शुभा-शोभायमान कांति वाली,आलापा-सुर खींचना या तान लगाना, चेति-ध्यान के प्रति सजग रहना, गान्धारग्रामे- गान्धारग्राम की, स्युः -स्थित रहते है, सप्त मूर्च्छनाः -सात स्वरों की मूर्च्छना

भावार्थ-प्रजापति राजा दक्ष की कन्यायें जो क्रम स्वरूप संरा (नन्दा), विशाला, सुमुखी, चिता, चित्रावती, शुभा और आलापा है। उदारतापूर्वक देने में दक्ष आनंद की अधिष्ठात्री देवी, सुंदर मुखवाली स्वरो को नीचे ऊपर क्रम से रखना वाली कला मे निपुर्ण तथा शोभायमान कांति वाली, सुर खींचना या तान लगाना की कला से परिपूरण थीं यह सभी संगीत के सात स्वरो मे विशेषतः गांधार ग्राम की मूर्च्छना मे स्थित रहती है, इसको ध्यान सजगता पूर्वक सदैव रखना चाहिये। गांधार ग्राम की मूर्च्छना क्रमशः-ललिता, पंचमा, रौद्री, मध्मा, मत्सरी, ब्राह्मी, चित्रा, मृदुमध्या, वैष्णवी, रोहिणी, शुद्धा, खेदरी, मतंगजा, अंता, सुरा, सौवीरी, कलावती, नादावती, षड़मध्या, तीव्रा, और विशाला है।

कृष्णाष्टम्यादितिथयः स्वराः सप्त हितास्तथा ।

गान्धारे स्थापितास्तेन नारदेन यथाक्रमम् ॥96॥

पदच्छेदः-कृष्णाष्टम्यादि तिथयः स्वराः सप्त हिता स्तथा गान्धारे स्थापितास्तेन नारदेन यथाक्रमम्

अनव्य-कृष्णाष्टम्यादि-कृष्णपक्ष की अष्टमी आदि, तिथयः-तिथि से लेकर, स्वराः सप्त-स्वर सात, हिता स्तथा-कल्याणकारी रूप से स्थित होते है, गान्धारे-गान्धार में, स्थापितास्तेन-जिसकी वहँ पर स्थापना की गई हो, नारदेन-नारदजी के द्वारा, यथाक्रमम्-क्रम के अनुसार।

भावार्थ-पूर्व क्रम के अनुसार कृष्णपक्ष की अष्टमी तिथि से लेकर चतुर्दशी तक के सातों स्वर गान्धार ग्राम में कल्याणकारी रूप से स्थित होते है। जिसकी क्रम के अनुसार नारदजी के द्वारा वहँ पर स्थापना की गई है।

सप्त स्वरास्तथा सप्त मूर्च्छना याः प्रकीर्तिताः।

तानाश्चतुरशीतिस्तु ता एतस्मिन्निरूपिताः ॥97॥

पदच्छेदः-सप्त स्वरास् तथा सप्त मूर्च्छना याः प्रकीर्तिताः तानाश्चतुरशीतिस्तु ता एतस्मिन् निरूपिताः

अनव्य-सप्त स्वरास् तथा-और सात स्वरों में स्थित, सप्त मूर्च्छना-और सात प्रकार मूर्च्छनायें, याः-जो, प्रकीर्तिताः-पूर्व में वर्णित की गई है, तानाश्चतुरशीतिस्तु-वे चौरासी प्रकार से तानों में, ता एतस्मिन्-वे इसमें, निरूपिताः-जिसकी पूर्व में विस्तुत विवेचना हो चुकी है।

भावार्थ-सात स्वरों और सात प्रकार मूर्च्छनायें जिनका पूर्व में विस्तार से वर्णन किया गया है, उसमें चौरासी प्रकार की तानें कही गई है।

अग्निष्टोमादिनामानि तैरुक्ता नारदादिभिः ।

देवनारदयोगेन तत्पुण्योत्पादनाय ते (?) ॥98॥

पदच्छेदः-अग्निष्टोम आदि नामानि तै उक्ता नारदादिभिः देवनारद योगेन तत् पुण्यो उत्पादनाय ते (?)

अनव्य-अग्निष्टोमादिनामानि-अग्निष्टोम यज्ञ स्वर्ग प्राप्त करने की इच्छा से किया जाने वाला एक प्रकार का यज्ञ है, तैः-उनके द्वारा, उक्ता-कहे गये, नारदादिभिः-नारद आदि के द्वारा, देवनारदयोगेन-देवर्षि नारद जी नें योग के द्वारा, तत् पुण्यो-उस पुण्य के, उत्पादनाय ते-उत्पादित करनें के लिए वे लोग।

भावार्थ-देवर्षि नारद जी नें योग के द्वारा, वे लोग जो उस पुण्य को उत्पादित करनें के लिए अग्निष्टोम यज्ञ जिसकी उत्पत्ति ब्रह्माजी के पहले मुख से हुई, जिससे स्वर्ग प्राप्त हो, की इच्छा से किया जाने वाला एक प्रकार का यज्ञ है।

क्रममुन्द्रन्य्य तन्त्रीणां तानान्ये मूर्च्छनासु याः (?) ।

अपूर्णाश्चैव पूर्णाश्च कूटतानास्तु ते स्मृताः ॥99॥

पदच्छेदः-क्रम मुन्द्र अन्य्य तन्त्रीणां तानान्ये मूर्च्छनासु याः (?) अपूर्णाश्चैव पूर्णाश्च कूटतानास्तु ते स्मृताः

अन्वय-क्रममुन्द्रन्थ्य-क्रमानुसार ऐतिहासिक पुस्तकों में उद्ग्रंथित, तन्त्रीणां-तन्त्रियों के, तानान्ये-अन्य तानें, मूर्च्छनासु याः -जो मूर्च्छनाओं में, अपूर्णाश्चैव-जो पूरा न हो अर्थात अधूरा ही हो, पूर्णाश्च-और जो पूर्ण हो, कूटतानास्तु-लय को खींचकर झटके के साथ समय पर विराम देना और जिसका समयान्तराल अर्थ शीघ्र समझ में न आये, ते स्मृताः-वे जो स्मरण में बार-बार आये।

भावार्थ-क्रमानुसार ऐतिहासिक पुस्तकों में उद्ग्रंथित तन्त्रियों की अन्य तानें जो मूर्च्छनाओं में पूरा न हो अर्थात अधूरा ही हो और और जो पूर्ण भी हो, लय को खींचकर झटके के साथ समय पर विराम देना और जिसका समयान्तराल अर्थ शीघ्र समझ में न आये इसको बार-बार स्मरण में रखना चाहिए।

पूर्णाः पञ्चसहस्राणि त्रयस्त्रिंशच्च सोभयाः।
कथयन्ति प्रतिग्राममुपयोगेन धेनुना ॥100॥

पदच्छेदः-पूर्णाः पञ्च सहस्राणि त्रय स्त्रिंशच्च सोभयाः कथयन्ति प्रतिग्रामम् उपयोगेन धेनुना

अनव्य-पूर्णाः-पूर्ण, पञ्च-पाँच, सहस्राणि-दस को सौ से गुणा करने पर प्राप्त संख्या अर्थात हजार, त्रय-तीन, स्त्रिंशच्च-तैतीस, स-वह, उभयाः-दोनों, कथयन्ति-कही जाती है, प्रतिग्रामम्-प्रत्येक ग्राम में, संगीत में षड़ज, मध्यम और गांधार नामक तीन ग्राम निश्चित है। उपयोगेन-उपयुक्त अथवा उपयोगी,

भावार्थ-पूर्ण तानें पाँच हजार तथा अपूर्ण तानें मानी जाती है। जैसे दूध देनें वाली गाय उपयुक्त अथवा उपयोगी होती यह निश्चित है, उसी प्रत्येक ग्राम में संगीत में षड़ज, मध्यम और गांधार नामक तीन ग्राम भी निश्चित है।

नृणामुरसि मन्द्रस्तु वंशध्वनि तथा ध्वनिः (?) ।
स एव कण्ठे मध्यः स्यात्तारः शिरसि गीयते ॥101॥

पदच्छेदः-नृणाम् उरसि मन्द्रस्तु वंशध्वनि तथा ध्वनिः (?) स एव कण्ठे मध्यः स्यात् तार शिरसि गीयते

अनव्य-नृणाम्-मनुष्य के, उरसि-हृदय में, मन्द्रस्तु-मन्द्रसप्तक स्थान होता है, जिससे मन्द्रसप्तक की ध्वनि तीन ग्रामों सहित निकलती है, वंशध्वनि-वंश नामक ध्वनि, तथा ध्वनिः -जैसे ध्वनि, स एव कण्ठे-वह ही कंठ में, मध्यः -मध्यम सप्तक, स्यात् तार-तार सप्तक, शिरसि गीयते-सिर से गाया जाता है।

भावार्थ-शिव ही ध्वनि का वंश है, जो प्रकृति से एक ध्वनि के रूप में प्रकट हुए है। इसको इस प्रकार भी कह सकते है कि कंठ से शिव ध्वनि अर्थात जिससे मन्द्रसप्तक की ध्वनि तीन ग्रामों सहित निकलती है। कंठ से वंश नामक मध्यम सप्तक और सिर से तार सप्तक गाया जाता है।

दक्षिणावृत्ति चित्रा च वृत्तिस्तानास्वयं विधिः ।
प्रधानं गीतमुभयं वाद्यं चेति यथाक्रमम् ॥102॥

पदच्छेदः-दक्षिणावृत्ति चित्रा च वृत्तिस् ताना स्वयं विधिः प्रधानं गीतमुभयं वायं चेति यथाक्रमम्

अनव्य-दक्षिणावृत्ति-इस प्रकार घूमना है कि घूमने की दिशा दाहिने हाथ (दक्षिण हस्त) की तरफ हो, चित्रा-चौदहवें मुहूर्त को चित्रा का मुहूर्त मान लेना चाहिए, चाहे वहाँ और कोई दूसरा नक्षत्र भी हो, च-और, वृत्तिस्तानास्वयं-वृति और तान स्वयं ही, विधिः -ब्रम्हा अर्थात विधि का विधान, प्रधानं-प्रधान, गीतमुभयं-दोनों गीत, वाद्यं-वाद्य, चेति-और यह, यथाक्रमम्-क्रमानुसार

भावार्थ-तीनों सप्तकों की क्रमशः बाइस, और तीन दक्षिणी, वृत्ति चित्र और वृत्तियाँ (22 X 3 = 66 छाँछट) श्रुतियाँ होती है। उसमें यह विधि का विधान है, कि वाद्य उसके क्रमानुसार दोनों ही में गीत का प्राधान्य है ।

वाद्यं यद्गीतवृत्तिस्तं (?) समगीतं प्रचक्षते।।

वृत्तयोऽथ प्रयोगज्ञैः शुष्कं तदभिधीयते ॥103॥

पदच्छेदः-वाद्यं यद् गीत वृत्ति स्तं (?) समगीतं प्रचक्षते वृत्तयोऽथ प्रयोगज्ञैः शुष्कं तद भिधीयते।

अनव्य-वाद्यं-वाद्य में, यद् गीत-जो गीत, वृत्ति स्तं-वृत्ति में स्थित, समगीतं-मधुर ध्वनियों या स्वरों का विशिष्ट नियमों के अनुसार लय में होनेवाला प्रस्फुटन, प्रचक्षते-वह कारक जो काव्य की शोभा बढ़ाते है अलंकार कहलाते है, वृत्तयोऽथ-एक प्रकार का वृत्ति चित्र, प्रयोगज्ञैः -प्रयोग के जाननें वालों के द्वारा, शुष्कं-उसे शुष्क कहा जाता है, तदभिधीयते-उसे नाम दिया जाता है।

भावार्थ-जो गीत की वृत्ति में स्थित वाद्य में (गायक के साथ करनें का) अगीत में ही प्रयुक्त किया जाय वाद्य विषयक अथवा उपकरण सम्बन्धी (INSTRUMENTAL) तो वैचित्रय अर्थ प्रयोग के जाननें वालों के द्वारा उसे शुष्क कहा जाता है। सूखा बजना या केवल वाद्य, गीत की लय के साथ जो एक प्रकार का वृत्ति चित्र (आवृत्ति चित्रण) बनता है वह न होनें से इस सूखे को वैचित्र्यार्थ प्रयोग कहते है।

साधारणेति विज्ञेया स्वरो जात्युपलक्ष्यते।

स्वरमध्ये तयोः पूर्व तत्काकल्यां पुरःसराः ॥104॥

पदच्छेदः-साधारणेति विज्ञेया स्वरो जात्य उपलक्ष्यते स्वरमध्ये तयोः पूर्व तत् काकल्यां पुरःसराः

अनव्य-साधारणेति-साधारण में, विज्ञेया-जानना चाहिये, स्वरो-स्वर, जात्य-जाति के, उपलक्ष्यते (उपलभ्यते)-उपलक्षण माना जा सकता है, स्वरमध्ये-स्वरों के मध्य में उपलक्षण से दो प्रकार होते है, तयोः -उनमें से, पूर्व-पहला, तत्-उस, काकल्यां-स्वरतंत्रियों के मध्य स्थित वायुमार्ग 'काकल' कहलाता है तथा 'काकल' स्थान से उच्चारित ध्वनि काकल्य कहलाती है, पुरःसराः -आगे रहनें वाली गति।

भावार्थ-साधारण में स्वर और जाति के उपलक्षण से दो प्रकार होते है, ऐसा माना जाता है। उन दोनों में पहला स्वर साधारण काकली निषाद और अन्तर गान्धार का होता है।

षड्जश्च ऋषभश्चैव धैवते च निषादके (?) ।
षड्जादिश्चैवरी चैव ततो वै षड्जकैशिकी ॥105॥

पदच्छेदः-षड्जश्च ऋषभ श्चैव धैवते च निषादके (?) षड्ज आदि श्चैवरी चैव ततो वै षड्ज कैशिकी

अनव्य-षड्जश्च-षड्ज सा, ऋषभश्चैव-ऋषभ री, धैवते-धैवत ध, च-और, निषादके-निषाद नि, षड्जादिश्चैवरी-षड्ज आदि श्चैवरी, चैव ततो-बाद में, वै-वह अर्थात स्वामी, षड्जकैशिकी-सा स्वर, नाटक की चार वृत्तियों में से एक यह वृत्ति श्रृंगार रस प्रधान रूप से नाटक आदि में होती है । इसमें नृत्य, गीत, वाद्य और भोग विलास का अधिक वर्णन किया जाता है । ऐसे नाटकों में स्त्रीपात्र अधिक होते है ।

भावार्थ-षड्ज सा, ऋषभश्चैव-ऋषभ री, धैवते-धैवत ध, च-और, निषादके-निषाद नि, षड्जादिश्चैवरी-षड्ज आदि श्चैवरी बाद में वह अर्थात स्वामी या प्रधानरूप से षड़ज ग्राम सा (षड़ज) से आरंभ करके सा रे ग म प ध नि जो सात स्वर हों, उस स्वर समूह अर्थात स रि ग म प ध नि को षड़ज ग्राम कहा जाता है, सप्त-षड्ज से निषाद तक सातों स्वरों के समूह को सप्तक कहते है। चार वृत्तियों में से एक यह वृत्ति श्रृंगार रस प्रधान रूप से नाटक आदि में होती है । इसमें नृत्य, गीत, वाद्य और भोग विलास का अधिक वर्णन किया जाता है । ऐसे नाटकों में स्त्रीपात्र अधिक होते है।

षड्जमध्या तथा चैव षड्जग्रामसमाश्रिताः ।
अथ रागान्प्रवक्ष्यामि मध्यमग्रामसंश्रयान् ॥106॥

पदच्छेदः-षड्ज मध्या तथा चैव षड्जग्राम समाश्रिताः अथ रागान् प्रवक्ष्यामि मध्यमग्राम संश्रयान्

अनव्य-षड्जमध्या-षड्ज के मध्य में, तथा चैव-वैसे ही, षड्जग्रामसमाश्रिताः-षड्ज ग्राम पर आश्रित रहना,अथ रागान्-इसके पश्चात रागों को, प्रवक्ष्यामि-कहूंगा, मध्यमग्राम-मध्यम ग्राम पर, संश्रयान्-सहारा लेनेवाला।

भावार्थ-षड्ज, षड्ज के मध्य तथा वैसे ही षड्ज ग्राम में आश्रित रहती है, इसके पश्चात रागों के सम्बन्ध को कहूंगा, संगीत की षड्जग्राम से संबंध रखने वाली आठ जातियों में से आठवीं जाति । इसका अपर नाम षड्जमध्या है । #संगीत की षड्जग्राम से संबंध रखने वाली आठ जातियों में से आठवीं जाति का अपर नाम षड्जमध्या है । *षड्जग्राम-इस ग्राम में प्रथम स्वर षड्ज है। इस ग्राम में षड्ज स्वर की चार श्रुतियाँ है, ऋषभ की तीन, गांधार की दो, मध्यम की चार, पंचम की चार, धैवत की तीन तथा निषाद की दो श्रुतियाँ है। इस आधार पर 22 श्रुतियोँ मे से षड्ज चौथी श्रुति पर स्थित है।

ऋषभ सातवीं पर, गांधार नौवीं पर, मध्यम तेरहवीं पर, पंचम सत्रहवीं पर, धैवत बीसवीं पर तथा निषाद बाइसवीं श्रुति पर स्थित है।

पद्मपुराण 24.15 हरिवंशपुराण 19.175

*https://www.uou.ac.in/sites/default/files/slm/BAMV-201.pdf

षड्जग्राम-इस ग्राम में प्रथम स्वर षड्ज है। इस ग्राम में षड्ज स्वर की चार श्रुतियाँ है, ऋषभ की तीन, गांधार की दो, मध्यम की चार, पंचम की चार, धैवत की तीन तथा निषाद की दो श्रुतियाँ है। इस आधार पर 22 श्रुतियोँ मे से षड्ज चौथी श्रुति पर स्थित है। ऋषभ सातवीं पर, गांधार नौवीं पर, मध्यम तेरहवीं पर, पंचम सत्रहवीं पर, धैवत बीसवीं पर तथा निषाद बाइसवीं श्रुति पर स्थित है।

शुद्धमध्यस्तथा शुद्धशुद्धतारादिशुद्धकाः।

गान्धारमध्यमा चैव गान्धारादिव्यवस्थिताः॥107॥

पदच्छेदः-शुद्ध मध्य स्तथा (शुद्ध मध्य सप्तक)शुद्ध शुद्धता आदि शुद्धकाः गान्धार मध्यमा चैव गान्धार आदि दिव्यअवस्थिताः

अनव्य-शुद्धमध्यस्तथा अथवा शुद्धमध्यसप्तक-सामान्य गायन-वादन का अधिकतर प्रदर्शन इसी सप्तक में किया जाता है। मन्द्र सप्तक के स्वरों से इस सप्तक के स्वरों की ध्वनि दुगुनी ऊँची होती है। सात शुद्ध स्वरों के साथ उनके पाँच विकृत रूप भी सप्तक के अन्तर्गत माने जाते है, शुद्ध-जिससे उनका शुद्ध उच्चारण किया जा जाये, शुद्धता आदि-समय के विचार से जो आरंभ में हुआ हो अथवा शुद्ध होने का भाव या धर्म, शुद्धकाः -व्यक्ति जिसका धार्मिक या नैतिक दृष्टि से पतन न हुआ हो, तारसप्तक में वो स्वर होते है जिनको गाने में बहुत ऊंची आवाज़ में गाना पड़ता है, गान्धारमध्यमा चैव-गान्धार और मध्यमा, गान्धारादिव्यवस्थिताः -गान्धार आदि में दिव्य रूप से अवस्थिताः -विद्यमान है।

भावार्थ-सामान्य गायन-वादन का अधिकतर प्रदर्शन इसी सप्तक में किया जाता है। मन्द्र सप्तक के स्वरों से इस सप्तक के स्वरों की ध्वनि दुगुनी ऊँची होती है। सात शुद्ध स्वरों के साथ उनके पाँच विकृत रूप भी सप्तक के अन्तर्गत माने जाते है, जिससे उनका शुद्ध उच्चारण किया जा जाये, शुद्धता आदि समय के विचार से जो आरंभ में हुआ हो अथवा शुद्ध होने का भाव या धर्म और साथ ही व्यक्ति जिसका धार्मिक या नैतिक दृष्टि से पतन न हुआ हो। तारसप्तक में वो स्वर होते है जिनको गाने में बहुत ऊंची आवाज़ में गाना पड़ता है, गान्धार और मध्यमा आदि में दिव्य रूप से विद्यमान है।

पञ्चमी रागगान्धारी तथा गान्धारपञ्चमी।

पञ्चमोदिच्यवा चैव सन्धयन्ति तथैव च ॥108॥

पदच्छेदः-पञ्चमी राग गान्धारी तथा गान्धार पञ्चमी पञ्चम आदिच्यवा चैव सन्धयन्ति तथैव च

अनव्य-पञ्चमी-पञ्चम, रागगान्धारी-इसको रक्तगान्धारी भी कहते है, यह पाँच-पाँच स्वर अंश वाली गान्धार पञ्चमी है, इसमें कोमल ऋषभ का प्रयोग किया जाता है, गान्धारपञ्चमी-एक एक स्वर अंश वाली गान्धार पञ्चमी, पञ्चमोदिच्यवा चैव-पंचमी उदीचि तथा, सन्धयन्ति तथैव च-उस प्रकार साधती है।

भावार्थ-गान्धारी पञ्चमी तथा गान्धार पञ्चमी यह जातियाँ ऋषभ गोत्र में उत्पन्न ऋषभवंशीय होती है, इसको रक्तगान्धारी भी कहते है, यह पाँच-पाँच स्वर अंश वाली गान्धार पञ्चमी है, इसमें कोमल ऋषभ का प्रयोग किया जाता है। एक एक स्वर अंश वाली गान्धार पञ्चमी को उसी प्रकार साधती है।

कूर्मारवा च विज्ञेया तथानी (कार्मारवी च विज्ञेया तथान्ध्री) कैशिकी तथा।।

उच्चनीचा तथारूपा विरूपा विमतायतिः ॥ 109॥

पदच्छेदः-कूर्मारवा च विज्ञेया तथानी कैशिकी तथा उच्चनीचा तथा रूपा विरूपा विमतायतिः

अनव्य-कूर्मारवा-कछुआ की तरह आवाज करनें वाला, च-और, विज्ञेया-जो जानने, सीखने, या समझने के योग्य है, तथानी-तदनुरूप अथवा उसी के जैसा, कैशिकी तथा-नाटक की चार वृत्तियों में से एक वृत्ति जो श्रृंगार रस प्रधान नाटकों में होती है । इसमें नृत्य, गीत, वाद्य और भोग, उच्चनीचा-कहीं ऊँचा और कहीं नीचा, तथारूपा-उसी के जैसा, विरूपा-कुरुप या बदसूरत, विमतायतिः -जो विपरीत सिद्धांत संयत न हो।

भावार्थ-नाटक की चार वृत्तियों में से एक वृत्ति जो श्रृंगार रस प्रधान नाटकों में होती है तथा इसमें नृत्य, गीत, वाद्य और भोग, जिसमें कहीं ऊँचा और कहीं नीचा कुरुपता या बदसूरत उसी के जैसा, जो विपरीत तथा सिद्धांत संयत न हो।

जातयोऽष्टादश ह्येवं ब्रह्मणा गदिताः पुरा।

तद्विदित्वा नारदेन गीतरूपाणि वर्णयन् (?) ॥ 110 ॥

पदच्छेदः-जातयोऽष्टादश ह्येवं ब्रह्मणा गदिताः पुरा। तद् विदित्वा नारदेन गीतरूपाणि वर्णयन् (१)

अनव्य-जातयोऽष्टादश-अठ्ठारह जातियों, ह्येवं-इसी प्रकार, ब्रह्मणा-ब्रह्मा के द्वारा, गदिताः पुरा-पहले से ही कही गई, तद्विदित्वा-उसे जानकर, नारदेन-नारद नें, गीतरूपाणि-गीत रूपों को, वर्णयन्-वर्णित किया या वर्णन करते हुये कहा है।

भावार्थ-इस प्रकार ब्रह्मा जी के द्वारा पहले से ही कही गई ठ्ठारह जातियों के बारे में नारद जी नें गीत के रूपों को वर्णित किया अथवा वर्णन करते हुये कहा है।

स्वरप्रकृतिविकृतयः।

स्वर की प्रकृति तथा विकृति।

प्रकृती द्वे विजानीयात्स्वरतन्त्रेषु संस्थिते ।

तत्रापि च तयोर्मध्ये षड्जादि च निषादकम् ॥111॥

पदच्छेदः-प्रकृती द्वे विजानीयात् स्वरतन्त्रेषु संस्थिते तत्रापि च तयोर्मध्ये षड्ज आदि च निषादकम्

अनव्य-प्रकृती द्वे-दो प्रकृतियाँ, विजानीयात्-जाननी चाहिये, स्वरतन्त्रेषु संस्थिते-स्वरतन्त्रियों में स्थित, तत्रापि च-और वहाँ भी, तयोर्मध्ये-उनके बीच में, षड्जादि च-और षड्ज आदि में, निषादकम्-निषाद।

भावार्थ-इस प्रकार स्वरतन्त्रियों में स्थित षड्ज और निषाद की दो प्रकृतियाँ उनके बीच में जाननी चाहिये।

या सा प्रकृतिर्विज्ञेया भरतेन च चर्चिता।

विकृतिश्च निषादादिषडान्तस्वरपूरिता ॥112॥

पदच्छेदः-या सा प्रकृति र्विज्ञेया भरतेन च चर्चिता। विकृतिश्च निषाद आदि षड्जा अन्त स्वर पूरिता

अनव्य-या-पौने चार मात्राओं का एक ताल जिसमें तीन अघात और एक खाली रहता है, सा-समान अथवा तुल्य, प्रकृति-मूल या प्रधान गुण जो सदा बना रहे, र्विज्ञेया-जानना चाहिये, भरतेन च चर्चिता-भरत मुनि के द्वारा चर्चा में लाया गया है, विकृतिश्च-और विकृत होने का भाव, निषाद-संगीत के सात स्वरों में से अंतिम स्वर जो सबसे ऊँचा है,अर्थात नि है, आदि-इस मत में 'ब्रह्म' के अतिरिक्त सभी पदार्थ असत्य है-आदि, अन्त स्वर पूरिता-समाप्ति पर स्वर को परिपूर्णता प्रदान करता है।

भावार्थ-पौने चार मात्राओं का एक ताल जिसमें तीन अघात और एक खाली रहता है के समान मूल या प्रधान गुण जो सदा बना रहे, यह भरत मुनि के द्वारा चर्चा में लाया गया है। और विकृत होने का भाव संगीत के सात स्वरों में से अंतिम स्वर जो सबसे ऊँचा है,अर्थात नि है, को समाप्ति पर स्वर को परिपूर्णता प्रदान करता है। यह मत 'ब्रह्मस्वरूप' है, के अतिरिक्त सभी असत्य है।

तन्त्रीप्रकृतिविकृतयः ।

सितार, बीन, सारंगी आदि-आदि, मूल या प्रधान गुण जो सदा बना रहे, जिसमें किसी प्रकार का विकार आ गया हो

द्वितीया प्रकृतिः संज्ञा कथ्यते नारदेन च ।

षड्जादयोपश्रुतयश्चत्वारो गुणसंज्ञकाः (?) ॥113॥

पदच्छेदः-द्वितीया प्रकृतिः संज्ञा कथ्यते नारदेन च षड्जादय उपश्रुतयच् चत्वारो गुणसंज्ञकाः

अनव्य-द्वितीया-दूसरा पक्ष, प्रकृतिः -जिसमें किसी प्रकार का विकार आ गया हो, संज्ञा कथ्यते-संकेत करते हुऐ कहना, नारदेन च-और नारद जी के द्वारा, षड्जादय-संगीत के सात स्वरों में से पहला स्वर जो साधारणतः 'सा' कहलाता है। संगीत शास्त्र के अनुसार इस स्वर का उच्चारण नासा, कण्ठ, उर, तालु, जीभ और दाँतों के सम्मिलित प्रयत्न से होता है इसलिए इसका नाम षडज् पड़ा है, उपश्रुतयच्-सुननें की एक सीमा जहाँ तक सुना जा सके और सुनी जानी वाली दिव्य वाणी जिसे देवताओं द्वारा भविष्यकथन करना कहा जाता है, चत्वारो-चार प्रकार से, गुणसंज्ञकाः -वह भाव जो किसी शब्द का प्रयोग प्रायः विशेष बनाने में शब्द के अंत में होता है।

भावार्थ-दूसरा पक्ष जिसमें किसी प्रकार का विकार आ गया हो, वहाँ नारद जी के द्वारा यह संकेत करते हुऐ कहना कि संगीत के सात स्वरों में से पहला स्वर जो साधारणतः 'सा' कहलाता है। संगीत शास्त्र के अनुसार इस स्वर का उच्चारण नासा, कण्ठ, उर, तालु, जीभ और दाँतों के सम्मिलित प्रयत्न से होता है इसलिए इसका नाम षडज् पड़ा है, सुननें की एक सीमा जहाँ तक सुना जा सके और सुनी जानी वाली दिव्य वाणी जिसे देवताओं द्वारा भविष्यकथन करना कहा जाता है। चार प्रकार की उपश्रुितयों के द्वारा वह भाव जो किसी शब्द का प्रयोग प्रायः विशेष बनाने में शब्द के अंत में होता है।

तेषु सर्वेषु वर्तन्ते वाद्यादयः प्रकल्पिताः ।

अनुवादि च वाद्यन्ताविततं कथ्यते बुधैः ॥114॥

पदच्छेदः-तेषु सर्वेषु वर्तन्ते वाद्यादयः प्रकल्पिताः अनुवादि च वाद्य अन्तावितत कथ्यते बुधैः

अनव्य-तेषु सर्वेषु-उन सबमें, वर्तन्ते-लगे हुए किया जा रहा है, वाद्यादयः -वाद्य आदि, प्रकल्पिताः -कहे गये है, अनुवादि-अनुवाद किया हुआ, च-और, वाद्यन्तावितत-वाद्ययन्त्र का अन्त तक विस्तार करनें वाले, कथ्यते बुधैः -विद्वानों द्वारा कहे जाते है।

भावार्थ-उन सब रागों में वाद्य, अनुवाद्य, तथा अंत तक विस्तार करनें वाले वाद्यों का उल्लेख विद्वानों द्वारा इसी क्रम में कहे जाते है।

इति श्रीनारदकृतौ सङ्गीतमकरन्दे सप्तस्वरोत्पत्तिपञ्चनादोत्पत्तिप्रकृतिनिरूपणं नाम प्रथमपादः।

श्री नारद जी द्वारा संपादित सङ्गीत मकरन्द में सात स्वरों की उत्पत्ति, पाँच नादों की उत्पत्ति तथा प्रकृति का निरूपणं नाम का प्रथमपादः पूर्ण होता है।

सङ्गीताध्याये द्वितीयः पादः ।

अथ सङ्गीतदेहनिरूपणम् ।

पदच्छेदः -अथ सङ्गीत देह निरूपणम् ।

अन्वय-अथ-एक मंगलसूचक शब्द जिससे प्राचीन काल में लोग किसी ग्रंथ या लेख का आरंभ करते थे । सङ्गीत-नृत्य, गीत और वाद्य का समाहार अर्थात वह कार्य जिसमें नाचना, गाना और बजाना तीनों ही विद्धमान हों । देह-शरीरिक रूप, आकृति आदि। निरूपणम्-विस्तृत विवेचना।

भावार्थ-अथ संगीत के नृत्य, गीत और वाद्य का समाहार अर्थात वह कार्य जिसमें नाचना, गाना और बजाना तीनों ही विद्धमान हों, के शरीरिक रूप की संरचना तथा आकृति आदि की विस्तृत विवेचना प्रस्तुत की जा रही है।

चैतन्यं सर्वभूतानां विधृतं जगदात्मना।
नादब्रह्म तदानन्दमद्वितीयमुपास्महे ॥1॥

पदच्छेदः-चैतन्यं सर्वभूतानां विधृतं जगदात्मना नादब्रह्म तद् आनन्दम् द्वितीय द्वितीयमुपास्महे

अनव्य-चैतन्यं-चितस्वरुप आत्मा, सर्वभूतानां-सम्पूर्ण प्राणियों के, विधृतं-धारण या ग्रहण किया हुआ है, जगदात्मना-जगत को आत्मरूप से आत्मसारित करनें में पूर्ण सक्षम, नादब्रह्म-ब्रह्म अर्थात् ईश्वर का रूप कहते है। ब्रह्माण्ड के सम्पूर्ण जड़-चेतन में जो नाद व्याप्त है वह ब्रह्म अर्थात् ईश्वर का रूप कहते है, तद्-वह, आनन्दम्-आनंदित करनें वाला, द्वितीयमुपास्महे-हम उस अद्वितीय ब्रह्म की उपासना करते है।

भावार्थ-सम्पूर्ण प्राणियों में चितस्वरुप जो जगत को आत्मरूप से आत्मसारित करनें में पूर्ण सक्षम आनंदित करनें वाला ब्रह्म अर्थात् जिसको ईश्वर का रूप कहते है। ब्रह्माण्ड में सम्पूर्ण जड़-चेतन में जो नाद के रूप में व्याप्त है, हम उस अद्वितीय ब्रह्म की उपासना करते है।

गीतस्वरूपं वक्ष्यास्यतिविचित्रं मनोहरम् ।
राज्ञां कौतुकसंलापं विदुषां ज्ञानहेतुकम् ॥2॥

पदच्छेदः-गीतस्वरूपं वक्ष्या स्यति विचित्रं मनोहरम् राज्ञां कौतुक संलापं विदुषां ज्ञान हेतुकम्

अन्वय-गीतस्वरूपं-गीत का स्वरूप, वक्ष्या-के समक्ष, स्यति-कदाचित्, विचित्रं-विलक्षण या अद् भुत होने का भाव, मनोहरम्-चित्त को आकर्षित करनेवाला, राज्ञां-राजाओं, कौतुक-कुतूहल अथवा आश्चर्य, संलापं-परस्पर प्रेमपूर्ण वार्तालाप या कथोपकथन, विदुषां-विद्वानों के लिए, ज्ञानहेतुकम्-वस्तुओं और विषयों की वह भावना जो मन या आत्मा में ज्ञान की विशेषताओं के माध्यम से समझा जा सकता है ।

भावार्थ-नारद जी नें कहा,विचित्र मनोहर गीतस्वरूप और राजाओं की इच्छा पूर्ति करनें वाला तथा विद्वानों के लिए ज्ञान कारक संगीत के स्वरूप को कहूंगा।

तत्स्वरूपं तन्ननादि चालापं स्वरगर्भजम् ।

प्रकृतिशबलं ब्रह्म वीणारूपं तदुच्यते ॥3॥

पदच्छेदः-तत् स्वरूपं तन्नन आदि च आलापं स्वर गर्भजम् प्रकृतिशबलं ब्रह्म वीणारूपं तद् उच्यते

अनव्य-तत्स्वरूपं-उस स्वरूप को, तन्ननादि-तन्त्री वाध्य आदि, च आलापं-संगीत के सात स्वरों की साधना और सुरों को खींचना, स्वरगर्भजम्-स्वर के गर्भ से उत्पन्न, प्रकृतिशबलं-स्वभाव से बलशाली, ब्रह्म-सृष्टिकर्ता अथवा विधाता, वीणारूपं-वीणा स्वरूप, तदुच्यते-उसे कहा जाता है।

भावार्थ-उस नाद और आलाप को जो स्वर के गर्भ से उत्पन्न होता है तथा वीणा स्वरूप में स्थित रहता है, वह स्वभाव से सृष्टिकर्ता अथवा विधाता के समान बलशाली उसे कहा जाता है।

तच्चैतन्यं समाश्रित्य व्यवहारस्तु भिन्नतः ।

तदेव वीणाशबलं नारदाय ददौ स्वभूः ॥4॥

पदच्छेदः-तत् चैतन्यं समाश्रित्य व्यवहारस्तु भिन्नतः तदेव वीणाशबलं नारदाय ददौ स्वभूः

अनव्य-तच्चैतन्यं-उस चैतन्य को, समाश्रित्य-आश्रित करके, व्यवहारस्तु-व्यवहार से, भिन्नतः - असमानता, तदेव-उसे ही, वीणाशबलं-बलशाली वीणा के रूप में, स्वभूः-ब्रम्हा जी ने, नारदाय ददौ-नारद को दिया।

भावार्थ-ब्रम्हा जी नें उस चैतन्य को आश्रित करके व्यवहार में असमानता वाली उस बलशाली वीणा के रूप में नारद को दिया।

वीणादेहं प्रवक्ष्यामि तदङ्गानि यथाक्रमम्।

शिरांसि त्रीणि देहस्य ग्रामत्रयमुदाहृतम् ॥5॥

पदच्छेदः-वीणादेहं प्रवक्ष्यामि तद् अङ्गानि यथाक्रमम् शिरांसि त्रीणि देहस्य ग्रामत्रयम् उदाहृतम्

अनव्य-वीणादेहं-वीणा के बाह्य रचना अर्थात वीणा के देह को, प्रवक्ष्यामि-बता रहा हूँ, तदङ्गानि-उसके अंगों को, यथाक्रमम्-क्रम के अनुसार, शिरांसि-सिर से, त्रीणि-तीन, देहस्य-देह का, ग्रामत्रयम्-तीन ग्रामों का, उदाहृतम्-उदाहरण दिया गया

भावार्थ-वीणा के बाह्य रचना अर्थात वीणा के देह को तथा उसके अंगों को क्रम के अनुसार सिर से लेकर सम्पूर्ण देह का तथा उनमें व्याप्त तीन ग्रामों में रहनें वाले उस नाद को उदाहरणस्वरूप बता रहा हूँ।

मन्द्रमध्यमताराख्यमुखानि त्रीणि कथ्यते (?) ।

सानुपादाय चत्वारो गीतजिह्वा प्रकीर्तिता ॥6॥

पदच्छेदः-मन्द्र मध्यम ताराख्य मुखानि त्रीणि कथ्यते (?)सानुपादाय चत्वारो गीतजिह्वा प्रकीर्तिता

अनव्य-मन्द्र मध्यम-संगीत में स्वरों के तीन भेदों में से एक गंभीर ध्वनि इसके स्वर मध्य से अवरोहित होते है तथा जो दो विपरीत सीमाओं के बीच में हो, ताराख्य-तार अथवा तन्त्र, मुखानि-मुख, त्रीणि कथ्यते-तीन कहे जाते है, सानुपादाय-अपनें चरणों के अनुसार, चत्वारो-चार, गीतजिह्वा-जिह्वा गीत, प्रकीर्तिता-कहे जाते है।

भावार्थ-संगीत में स्वरों के तीन भेदों में से एक गंभीर ध्वनि इसके स्वर मध्य से अवरोहित होते है तथा जो दो विपरीत सीमाओं के बीच में हो अर्थात मन्द्र, मध्यम और तार ये मुख कहे जाते है। अपनें चार चरणों के अनुसार, यह गीत जिह्वा से कहे अथवा गाये जाते है।

वादी स्वराणां राजा स्यान्मन्त्री संवादिरुच्यते।
स्वरो विवादी वैरी स्वादनुवादी च भृत्यवत्॥7॥

पदच्छेदः-वादी स्वराणां राजा स्यान्मन्त्री संवादिरुच्यते। स्वरो विवादी वैरी स्वादनुवादी च भृत्यवत्

अनव्य-वादी-राग का मुख्य स्वर, स्वराणां-संगीत में स्वरों का वह समूह जो शब्दों को जिसकी कोमलता या तीव्रता अथवा उतार चढ़ाव आदि को सुनते ही सहज में अनुमान हो सके, राजा- किसी राज्य पर राज करने वाला राजा के समान कहलाता है, स्यान-सायना अथवा ज्ञाता, मन्त्री-परामर्श देनेवाला, संवादि-संवाद करनेवाला, रुच्यते-रुचिकर कुदरती गुणो से युक्त,स्वरो-बजनें वाले उपरणों से उत्पन्न ध्वनिसमूह या गीत को यंत्र और मनुष्य के गले से निकले हुए स्वर कहते है, विवादी-विवाद को उत्तपन्न करने वाला, वैरी-शत्रु, स्यात-होता है,अनुवादी-पीछे-पीछे बोलने वाला, च-और, भृत्यवत्-भाई की तरह होता है।

भावार्थ-राग का मुख्य स्वर किसी राज्य पर राज करने वाला राजा के सामान होता है, संगीत में स्वरों का वह समूह शब्द जिसकी कोमलता या तीव्रता अथवा उतार चढ़ाव आदि को सुनते ही सहजता का अनुमान हो सके, उसी प्रकार जैसे सायना मंत्री ज्ञाता अर्थात परामर्श देनेवाला संवाद रुचिकर कुदरती गुणो से युक्त होता है, उसी प्रकार बजनें वाले वाध्य उपरणों से उत्पन्न ध्वनिसमूह या गीत को यंत्र और मनुष्य के गले से निकले हुए स्वर कहते है, परंतु सही तारतम्य ना होने पर कुछ भाई की तरह पीछे-पीछे बोलने वाले स्वर शत्रु के समान ही विवाद को उत्तपन्न करने वाले होते है।

तेषां मार्गास्तु चरवार: सुषिरं घनतन्तुवत् ।
देशी शुद्धमृदङ्गाद्या उपाङ्गा अङ्गमार्गकाः ॥8॥

पदच्छेदः-तेषां मार्ग अस्तु चरवार: सुषिरं घन तन्तुवत् देशी शुद्ध मृदङ्ग आद्या उप अङ्गा मार्गकाः अङ्गमार्गकाः

अनव्य-तेषां-उनके, मार्गास्तु-ध्वनि की उत्पत्ति के आधार पर संगीत वाद्यों को चार मुख्य वर्गों में विभाजित किया गया है,जैसे- तत् वाद्य अथवा तार वाद्य, सुषिर वाद्य अथवा वायु वाद्य, अवनद्व वाद्य और चमड़े के वाद्य और घन वाद्य या आघात वाद्य (जिन्हें समस्वर स्तर में करने की आवश्यकता नहीं होती है), देशी शुद्धमृदङ्गाद्या-मृदंग आदि एक बहुत ही प्राचीन वाद्य है। इनको मिट्टी से ही बनाया जाता था, उपाङ्गा-उप अङ्ग जैसे-खाल, स्याही और रस्सी, अङ्गमार्गकाः -कोई ऐसा माध्यम या साधन जिसका अनुसरण,पालन या व्यवहार करने से कोई अभिप्राय य कार्य सिद्ध होता हो।

भावार्थ-ध्वनि की उत्पत्ति के आधार पर संगीत वाद्यों को चार मुख्य वर्गों में विभाजित किया गया है,जैसे- तत् वाद्य अथवा तार वाद्य, सुषिर वाद्य अथवा वायु वाद्य, अवनद्व वाद्य और चमड़े के वाद्य और घन वाद्य या आघात वाद्य (जिन्हें समस्वर स्तर में करने की आवश्यकता नहीं होती है), मृदंग आदि एक बहुत ही प्राचीन वाद्य है। इनको मिट्टी से ही बनाया जाता था, अङ्ग जैसे-खाल, स्याही और रस्सी आदि, कोई ऐसा माध्यम या साधन जिसका अनुसरण,पालन या व्यवहार करने से कोई अभिप्राय य कार्य सिद्ध होता हो।

सप्तस्वराणि नेत्राणि गीतदेहस्य सप्त वै। ।
द्वाविंशच्छ्रुतयो जाता नारदेन विवक्षिताः ॥9॥

पदच्छेदः-सप्त स्वराणि नेत्राणि गीत देहस्य सप्त वै द्वाविंशति च छ्रुतयो (श्रुतियों) जाता नारदेन विवक्षिताः

अनव्य-सप्तस्वराणि-संगीत के जो सात स्वर-स, ऋ, ग, म, प, ध, नि है, नेत्राणि-आँख, गीतदेहस्य-गीतरूपी देह, सप्त वै-वह भी सात है, द्वाविंशच्छ्रुतयो-और श्रुतियों जो संख्या में बीस और दो हो अर्थात बाईस, जाता-उत्पन्न हुयीं है, नारदेन-नारद जी नें, विवक्षिताः -विस्तार से कही है।

भावार्थ-नारद जी नें विस्तार पूर्वक कहा है कि गीतरूपी-संगीत रूपी देह, जो सात स्वर स, ऋ, ग, म, प, ध, नि है वह गीतरूपी-संगीत की आँख अथवा नेत्र के समान है। और उनकी श्रुतियों की संख्या बाईस होती है।

षड्जमध्यमपञ्चैते (?) चत्वारः श्रुतयो* मताः ।
निषादगान्धारौ द्वे द्वे त्रिस्त्रि ऋषभधैवतौ ॥10॥

पदच्छेदः-षड्ज मध्यम पञ्च यते (?) चत्वारः श्रुतयो मताः निषाद गान्धारौ द्वे द्वे त्रिस्त्रि ऋषभ धैवतौ

अनव्य-षड्ज-"स" संगीत के सात स्वरों यह प्रथम स्वर है, "म" संगीत के सात स्वरों में से चौथा स्वर है, पञ्चैते-"प" संगीत के सात स्वरों यह पाँचवाँ स्वर है,किसी विषय विशेष में मुख्यता प्राप्त करनेवाला, यते-जो, चत्वारः -चार प्रकार, श्रुतयो-जो सृष्टि के आदि में ब्रह्मा या कुछ महर्षियों द्वारा

सुना गया और जिसे परंपरा से ऋषि सुनते हों, मताः -ऐसा मत है, निषाद-"नि" संगीत के सात स्वरों यह सातवाँ स्वर है, गान्धारौ-"ग" संगीत के सात स्वरों यह तीसरा स्वर है, द्वे द्वे-क्रमशः दो दो श्रुतियाँ होती है, त्रि स् त्रि -तीन-तीन श्रुतियाँ होती है, इसका उच्चारण स्थान दंत है, ऋषभ-"र" संगीत के सात स्वरों यह द्वितीय स्वर है, इसका उच्चारण जीभ के अगले भाग से होता है, धैवतौ-धैवत-"ध" संगीत के सात स्वरों यह छटवाँ स्वर है।

भावार्थ-षड्ज में चार, ऋषभ में तीन, गांधार में दो, मध्यम में चार, पंचम में चार, धैवत में तीन और निषाद में दो श्रुतियाँ होती है, सप्तक के बाईस भागों में स्वर का आरंभ और अंत इसी से होता है । चार प्रकार जो सृष्टि के आदि में ब्रह्मा या कुछ महर्षियों द्वारा सुना गया और जिसे परंपरा से ऋषि सुनते हो। *संगीत में किसी सप्तक के बाईस भागों में से एक भाग अथवा किसी स्वर का एक अंश । विशेष-स्वर का आरंभ और अंत इसी से होता है । षड्ज में चार, ऋषभ में तीन, गांधार में दो, मध्यम में चार, पंचम में चार, धैवत में तीन और निषाद में दो श्रुतियाँ होती है।

रागालतिरूपलप्ती हस्तौ द्वौ कथितौ मतौ ।

दारुद्वयमलाबूश्च तन्त्री चत्वार एव च ॥11॥

पदच्छेदः-रागा लप्ति रूप लप्ती हस्तौ द्वौ कथितौ मतौ दारु द्वय मलाबू श्च तन्त्री चत्वार एव च

अनव्य-रागालप्ति-आलप्ति के भेद में से दूसरा, रूपलप्ती-आलप्ति के भेद में से एक, हस्तौ-दो हाथ, द्वौ-दोनों, कथितौ मतौ-कहा हुआ जो एक अपुष्ट कथन भी है, ऐसा कहा जाता है, दारुद्वयमलाबूश्च-काठ, चमड़े से बना हुआ, कद्दू अथवा लौकी को खोखला करके बनाया हुआ तन्त्री-, और तार जैसे, सितार, बीन, सारंगी आदि, चत्वार-चार प्रकार, एव च- एवं और

भावार्थ-कहा गया है कि रागलप्ति और रूपलप्ती संगीत के दो हाथ है। काठ और चमड़े से बना हुआ, कद्दू अथवा लौकी को खोखला करके बनाया हुआ, और तार जैसे, सितार, बीन, सारंगी आदि।

चन्दनं ब्रह्मजातिश्च दारुः क्षत्रियजातिकः ।

अलावूवैश्यजातिश्च तन्त्री शूद्रमवाप्नुयात् ॥12॥

पदच्छेदः-चन्दनं ब्रह्मजातिश्च दारुः क्षत्रियजातिकःअलावू वैश्य जातिश्च तन्त्री शूद्रमवाप्नुयात्

अनव्य-चन्दनं-चन्दन हीर की लकडी होती है, जो बहुत ही सुगंधित होती है, ब्रह्मजातिश्च-ब्राह्मण जाति का और, दारुः -एक साधारण काठ, क्षत्रियजातिकः -क्षत्रिय जाति का, अलावूवैश्यजातिश्च-वैश्य जाति को लौकी अथवा कद्दू जाति के प्रकार का और, तन्त्री शूद्रमवाप्नुयात्-तार जैसे, सितार, बीन, सारंगी आदि को शूद्र जाति का सम्बन्ध प्राप्त है।

भावार्थ-चन्दन को ब्राह्मण जाति का और क्षत्रिय जाति को एक साधारण काठ से वैश्य जाति को लौकी अथवा कद्दू जाति के प्रकार का और तार जैसे, सितार, बीन, सारंगी आदि को शूद्र जाति का सम्बन्ध प्राप्त है। यहाँ पर नारद जी संगीत की जातियोँ को प्रकृति के माध्यम से समझानें का प्रयास कर रहे है। जैसे संगीत की सुगंध व मधुरता चन्दन और ब्राह्मण से, वाध्यों बनावट में क्षत्रियों सा डटा रहनें वाला एक काठ सा, वैश्य जाति को संग्रहकर्ता लौकी अथवा कद्दू जो अपनें अन्दर बीजों का संरक्षण देता है और शूद्र जाति का सम्बन्ध तन्त्री वाध्यों से प्राप्त है।

षाडवौडवसम्पूर्णरागाद्यास्त्रय ईरिताः ।

ब्रह्मा षाडवपरागः स्याद्रुद्रः श्वेतौडवः स्मृतः॥13॥

पदच्छेदः-षाड़व औड़व सम्पूर्ण राग आदि स्त्र त्रय ईरिताः ब्रह्मा षाड़व परागः स्याद् रुद्रंः श्वेत औड़वः स्मृतः

अनव्य-षाड़व-राग की एक जाति है जिसने केवल छह् स्वर स, रे, ग, म, प और ध लगते है, इसमें निषाद अर्थात "नि" वर्जित है । इसमें आनें वाले राग दीपक और मेघ है। यह राग दो प्रकार का होता है-पहला शुद्ध षाड़व और दूसरा ब्राह्म षाड़व, औड़व-संगीत का वह राग जिनमें सात स्वरों सा, रे, ग, म, प, ध, नि में से केवल कोई भी पाँच स्वरों का ही प्रयोग होता है, जिसके आरोह में पाँच स्वर और अवरोह में संपूर्ण अर्थात् सात स्वरों का प्रयोग किया जाता है, सम्पूर्ण-पूरा, रागाद्या-मन प्रसन्न करने की क्रिया अथवा मनोरंजन आदि, ईरिताः -कहा हुआ है, ब्रह्मा-सृष्टिकर्ता अथवा विधाता, षाड़व परागः-षाड़व राग (अन्यव देखें) में पुष्परज, श्वेत-निष्कलंक रूप से, औड़वः -संगीत का वह राग जिनमें सात स्वरों का प्रयोग किया जाता है (अन्यव देखें), स्मृतः -स्मरण में रखना चाहिये।

भावार्थ-यहाँ पर तीन प्रकार के रागों का उल्लेख किया जा रहा है शुद्ध षाड़व, ब्राह्म षाड़व तथा रुद्र, षाड़व राग की एक जाति है जिसने केवल छह् स्वर स, रे, ग, म, प और ध लगते है, इसमें निषाद अर्थात "नि" वर्जित है । इसमें आनें वाले राग दीपक और मेघ है। यह राग दो प्रकार का होता है-पहला शुद्ध षाड़व और दूसरा ब्राह्म षाड़व तथा औड़व संगीत का वह राग जिनमें सात स्वरों सा, रे, ग, म, प, ध, नि में से केवल कोई भी पाँच स्वरों का ही प्रयोग होता है, जिसके आरोह में पाँच स्वर और अवरोह में संपूर्ण अर्थात् सात स्वरों का प्रयोग किया जाता है । मन प्रसन्न करने की क्रिया अथवा मनोरंजन आदि के लिए यह अपनें आप में सम्पूर्ण अर्थात पूरा का पूरा है। षाड़व राग में पुष्परज जिसको निष्कलंक रूप से रुद्र कहा गया है, और यह माना गया है कि रुद्र अर्थात देवाधिदेव महादेव ही संगीत है। इसको सदैव स्मरण में रखना चाहिये।

सम्पूर्णों विष्णुरूपश्च नीलवर्ण इति क्रमात ।

अनन्ताः सन्ति सन्दर्भा रागाः सन्तानसंज्ञकाः ॥14॥

पदच्छेदः-सम्पूर्णों विष्णुरूपश्च नीलवर्ण इति क्रमात अनन्ताः सन्ति सन्दर्भा रागाः सन्तानसंज्ञकाः

अनव्य-सम्पूर्णों-पूर्ण रूप से युक्त, विष्णुरूपश्च-हिंदुओं के प्रधान और सर्वोच्चतम् देवता जो सृष्टि का भरण, पोषण और पालन करनेवाले वह विष्णुरूप ही है, नीलवर्ण-नीलवर्ण, इति क्रमात-इसको में लेना चाहिए, अनन्ताः -वो जिसका अंत न हो, सन्ति-ओंकार अर्थात पवित्र शब्दांश अपार दिव्यता वाला, सन्दर्भा-साहित्यिक ग्रंथ रचना जिसमें किसी और ग्रंथ के गूढ़ वाक्यों आदि का अर्थ या स्पष्टीकरण आदि हो, रागाः -रागों का, सन्तानसंज्ञकाः -देवतरु संज्ञावाला अर्थात जिसकी संज्ञा हो।

भावार्थ-देवतरु संज्ञावाला अर्थात जिसकी संज्ञा हो, साहित्यिक ग्रंथों की रचना में तथा किसी और ग्रंथ के गूढ़ वाक्यों आदि का अर्थ या स्पष्टीकरण आदि हो, के संदर्भ में राग अनेक है जो कि नीलवर्ण के है और वो ही सृष्टि का भरण, पोषण और पालन करनेवाले वह विष्णुरूप ही है।

स्थायी सञ्चारिणी चैव तथासंहतिसंहती।

प्रसन्नादिः प्रसन्नान्तःप्रसन्नाद्यन्त एव च ॥15॥

पदच्छेदः-स्थायी सञ्चारिणी चैव तथा संहतिसंहती। प्रसन्नादिः प्रसन्नान्तःप्रसन्नाद्यन्त एव

अनव्य-स्थायी-जो स्थिर रहे, सञ्चारिणी-परिवर्तनशील, चैव-और, तथा-इसी तरह, संहतिसंहती-समूह राशि, प्रसन्नादिः-आदिअनन्त देवाधिदेव महादेव, प्रसन्नान्तः-अनन्तर प्रसन्न रहनें वाला, प्रसन्नाद्यन्त-आदि से अन्त तक प्रसन्न रहनें वाला, एव च-शिव ही है।

भावार्थ-वह समूह राशि जो आदिअनन्त देवाधिदेव महादेव जो स्थिर है, परिवर्तनशील है और इसी तरह अनन्तर प्रसन्न रहनें वाला आदि से अन्त तक प्रसन्न रहनें वाला शिव ही है।

प्रसन्नमध्यं च तथा क्रमादुचित एव च ।

बिन्दुर्निवृत्तप्रकृतौ ..... प्रेखो (प्रेह्ल?)विह्वलौ ॥16॥

पदच्छेदः-प्रसन्न मध्यं च तथा क्रमा दुचित एव च बिन्दु र्निवृत्त प्रकृतौ ..... प्रेखो (प्रेह्ल?)विह्वलौ

अनव्य-प्रसन्नमध्यं-प्रसन्न (महादेव)जो दो विपरीत सीमाओं के बीच में हो, च तथा-और, क्रमादुचित-जो धीरे धीरे होता आया हो,जिसका चित्त एक बात पर स्थिर न हो अर्थात दुविधायुक्त, एव च-और, बिन्दु-विंदु, र्निवृत्त-विरत होना, प्रकृतौ-वह मूल शक्ति जिसने अनेक रूपात्मक जगत का विकास किया है, प्रेखो (प्रेह्ल?)-एक प्रकार का सामगान, विह्वलौ-विह्वल होने की अवस्था या भाव याअशांत अथवा भावुकता।

भावार्थ-यहाँ पर नारद जी समानातुल्य वर्णन दे रहे है। जो प्रसन्न हो जो दो विपरीत सीमाओं के बीच में हो और जो धीरे धीरे होता आया हो, जिसका चित्त एक बात पर स्थिर न हो अर्थात दुविधायुक्त और एक ऐसा विंदु विरत हो और वह मूल विह्वल होने की अवस्था या भाव याअशांत अथवा भावुकता युक्त शक्ति जिसने अनेक रूपात्मक जगत का विकास किया है, एक प्रकार का सामगान किया है।

कम्पितं कुपितश्चैव विजृम्भितविवर्द्धनौ।

गमकैकोनविंशश्च चरणान्यपि कथ्यते ॥17॥

पदच्छेदः-कम्पितं कुपित श्चैव विजृम्भित विवर्द्धनौ गमक एकविंशतिः च चरणान् अपि कथ्यते

अनव्य-कम्पितं-अस्थिर या चलायमान, कुपित-क्रुद्ध, श्चैव-और, विजृम्भित-आलस्य से युक्त, विवर्द्धनौ-वृद्धि करने की क्रिया करनें वाला, गमक-गीत-संगीत में अलंकरण करनें के लिए एक प्रकार का संगीताभूषण, एकविंशतिः-इक्कीस (21) की संख्या, चरणान्-चरण, अपि-भी, कथ्यते-कहना उचित है।

भावार्थ-गमक-गीत-संगीत में अलंकरण करनें के लिए एक प्रकार का संगीताभूषण है, जो अस्थिर या चलायमान क्रुद्ध और आलस्य से युक्त वृद्धि करने की क्रिया करनें वाला है। इक्कीस (21) की चरणों संख्या कहना उचित है।

हर्रिब्रह्मा हरिश्चैव हरि कश्यपो मुनिः।

विश्वकर्मा हरिश्चन्द्रो भरतः कमलास्यकः ॥18॥

पदच्छेदः-हर्रि ब्रह्मा हरि श्चैव मतङ्गः कश्यपो मुनिः विश्वकर्मा हरिश्चन्द्रो भरतः कमलास्यकः

अनव्य-हर्रि-भगवान् विष्णु, ब्रह्मा-ब्रह्म के तीन सगुण रूपों में से सृष्टि की रचना करनेवाला रूप, हरि-हरि, मतङ्गः -शबरी के गुरु मुनि मतङ्ग, कश्यपो-वैदिककालीन ऋषि, इनको प्रजापति का नाम से जाना जाता है, विश्वकर्मा-समस्त संसार की रचनाकार, हरिश्चन्द्रो-हरिश्चन्द्र, भरतः -भरत मुनि, कमलास्यकः -कमल से उतपन्न

भावार्थ-संगीतज्ञों में विष्णु, ब्रह्मा, मुनि मतङ्ग, कश्यप ऋषि, इनको प्रजापति के नाम से भी जाना जाता है, विश्वकर्मा समस्त संसार के रचनाकार, राजा हरिश्चन्द्र, भरत मुनि मानें गये है।

चण्डी व्यालश्च शार्दूलो नारदस्तुम्बुरुस्तथा ।

वायुर्विश्वावसुः शौरिराञ्जनेयोऽङ्गादस्तथा ॥19॥

पदच्छेदः-चण्डी व्यालश्च शार्दूलो नारदस्त तुम्बुरु स्तथा । वायुर् र्विश्वावसुः शौरि राञ्जनेयो अङ्गाद स्तथा

अनव्य-चण्डी-दुर्गा का वह रुप जो उन्होंने महिषासुर के वध के लिये धारण किया था, व्यालश्च-और व्याल, शार्दूलो-शार्दूल, नारदस्त-नारद जी, तुम्बुरु-तुम्बुरु मुनि, स्तथा-तथा, वायुः -वायु, र्विश्वावसुः -पुराणों के अनुसार गंधर्व, शौरि-बलदेव, राञ्जनेयो-आञ्जनेम, अङ्गद-अङ्गद आदि

भावार्थ-संगीतज्ञों में चण्डी, व्याल, शार्दूल, नारद जी, तुम्बुरु मुनि, वायु, विश्वावसु पुराणों के अनुसार गंधर्व, शौरि अथवा बलदेव, आञ्जनेम तथा अङ्गद आदि मानें जाते है।

षण्मुखो भृङ्गिदेवेन्द्रः कुबेरः कुशिको मुनिः।

मात्रागुप्तो रावणश्च समुद्रश्च सरस्वती ॥20॥

पदच्छेदः-षण्मुखो भृङ्गि देवेन्द्रः कुबेरः कुशिको मुनिः मात्रागुप्तो (मातृगुप्तो)रावणश्च समुद्रश्च सरस्वती

अनव्य-षण्मुखो-छह् मुँहवाले षडानन अथवा कार्तिकेय, भृङ्गि-भृंगी ऋषि, देवेन्द्रः -देवताओं का राजा इंद्र, कुबेरः -कुबेर उत्तर दिशा के अधिपति, धन के स्वामी, यक्षों के राजा और उत्तर दिशा के दिग्पाल तथा लोकपाल है, कुशिको मुनिः -कुशिक मुनि विश्वामित्र के पितामह और गाधि के पिता, मातृगुप्तो-मातृगुप्त नन्दीग्राम के दंडनायक, रावणश्च-लंकाधिपति और राक्षसों का नायक, समुद्रश्च-अथाह जलराशि समुद्र जो पृथ्वी को चारों ओर से घेरे हुए है,इसको रत्नाकर भी कहते है, सरस्वती-विद्या या वाणी की देवी है।

भावार्थ-संगीतज्ञों में छह् मुँहवाले षडानन अथवा कार्तिकेय, भृंगी ऋषि, देवताओं का राजा इंद्र, कुबेर उत्तर दिशा के अधिपति, धन के स्वामी, यक्षों के राजा और उत्तर दिशा के दिग्पाल तथा लोकपाल है, कुशिक मुनि विश्वामित्र के पितामह और गाधि के पिता, मातृगुप्त नन्दीग्राम के दंडनायक, लंकाधिपति और राक्षसों का नायक, अथाह जलराशि समुद्र जो पृथ्वी को चारों ओर से घेरे हुए है,इसको रत्नाकर भी कहते है, सरस्वती विद्या या वाणी की देवी है, आदि मानें जाते है।

बलिर्यक्षः किन्नरेशो विक्रमोऽपि यथाक्रमम् ।

एभिः सङ्गीतके प्रोक्ता माता (मात्रा) द्वादशलक्षणाः ॥21॥

पदच्छेदः-बलिर् यक्षः किन्नर ईशो विक्रमो ऽपि यथा क्रमम् एभिः सङ्गीतके प्रोक्ता माता (मात्रा)द्वादश लक्षणाः

अनव्य-बलिर्-दैत्य जाति का राजा बलि, यक्षः -कुबेर अर्थात यक्षराज, किन्नर- पुलस्त्य ऋषि के वशंज साथ संगीत में अत्यंत कुशल, ईशो-परमेश्वर, विक्रमो-विक्रमादित्य उज्जयिनी के एक प्रसिद्ध प्रतापी राजा, ऽपि-भी, यथाक्रमम्-इसी क्रम में है, एभिः -इनसे, सङ्गीतके-सङ्गीत के, प्रोक्ता-कहे गये है, माता (मात्रा)-परिमाण मात्रा सहित, द्वादश-(दस और दो) बारह, लक्षणाः -जिससे उसका अर्थ लक्षित हो जाता है ।

भावार्थ-दैत्य जाति का राजा बलि, यक्ष कुबेर अर्थात यक्षराज, किन्नर पुलस्त्य ऋषि के वशंज साथ संगीत में अत्यंत कुशल, परमेश्वर, विक्रमादित्य उज्जयिनी के एक प्रसिद्ध प्रतापी राजा भी इसी क्रम में संगीतज्ञ कहे गये है। परिणाम और एकता के अनुसार जिससे उसके बारह लक्षण मात्रा सहित लक्षित हो जाते है ।

यद्गीतस्य तु देहस्य लक्षणं परिकीर्तितम् ।
ब्रह्मवीणास्वरूपं च न पूर्ष न स्त्रियं विदुः ॥22॥

पदच्छेदः-यद् गीतस्य तु देहस्य लक्षणं परिकीर्तितम् ब्रह्मवीणा स्वरूपं च न पूर्ष न स्त्रियं विदुः

अनव्य-यद्-स्मरण करने की क्रिया या भाव को दर्शाना, गीतस्य-स्वर सहित गाया जाने वाला छंद अथवा गान, तु देहस्य-शरीर का, लक्षणं-वह विशेषता जिसके द्वारा उसको लक्षणों से पहचाना जा सके, परिकीर्तितम्-परिकीर्तन किया हुआ, ब्रह्मवीणास्वरूपं-ब्रह्म रूपी वीणा का स्वरूप, च न-और न ही, पूर्ष-पुरुष, न स्त्रियं-न ही नारी, विदुः -जानते है।

भावार्थ-शरीररूपी गीत की विशेषता जिसके द्वारा उसको लक्षणों से पहचाना जा सके, की व्याख्या की जा चुकी है। वह ब्रह्म रूपी वीणा का स्वरूप है उसको न ही पुरुष और न ही नारी जानते है। अर्थात कोई भी नहीं जान सकता है।

यः श्रृणोति स पापेश्र्यो मुच्यते नात्र संशयः ।
पुत्रपौत्रधनं धान्यं लभ्यते शत्रुनाशनम् ॥23॥

पदच्छेदः-यः श्रृणोति स पापेश्र्यो मुच्यते नात्र संशयः पुत्र पौत्र धनं धान्यं लभ्यते शत्रु नाशनम्

अनव्य-यः श्रृणोति स-जो सुनता है, पापेश्र्यो मुच्यते-पापों से मुक्त हो जाता है, नात्र संशयः -इसमें कोई संदेह नहीं है, पुत्रपौत्रधनं धान्यं-पुत्र पौत्र धन धान्य, लभ्यते-लाभ होता है, शत्रुनाशनम्-शत्रु का नाश होता है।

भावार्थ-जो संगीत शास्त्र को सुनता है वह सभी पापों से मुक्त होकर पुत्र पौत्र धन धान्य से युक्त होता है, तथा उसके शत्रुओं का नाश होता है, इसमें कोई भी संदेह नहीं है।

राज्याभिवृद्धिसन्तानं मोक्षैकफलदायकम् ।
सर्वश्रेयस्करं पुंसां नारदस्य मतं यदा ॥24॥

पदच्छेदः-राज्याभिवृद्धि सन्तानं मोक्षैक फल दायकम् सर्व श्रेयस्करं पुंसां नारदस्य मतं यदा

अनव्य-राज्याभिवृद्धि-राज्य की अभिवृद्धि, सन्तानं-संतति की, मोक्षैकफलदायकम्-मोक्षरूपी फलदायक, सर्वश्रेयस्करं-सबके लिये शुभदायक, शुभ मंगलकारक तथा कल्याण करनेवाला-पुंसां-मनुष्यों का, नारदस्य-नारद जी का, मतं-आशय, यदा-जब।

भावार्थ-यह विद्या संतति की और राज्य की अभिवृद्धि करनें वाली, मोक्षरूपी फल प्रप्तिदायक, सबके लिये शुभदायक, शुभ मंगलकारक तथा कल्याण करनेवाली है। यह मुनि नारद जी का मत है।

इति श्रीनारदकृतौ सङ्गीतमकरन्दे वीणादेहनिरूपणं नाम द्वितीयपादः

इतिश्री श्री नारद द्वारा संपादित किया हुआ सङ्गीत मकरन्द में वीणा के देह का निर्णय पूर्वक निर्धारण नामक द्वितीयपाद पूर्ण होता है।

सङ्गीताध्याये तृतीयः पादः

अथरागनामान्युच्यनते

श्रुत्यनन्तरभावी यः स्निग्धोऽनुरणनात्मकः ।
स्वरो रञ्जयति श्रोतृचित्तं स स्वर उच्यते ॥1॥

पदच्छेदः-श्रुति अनन्तर भावी यः स्निग्धो अनुरणनात्मकः स्वरो रञ्जयति श्रोतृचित्तं स स्वर उच्यते

अनव्य-श्रुति-श्रवण करने की क्रिया या भाव, अनन्तर-लगातार, भावी-प्रारब्ध, यः-जो, स्निग्धो-ठंढक पहुँचानें वाला कोमल, अनुरणनात्मकः -आत्मिक रूप से अनुकरणीय, स्वरो-स्वर, रञ्जयति-आनंदित करता है, श्रोतृचित्तं-सुननें वालों के मन को, स स्वर-उसे स्वर, उच्यते-कहा जाता है।

भावार्थ-श्रवण करने की क्रिया के भाव को लगातार ठंढ़क पहुँचानें वाला तथा कोमल आत्मिक रूप से अनुकरणीय है, सुनने वाले के चित्र ह्रदय में आल्हादित भाव में रंग जाता हो उसको सम्यक स्वर कहते है।

स्वरग्रामो मूर्छनाश्च तथा तानानि वृत्तयः।
पुष्पसाधारणा वर्णा ह्यलङ्काराश्च धावतः (?) ॥2॥

पदच्छेदः-स्वरग्रामो मूर्छनाश्च तथा तानानि वृत्तयः पुष्पसाधारणा वर्णा हि अलङ्काराश्च धावतः (धातवः)

अनव्य-स्वरग्रामो-स्वरों का सप्तक में, मूर्छनाश्च-और संगीत में एक ग्राम से दूसरे ग्राम तक जाने में सातो स्वरों का आरोह अवरोह ग्राम के सातवें भाग का नाम मूर्च्छना है । भरत मुनि के मतानुसार गाते समय गले को कँम्पन से ही मूर्च्छना उतपन्न होती है, अन्य मत है कि स्वर के सूक्ष्म विराम को ही मूर्च्छना कहते है, तथा-तथा, तानानि-संगीत में भाव या क्रिया में खींच से फैलाव देना, वृत्तयः -जो आवृत में किया जाय पदों के अनुसार वृत्त तीन प्रकार के होते है। जिस वृत्त के चारों पद समान हों, 'सम वृत्त' कहलाता है, जिसमें चारों पद असमान हों, वह 'विषम वृत्त' कहलाता है, पुष्पसाधारणा-जिस प्रकार वसंतऋतु में पुष्पों की उपलब्धता सरलता से हो जाती है, वर्णा-वर्ण, हि-को, अलङ्काराश्च-शब्दों की युक्ति जिससे काव्य की शोभा हो तथा वर्णन करनें की रीति में प्रभाव और रोचकता को बढ़ाया जा सके । इसके तीन भेद है। १. शब्दालंकार, अर्थात् वह अलंकार जिसमें शब्दों का सौंदर्य

हो, २. अर्थालंकार, जिसके अर्थ में विस्मय हो, जैसे उपमा और रूपक तथा ३. उभयालंकार जिसमें शब्द और अर्थ दोनों ही विस्मय करनें वाले हों, धावतः (धातवः)-जिससे शब्द निष्पन्न होता है। महर्षि पाणिनि ने लगभग दो हजार धातुओं का उल्लेख किया है। भाषा का मूल बीज धातु है।

भावार्थ-स्वरों का सप्तक में संगीत में एक ग्राम से दूसरे ग्राम तक जाने में सातो स्वरों का आरोह अवरोह ग्राम के सातवें भाग का नाम मूर्च्छना है । भरत मुनि के मतानुसार गाते समय गले को कँम्पन से ही मूर्च्छना उतपन्न होती है, अन्य मत है कि स्वर के सूक्ष्म विराम को ही मूर्च्छना कहते है, तथा संगीत में भाव या क्रिया में खींच से फैलाव देते हुए जो आवृत में किया जाय पदों के अनुसार वृत्त तीन प्रकार के होते है। जिस वृत्त के चारों पद समान हों, 'सम वृत्त' कहलाता है, जिसमें चारों पद असमान हों, वह 'विषम वृत्त' कहलाता है, साधारणतया गायन में इसका प्रयोग उसी तरह से किया जाता है जिस प्रकार वसंतऋतु में पुष्पों की उपलब्धता सरलता से हो जाती है, शब्दों की युक्ति जिससे काव्य की शोभा हो तथा वर्णन करनें की रीति में प्रभाव और रोचकता को बढ़ाया जा सके । इसके तीन भेद है 1.शब्दालंकार, अर्थात् वह अलंकार जिसमें शब्दों का सौंदर्य हो, 2. अर्थालंकार, जिसके अर्थ में विस्मय हो, जैसे उपमा और रूपक तथा 3. उभयालंकार जिसमें शब्द और अर्थ दोनों ही विस्मय करनें वाले हों, भाषा का मूल बीज धातु है। जिससे शब्द निष्पादित होता है। महर्षि पाणिनि ने औसतन दो हजार धातुओं का उल्लेख किया है। ***इस पूरे श्लोक पर पूर ध्यान देना है**

श्रुतयो जातयश्चैव विधिज्ञा स्वरशासनः ।

गातव्यः समयो योऽयं वीणायां समुदाहृतः ॥3॥

पदच्छेदः-श्रुतयो जातयश्चैव विधिज्ञा स्वरशासनः गातव्यः समयो योऽयं वीणायां समुदाहृतः

अनव्य-श्रुतयो-भारतीय संगीत शास्त्र के अनुसार सप्तक में 22 श्रुतियां होती है, ये 22 अलग-अलग तरह की एसी ध्वनियाँ है जिन्हें संगीत के जानकार साधारणरूप से सुनकर पहचान सकते है। शास्त्रों के अनुसार संगीत में ये श्रुतियाँ सामवेद से ली गई है, जातियाँश्चैव-किसी भी राग की जाति मुख्यत: तीन तरह की मानी जाती है। 1-औडव राग- जिस राग में 5 स्वर लगें हों वह औडव राग कहलाता है, 2-षाडव राग- इस राग में 6 स्वरों का प्रयोग होता है। तथा 3-संपूर्ण- राग में सभी सात स्वरों का प्रयोग होता है। इसे आगे और विभाजित किया जा रहा है। जैसे- औडव-संपूर्ण अर्थात किसी राग विशेष में अगर आरोह में 5 मगर अवरोह में सातों स्वर लगें तो उसे औडव-संपूर्ण कहा जायेगा। इसी तरह, औडव-षाडव, षाडव-षाडव, षाडव-संपूर्ण, संपूर्ण-षाडव आदि रागों की जातियाँ हो सकती है, विधिज्ञा-शास्त्रोक्त विधान को जानने वाला, स्वरशासनः -भारतीय संगीत में सात स्वर है, जिनके नाम है-षड्ज, ऋषभ, गांधार, मध्यम, पंचम, धैवत व निषाद, इन्ही सात स्वरों का भारतीय

संगीत पर अधिकार या वश रहता है, गातव्यः-गाने योग्य हो, समयो-समय, योऽयं-जो यह, वीणायां-वींणा में, समुदाहृतः-उद्धृत किए गये है।

भावार्थ-शास्त्रोक्त विधान को जानने वाले ब्रम्हा जी के द्वारा वर्णित भारतीय संगीत शास्त्र के अनुसार सप्तक में 22 श्रुतियां होती है। ये 22 अलग-अलग तरह की एसी ध्वनियाँ है जिन्हें संगीत के जानकार साधारणरूप से सुनकर पहचान सकते है। शास्त्रों के अनुसार संगीत में ये श्रुतियाँ सामवेद से ली गई है, किसी भी राग की जाति मुख्यत: तीन तरह की मानी जाती है। 1-औडव राग- जिस राग में 5 स्वर लगें हों वह औडव राग कहलाता है, 2-षाडव राग- इस राग में 6 स्वरों का प्रयोग होता है। तथा 3-संपूर्ण- राग में सभी सात स्वरों का प्रयोग होता है। इसे आगे और विभाजित किया जा रहा है। जैसे- औडव-संपूर्ण अर्थात किसी राग विशेष में अगर आरोह में 5 मगर अवरोह में सातों स्वर लगें तो उसे औडव-संपूर्ण कहा जायेगा। इसी तरह, औडव-षाडव, षाडव-षाडव, षाडव-संपूर्ण, संपूर्ण-षाडव आदि रागों की जातियाँ हो सकती है, गाने योग्य हो के समय प्रयोग किये जाते है, वह वींणा में उद्धृत किए गये है।

स्वरग्रामे तथा ताना जात्यः साधारणक्रियाः ।
अलङ्काराश्च वर्णाश्च जातयश्च शरीरतः ॥4॥

पदच्छेदः-स्वरग्रामे तथा ताना जात्यः साधारणक्रियाः अलङ्काराश्च वर्णाश्च जातयश्च शरीरतः

अनव्य-स्वरग्राम में स्वरों के सात सप्तक होते है जिनके नाम है-षड्ज, ऋषभ, गांधार, मध्यम, पंचम, धैवत व निषाद, तथा ताना-तथा तानें, जात्यः-किसी भी राग की जाति मुख्यत: तीन तरह की मानी जाती है। 1-औडव राग- जिस राग में 5 स्वर लगें हों वह औडव राग कहलाता है, 2-षाडव राग- इस राग में 6 स्वरों का प्रयोग होता है। तथा 3-संपूर्ण- राग में सभी सात स्वरों का प्रयोग होता है। इसे आगे और विभाजित किया जा रहा है। जैसे- औडव-संपूर्ण अर्थात किसी राग विशेष में अगर आरोह में 5 मगर अवरोह में सातों स्वर लगें तो उसे औडव-संपूर्ण कहा जायेगा। इसी तरह, औडव-षाडव, षाडव-षाडव, षाडव-संपूर्ण, संपूर्ण-षाडव आदि रागों की जातियाँ हो सकती है, साधारणक्रियाः - साधारण क्रिया है, अलङ्काराश्च-शब्दों की युक्ति जिससे काव्य की शोभा हो तथा वर्णन करनें की रीति में प्रभाव और रोचकता को बढ़ाया जा सके । इसके तीन भेद है। 1. शब्दालंकार, अर्थात् वह अलंकार जिसमें शब्दों का सौंदर्य हो, 2.अर्थालंकार, जिसके अर्थ में विस्मय हो, जैसे उपमा और रूपक तथा 3. उभयालंकार जिसमें शब्द और अर्थ दोनों ही विस्मय करनें वाले हों, वर्णाश्च-गाने की प्रत्यक्ष क्रिया या स्वरों की विविध चलन को वर्ण कहते है. ये चार प्रकार के होते है। अभिनव राग मंजरी में कहा गया है, अर्थात् गाने की क्रिया को वर्ण कहते है। 1. स्थाई वर्ण - जब कोई स्वर एक से

अधिक बार उच्चारित किया जाता है तो उसे स्थायी वर्ण कहते है, जैसे - रे रे, ग ग ग, म म म आदि। 2. आरोही वर्ण - स्वरों के चढ़ते हुये क्रम को आरोही वर्ण कहते है जैसे- सा रे म ग प ध नी, 3. अवरोही वर्ण - स्वरों के उतरते हुये क्रम को अवरोही वर्ण कहते है जैसे - नि ध प म ग रे सा, 4. संचारी वर्ण - उपर्युक्त तीनों वर्णों के मिश्रित रूप को संचारी वर्ण कहते है । इसमें कभी तो कोई स्वर ऊपर चढ़ता है तो कभी कोई स्वर बार-बार दोहराया जाता है। दूसरे शब्दों में संचारी वर्ण में कभी आरोही, कभी अवरोही और कभी स्थाई वर्ण दृष्टिगोचर होता है जैसे - सा सा रे ग म प प म ग रे सा, जातयश्च-किसी भी राग की जाति मुख्यत: तीन तरह की मानी जाती है। 1-औडव राग- जिस राग में 5 स्वर लगें हों वह औडव राग कहलाता है, 2-षाडव राग- इस राग में 6 स्वरों का प्रयोग होता है। तथा 3-संपूर्ण- राग में सभी सात स्वरों का प्रयोग होता है। इसे आगे और विभाजित किया जा रहा है। जैसे- औडव-संपूर्ण अर्थात किसी राग विशेष में अगर आरोह में 5 मगर अवरोह में सातों स्वर लगें तो उसे औडव-संपूर्ण कहा जायेगा। इसी तरह, औडव-षाडव, षाडव-षाडव, षाडव-संपूर्ण, संपूर्ण-षाडव आदि रागों की जातियाँ हो सकती है, शरीरतः -स्थूल रूप शरीर से।

भावार्थ-स्वरग्राम में स्वरों के सात सप्तक होते है जिनके नाम है -षड्ज, ऋषभ, गांधार, मध्यम, पंचम, धैवत और निषाद, तथा तानें, किसी भी राग की जाति मुख्यत: तीन तरह की मानी जाती है। 1-औडव राग- जिस राग में 5 स्वर लगें हों वह औडव राग कहलाता है, 2-षाडव राग- इस राग में 6 स्वरों का प्रयोग होता है। तथा 3-संपूर्ण- राग में सभी सात स्वरों का प्रयोग होता है। इसे आगे और विभाजित किया जा रहा है। जैसे- औडव-संपूर्ण अर्थात किसी राग विशेष में अगर आरोह में ५ मगर अवरोह में सातों स्वर लगें तो उसे औडव-संपूर्ण कहा जायेगा। इसी तरह, औडव-षाडव, षाडव-षाडव, षाडव-संपूर्ण, संपूर्ण-षाडव आदि रागों की जातियाँ हो सकती है, यह एक साधारण क्रिया है, स्थूल रूप शरीर से शब्दों की युक्ति जिससे काव्य की शोभा हो तथा वर्णन करनें की रीति में प्रभाव और रोचकता को बढ़ाया जा सके । इसके तीन भेद है। 1.शब्दालंकार, अर्थात् वह अलंकार जिसमें शब्दों का सौंदर्य हो, 2. अर्थालंकार, जिसके अर्थ में विस्मय हो, जैसे उपमा और रूपक तथा 3.उभयालंकार जिसमें शब्द और अर्थ दोनों ही विस्मय करनें वाले हों, गाने की प्रत्यक्ष क्रिया या स्वरों की विविध चलन को वर्ण कहते है. ये चार प्रकार के होते है। अभिनव राग मंजरी में कहा गया है, अर्थात् गाने की क्रिया को वर्ण कहते है।

1. स्थाई वर्ण-जब कोई स्वर एक से अधिक बार उच्चारित किया जाता है तो उसे स्थायी वर्ण कहते है, जैसे - रे रे, ग ग ग, म म म आदि।

2.आरोही वर्ण-स्वरों के चढ़ते हुये क्रम को आरोही वर्ण कहते है जैसे- सा रे म ग प ध नी,

3. अवरोही वर्ण - स्वरों के उतरते हुये क्रम को अवरोही वर्ण कहते है जैसे - नि ध प म ग रे सा,
4. संचारी वर्ण - उपर्युक्त तीनों वर्णों के मिश्रित रूप को संचारी वर्ण कहते है । इसमें कभी तो कोई स्वर ऊपर चढ़ता है तो कभी कोई स्वर बार-बार दोहराया जाता है। दूसरे शब्दों में संचारी वर्ण में कभी आरोही, कभी अवरोही और कभी स्थाई वर्ण दृष्टिगोचर होता है जैसे - सा सा रे ग म प प म ग रे सा, किसी भी राग की जाति मुख्यत: तीन तरह की मानी जाती है। 1-औडव राग- जिस राग में 5 स्वर लगें हों वह औडव राग कहलाता है, 2-षाडव राग- इस राग में 6 स्वरों का प्रयोग होता है। तथा 3-संपूर्ण- राग में सभी सात स्वरों का प्रयोग होता है। इसे आगे और विभाजित किया जा रहा है। जैसे-औडव-संपूर्ण अर्थात किसी राग विशेष में अगर आरोह में 5 मगर अवरोह में सातों स्वर लगें तो उसे औडव-संपूर्ण कहा जायेगा। इसी तरह, औडव-षाडव, षाडव-षाडव, षाडव-संपूर्ण, संपूर्ण-षाडव आदि रागों की जातियाँ हो सकती है।

सुखोपविष्टं वरदं ब्रह्माणं ज्ञानसागरम् ।
कृताञ्जलिपुटो भूत्वा नारदः परिपृच्छति ॥5॥

पदच्छेदः-सुखो पविष्टं वरदं ब्रह्माणं ज्ञानसागरम् कृताञ्जलि पुटो भूत्वा नारदः परिपृच्छति
अनव्य-सुखोपविष्टं- सुख से बैठे हुए, वरदं-वर देनेवाला अभीष्टदाता, ब्रह्माणं-जो सृष्टि के आरम्भ में ब्रह्मा को उत्पन्न करता है, हिंदू परंपरा में परमसत्य को ब्रह्म के नाम से जाना जाता है। यह सबसे सूक्ष्म, अदृश्य, जागृत जैसे समस्त संसार के आधार है। ज्ञानसागरम्-अथाह ज्ञान रूपी भंड़ार का सागरस्वरूप, कृताञ्जलि-हाथ जोड़े हुए अथवा हाथ बाँधे हुए, पुटो भूत्वा-कर अथवा हाथ के अस्तित्व में आनें की क्रिया, नारदः -नारद जी, परिपृच्छति-प्रश्न करना
भावार्थ-अभीष्ट के दाता सुख से बैठे हुए तथा वर देनेवाले, जो सृष्टि के आरम्भ में ब्रह्मा को उत्पन्न करता है, हिंदू परंपरा में परमसत्य को ब्रह्म के नाम से जाना जाता है। वह सबसे सूक्ष्म, अदृश्य, जागृत जैसे समस्त संसार के आधार है, अथाह ज्ञान रूपी भंड़ार का सागरस्वरूप के समक्ष हाथ जोड़ कर (हाथ बाँधे हुए कर अर्थात हाथ के अस्तित्व में आनें की क्रिया करते हुए) नारद जी प्रश्न करते है।

कति रागाः प्रगातव्याः प्रभाते सप्त सुस्वराः।
तथैव कति रागाश्च केनात्र प्रतिपादिताः ॥6॥

पदच्छेदः-कति रागाः प्रगात व्याः प्रभाते सप्त सुस्वराः तथैव कति रागाश्च केनात्र प्रतिपादिताः
अनव्यय-कति-कितनें, रागाः -राग तीन प्रकार के कहे गए है, प्रगाता-गानेवाला, व्याः-शास्त्रों या सूत्रों आदि की जो व्याख्या होती है, उसके वृत्ति, भाष्य, वार्तिक, टीका, टिप्पणी आदि अनेक भेद माने गए

है, प्रभाते-सूर्य और प्रभा से युक्त समय को कहा गया है, सप्त सुस्वराः-सुंदर और उत्तम सात स्वरों से युक्त जिसका सुर या कंठध्वनि मधुर हो, तथैव कति-उसी प्रकार, रागाश्च-राग, केनात्र-किसके द्वारा यहाँ, प्रतिपादिताः -जिसका प्रतिपादन हो चुका है अथवा पूर्व में कहे जा चुके है।

भावार्थ-सूर्य और प्रभा से युक्त समय में सुंदर और उत्तम सात स्वरों से युक्त जिसका सुर या कंठध्वनि मधुर हो, में से कितनें राग गाने चाहिए। जब कि राग तीन प्रकार के कहे जाते है गानेवाले राग शास्त्रों या सूत्रों आदि में जो व्याख्या होती है, उसके वृत्ति, भाष्य, वार्तिक, टीका, टिप्पणी आदि अनेक भेद माने गए है, उसी प्रकार राग किसके द्वारा यहाँ जिसका प्रतिपादन हो चुका है अथवा पूर्व में कहे जा चुके है।

कस्मिन् काले प्रगातव्यं वाद्यं चैव शुभाशुभम् ।
नारदस्य वचः श्रुत्वा ब्रह्मा लोकपितामहः ॥7॥

पदच्छेदः-कस्मिन् काले प्रगात व्यं वाद्यं चैव शुभाशुभम् नारदस्य वचः श्रुत्वा ब्रह्मा लोकपितामहः

अनव्य-कस्मिन् काले-किस समय, प्रगात-प्रगाता-गानेवाला, व्यं:-शास्त्रों या सूत्रों आदि की जो व्याख्या होती है, उसके वृत्ति, भाष्य, वार्तिक, टीका, टिप्पणी आदि अनेक भेद माने गए है, वाद्यं चैव-और वाद्य, शुभाशुभम्-शुभ और अशुभ अथवा पवित्र और अपवित्र, नारदस्य-नारद की, वचः -वाणी को, श्रुत्वा-वाणी के बारे में सुना, ब्रह्मा लोकपितामहः -ब्रह्मा जो सभी लोकों के पितामह है।

भावार्थ-राग एवं वाद्य शास्त्रों या सूत्रों आदि में जिनकी व्याख्या होती है, उसके वृत्ति, भाष्य, वार्तिक, टीका, टिप्पणी आदि अनेक भेद माने गए है। किस समय पर शुभ और अशुभ अथवा पवित्र और अपवित्र फल देते है वाणी के बारे में सुनकर ब्रह्मा जो सभी लोकों के पितामह है, ने कहा।

साधु साधु महातेजा यत्त्वं मां परिपृच्छसि ।
तत्सर्व संप्रवक्ष्यामि रागवेलाविनिर्णयम् ॥8॥

पदच्छेदः-साधु साधु महातेजा यत्त्वं मां परिपृच्छसि तत्सर्व संप्रवक्ष्यामि रागवेलाविनिर्णयम्

अनव्य-साधु साधु-सज्जन व्यक्ति, महातेजा-महान् तेजवाला जिससे सारे अंधकार का नाश हो हो जाए, यत्त्वं मां-जो तुम मुझसे, परिपृच्छसि-पूंछ रहे हो, तत्सर्व-वह सारा, संप्रवक्ष्यामि-उत्तम उपदेश करना, रागवेलाविनिर्णयम्-रागों की वेला का विस्तार पूर्वक निर्णय।

भावार्थ-हे महान् व्यक्तित्व के द्योतक जो अनुकरणीय है, और जो तुम मुझसे रागों की वेला का समय पूंछ रहे हो महान् तेजवाला जिससे सारे अंधकार का नाश हो हो जाए, मैं (ब्रम्ह) उसका उत्तम उपदेश कर रहा हूँ।

यत्सुरैस्तन्न विज्ञातं नरकिन्नरनायकैः ।

देशीरागरहस्यं च साम्प्रतं शृणु यत्नतः ॥9॥

पदच्छेदः-यत् सुरै स्तन्न विज्ञातं नर किन्नर नायकैः देशी राग रहस्यं च साम्प्रतं शृणु यत्नतः

अनव्य-यत् सुरैस्-जो देवों के द्वारा, तन्न-वह नहीं, विज्ञातं-जाना या समझा हुआ है, नर-पुरुष, किन्नर-एक प्रकार के देवता, ये संगीत में अत्यंत कुशल होते है । ये पुलस्त्य ऋषि के वशंज माने जाते है, नायकैः -वह श्रेष्ठ पुरुष जो आगे ले जाये वो नायक है, देशीरागरहस्यं च-वह राग जिनका प्रयोग अलग-अलग देशों में रहनें वाले लोगों के अनुरूप हो, और गहराई से अध्ययन करनें पर इसके रहस्यों का पता चलता है, साम्प्रतं-उपयुक्त या ठीक समय पर, शृणु-सुनों, यत्नतः -यत्नपूर्वक

भावार्थ-जो देवों के द्वारा पुरुष, एक प्रकार के देवता, ये संगीत में अत्यंत कुशल होते है । ये पुलस्त्य ऋषि के वशंज माने जाते है, वह श्रेष्ठ पुरुष जो आगे ले जाये वो नायक है, के द्वारा भी नहीं जाना जा सकता है। वह राग जिनका प्रयोग अलग-अलग देशों में रहनें वाले लोगों के अनुरूप हो, और गहराई से अध्ययन करनें पर इसके रहस्यों का पता चलता है, अब तुम ध्यानपूर्वक सुनों।

अथ सूर्यांशः।

गान्धारो देवगान्धारो धन्नासी सैन्धवी तथा ।

नारायणी गुर्जरी च बङ्गालपल(ट?)मन्नजरी ॥10॥

पदच्छेदः-गान्धारो देवगान्धारो धन्नासी (धनाश्री) सैन्धवी तथा नारायणी गुर्जरी च बङ्गालपल (ट?) मन्नजरी

अनव्य-गान्धारो-मेघ राग की पाँचवीं रागिनी, यह संपूर्ण जाति की रागिनी है और दिन के पहले पहर में गाई जाती है- रि, ध, नि, प, म, ग, रि, स इसका सरगम है, देवगान्धारो-इस राग को राग भैरव का पुत्र माना जाता है, यह संपूर्ण जाति का राग है और इसमें ऋषभ और धैवत कोमल लगते है । इसका स्वर- ग्रम इस प्रकार है-ग म प ध नि स रे, धन्नासी (धनाश्री) -इसकी जाति षाड़व, ऋषभ वर्जित गृहान्यास षड़ज है । गाने का समय किसी किसी के मत से दिन का दूसरा पहर और किसी के मत से तीसरा पहर है । विशेषतः इसका प्रयोग वीर रस में होता है । इसका सरगम इस प्रकार है-स, ग, म, प, ध, नि, स, तथा-तथा, सैन्धवी-यह एक संपूर्ण जाति की रागिनी है-यह राग भैरव की पुत्रवधू मानी गई है । यह राग दूसरे पहर की दूसरी घड़ी में गाया जाता है, इसका सरगम इस प्रकार है-धा सा रे म म प प ध ध । सा नि ध ध प प म ग ग ग ग रे सा । धा सा रे म म ग रे म म ग रे ग रे म प ग रे । नि नि ध म प म ग रे । प प म रे ग ग ग रे सा । किसी किसी के मत से यह षाडव है, और इसमें रि वर्जित है, नारायणी-राग नारायणी को दक्षिण पद्धति के संगीत से हिन्दुस्तानी पद्धति में विद्वानों द्वारा लाया गया है। इस राग में कोमल निषाद की उपस्थिति इसे राग दुर्गा से अलग करती है। पंचम न्यास स्वर

है और अवरोह में धैवत को दीर्घ किया जाता है, जैसे - सा रे प ; म प नि१ ध ध प। धैवत को दीर्घ करने से यह राग, सूरदासी मल्हार से अलग हो जाता है, जहाँ धैवत दीर्घ नहीं किया जाता। यह एक शांत प्रकृति का राग है, जिसका विस्तार मध्य और तार सप्तकों में किया जाता है। यह स्वर संगतियाँ राग नारायणी का रूप दर्शाती है - सा रे प ; म प ; म प ध नि१ ध सा' म प ध सा' ; सा' रे नि१ ध सा' ; सा' रे' म' रे' सा' ; सा' नि१ ध ध प ; म प ध प म रे ; म रे ,नि१ ,ध सा, गुर्जरी-राग तोडी में पंचम स्वर को वर्ज्य करने से एक अलग प्रभाव वाला राग गुर्जरी तोडी बनता है। इस राग को गुजरी तोडी भी कहते है। इस राग की प्रकृति गंभीर है। यह भक्ति तथा करुण रस से परिपूर्ण राग है।

राग तोड़ी की अपेक्षा इस राग में कोमल ऋषभ को दीर्घ रूप में प्रयुक्त किया जाता है। इस राग का विस्तार तीनों सप्तकों में किया जा सकता है। यह स्वर संगतियाँ राग गुर्जरी तोडी का रूप दर्शाती है -सा ; ,नि ,ध१ ; ,म् ,ध१ ; ,म् ,नि ,ध१ ; ,नि ,नि सा ; सा रे१ ; सा रे१ ग१ ; ग१ रे१ ,नि ,ध१ ; ,ध१ ,नि ,नि सा ; सा रे१ ग१ म् ; ध१ म् ध१ ; म् ध१ नि सा' ; ध१ नि सा' ; ध१ नि सा' रे१' ; ग१' रे१' नि ध१ ; म् ध१ नि सा' रे१' ; ध१ सा' ; ध१ सा' रे१' नि ध१ म् ; ध१ नि ध१ म् ; ग१ म् ध१ ; म् ग१ रे१ सा, च-और, बङ्गालपल(ट?)मन्नजरी-संगीत में एक प्रकार का संकर राग जो बंगाली, भैरव, गांधार, पंचम और गुर्जरी के मेल से बनता है ।

भावार्थ-रागों में मेघ राग की पाँचवीं रागिनी गान्धारो,यह संपूर्ण जाति की रागिनी है और दिन के पहले पहर में गाई जाती है- रि, ध, नि, प, म, ग, रि, स इसका सरगम है, देवगान्धारो को राग को राग भैरव का पुत्र माना जाता है, यह संपूर्ण जाति का राग है और इसमें ऋषभ और धैवत कोमल लगते है । इसका स्वर- ग्रम इस प्रकार है-ग म प ध नि स रे, धन्नासी अथवा धनाश्री इसकी जाति षाड़व, ऋषभ वर्जित गृहान्यास षड़ज है । गाने का समय किसी किसी के मत से दिन का दूसरा पहर और किसी के मत से तीसरा पहर है । विशेषरूप से इसका प्रयोग वीर रस में होता है-इसका सरगम इस प्रकार है-स, ग, म, प, ध, नि, स, तथा सैन्धवी एक संपूर्ण जाति की रागिनी है, यह राग भैरव की पुत्रवधू मानी गई है । यह राग दूसरे पहर की दूसरी घड़ी में गाया जाता है, इसमें प्रयोग सरगम इस प्रकार है-धा सा रे म म प प ध ध । सा नि ध ध प प म ग ग ग ग रे सा । धा सा रे म म ग रे म म ग रे ग रे म प ग रे । नि नि ध म प म ग रे । प प म रे ग ग ग रे सा । किसी किसी के मत से यह षाडव है, और इसमें रि वर्जित है, राग नारायणी को दक्षिण पद्धति के संगीत से हिन्दुस्तानी पद्धति में विद्वानों द्वारा लाया गया है। इस राग में कोमल निषाद की उपस्थिति इसे राग दुर्गा से अलग करती है। पंचम न्यास स्वर है और अवरोह में धैवत को दीर्घ किया जाता है, जैसे - सा रे प ; म प नि१ ध ध प। धैवत को दीर्घ करने से यह राग, सूरदासी मल्हार से अलग हो जाता है, जहाँ धैवत दीर्घ नहीं किया जाता।

यह एक शांत प्रकृति का राग है, जिसका विस्तार मध्य और तार सप्तकों में किया जाता है। यह स्वर संगतियाँ राग नारायणी का रूप दर्शाती है - सा रे प ; म प ; म प ध नि१ ध सा' म प ध सा' ; सा' रे नि१ ध सा' ; सा' रे' म' रे' सा' ; सा' नि१ ध ध प ; म प ध प म रे ; म रे ,नि१ ,ध सा, राग तोडी में पंचम स्वर को वर्ज्य करने से एक अलग प्रभाव वाला राग गुर्जरी तोडी बनता है। इस राग को गुजरी तोडी भी कहते है। इस राग की प्रकृति गंभीर है। यह भक्ति तथा करुण रस से परिपूर्ण राग है। राग तोड़ी की अपेक्षा इस राग में कोमल ऋषभ को दीर्घ रूप में प्रयुक्त किया जाता है। इस राग का विस्तार तीनों सप्तकों में किया जा सकता है। यह स्वर संगतियाँ राग गुर्जरी तोडी का रूप दर्शाती है -सा ; ,नि ,ध१ ; ,म् ,ध१ ; ,म् ,नि ,ध१ ; ,नि ,नि सा ; सा रे१ ; सा रे१ ग१ ; ग१ रे१ ,नि ,ध१ ; ,ध१ ,नि ,नि सा ; सा रे१ ग१ म् ; ध१ म् ध१ ; म् ध१ नि सा' ; ध१ नि सा' ; ध१ नि सा' रे१' ; ग१' रे१' नि ध१ ; म् ध१ नि सा' रे१' ; ध१ सा' ; ध१ सा' रे१' नि ध१ म् ; ध१ नि ध१ म् ; ग१ म् ध१ ; म् ग१ रे१ सा, च-और, संगीत में एक प्रकार का संकर राग बङ्गालपटमन्नजरी जो बंगाली, भैरव, गांधार, पंचम और गुर्जरी के मेल से बनता है ।

ललितान्दोलश्रीका सौराष्ट्रेयजयसाक्षिकौ ।

मल्लहारः सामवेदी च वसन्तः शुद्धभैरवः ॥11॥

पदच्छेदः-ललितान्दोलश्रीका सौराष्ट्रेय जयसाक्षिकौ मल्लहारः सामवेदी च वसन्तः शुद्धभैरवः

अनव्य-ललितान्दोलश्रीका-यह राग एक पुरुष राग है। भारतीय संगीत शास्त्रों में 6 पुरुष राग और 36 रागिनियों का वर्णन किया गया है। ये 6 पुरुष राग है - राग भैरव, राग मालकौंस, राग हिंडोल, राग श्री, राग दीपक और राग मेघ-मल्हार। यह पूर्वी थाट का प्राचीन राग है। इस राग के स्वरों की स्थिति और उन्हें गाने की पद्धति के कारण राग श्री गायन वादन के लिए कठिन है। यह वक्रता लिए हुए एक मींड प्रधान राग है। इस राग का वादी रिषभ और संवादी पंचम है। इस राग का विस्तार रिषभ को केंद्र में रखते हुए किया जाता है। रिषभ-पंचम-रिषभ की मींड प्रधान संगती और अवरोह में रे१' नि ध१ प ; ध१ म ग रे१ ; सा ये स्वर इस राग का रूप दर्शाते है।, सौराष्ट्रेयजयसाक्षिकौ-एक राग जिसका राग मल्हार, मल्लहारः -मल्हार राग अथवा मेघ मल्हार, यह हिंदुस्तानी व कर्नाटिक संगीत का है। मल्हार राग गाने से वर्षा काआमन्त्रण होता है। मल्हार राग को कर्नाटिक शैली में मधायामावती कहा जाता है, सामवेदी-संगीत विद्या को सर्वाधिक सुखकर या आनन्ददायक माना गया है। अतः साम का अर्थ भी संगीत अथवा गान है, मान्यता है कि समस्त स्वर, ताल, लय, छंद, गति, मन्त्र, स्वर-चिकित्सा, राग नृत्य मुद्रा, भाव आदि सामवेद से ही निकले है, च-और, वसन्तः -राग बसंत या राग वसंत शास्त्रीय संगीत की हिंदुस्तानी पद्धति का राग है। वसंत का अर्थ वसंत ऋतु से है, इसे विशेष रूप से वसंत ऋतु में गाया बजाया जाता है। इसके आरोह में पाँच तथा अवरोह में सात

स्वर होते है। अतः यह औडव-संपूर्ण जाति का राग है। वसंत ऋतु में गाया जाने के कारण इस राग में होलियाँ अथवा होरी बहुतायत् सुननें को मिलती है। यह प्रसन्नता तथा उत्फुल्लता का राग है। ऐसा माना जाता है कि इसके गाने व सुनने से मन प्रसन्न हो जाता है। इसका गायन समय रात का अंतिम प्रहर है किंतु यह दिन या रात में किसी समय भी गाया बजाया जा सकता है, शुद्धभैरवः -इस राग की उत्पत्ति ठाठ भैरवी से मानी गई है। इसमें रे, ग, ध और नि, कोमल लगते है और म को वादी तथा सा को संवादी स्वर माना गया है, यह एक अत्यंत मधुर राग है और इस कारण इसे सिर्फ़ प्रात: समय ही नहीं बल्कि हर समय गाया एवं बजाया जा सकता है।वैसे राग भैरव प्रभात बेला का प्रसिद्ध राग है। इसका वातावरण भक्ति रस युक्त गांभीर्य से भरा हुआ है। यह भैरव थाट का आश्रय राग है। इस राग में रिषभ और धैवत स्वरों को हिलता डुलता हुआ झोके खाता हुआ करके लगाया जाता है जैसे - सा रे१ ग म रे१ रे१ सा। इसमें मध्यम से मींड द्वारा गंधार को स्पर्श करते हुए रिषभ पर आंदोलन करते हुए रुकते है। इसी तरह ग म ध१ ध१ प में निषाद को स्पर्श करते हुए धैवत पर आंदोलन किया जाता है। इस राग में गंधार और निषाद का प्रमाण अवरोह में अल्प है। इसके आरोह में कभी कभी पंचम को लांघकर मध्यम से धैवत पर आते है जैसे - ग म ध१ ध१ प।

भावार्थ-ललितान्दोलश्रीका राग एक पुरुष राग है। भारतीय संगीत शास्त्रों में 6 पुरुष राग और 36 रागिनियों का वर्णन किया गया है। ये 6 पुरुष राग है - राग भैरव, राग मालकौंस, राग हिंडोल, राग श्री, राग दीपक और राग मेघ-मल्हार। यह पूर्वी थाट का प्राचीन राग है। इस राग के स्वरों की स्थिति और उन्हें गाने की पद्धति के कारण राग श्री गायन वादन के लिए कठिन है। यह वक्रता लिए हुए एक मींड प्रधान राग है। इस राग का वादी रिषभ और संवादी पंचम है। इस राग का विस्तार रिषभ को केंद्र में रखते हुए किया जाता है। रिषभ-पंचम-रिषभ की मींड प्रधान संगती और अवरोह में रे१' नि ध१ प ; ध१ म ग रे१ ; सा ये स्वर इस राग का रूप दर्शाते है, एक राग जिसका राग मल्हार, अथवा मेघ मल्हार, यह हिंदुस्तानी व कर्नाटिक संगीत का है। मल्हार राग गाने से वर्षा काआमन्त्रण होता है। मल्हार राग को कर्नाटिक शैली में मधायामावती कहा जाता है।राग सामवेदी संगीत विद्या को सर्वाधिक सुखकर या आनन्ददायक माना गया है। साम का अर्थ भी संगीत अथवा गान है, मान्यता है कि समस्त स्वर, ताल, लय, छंद, गति, मन्त्र, स्वर-चिकित्सा, राग नृत्य मुद्रा, भाव आदि सामवेद से ही निकले है, और राग बसंत या राग वसंत शास्त्रीय संगीत की हिंदुस्तानी पद्धति का राग है। वसंत का अर्थ वसंत ऋतु से है, इसे विशेष रूप से वसंत ऋतु में गाया बजाया जाता है। इसके आरोह में पाँच तथा अवरोह में सात स्वर होते है। अतः यह औडव-संपूर्ण जाति का राग है। वसंत ऋतु में गाया जाने के कारण इस राग में होलियाँ अथवा होरी बहुतायत् सुननें को मिलती है। यह प्रसन्नता तथा

उत्फुल्लता का राग है। ऐसा माना जाता है कि इसके गाने व सुनने से मन प्रसन्न हो जाता है। इसका गायन समय रात का अंतिम प्रहर है किंतु यह दिन या रात में किसी समय भी गाया बजाया जा सकता है, इस राग की उत्पत्ति ठाठ भैरवी से मानी गई है। इसमें रे, ग, ध और नि, कोमल लगते है और म को वादी तथा सा को संवादी स्वर माना गया है, यह एक अत्यंत मधुर राग है और इस कारण इसे सिर्फ़ प्रात: समय ही नहीं बल्कि हर समय गाया एवं बजाया जा सकता है।वैसे राग भैरव प्रभात बेला का प्रसिद्ध राग है। इसका वातावरण भक्ति रस युक्त गांभीर्य से भरा हुआ है। यह भैरव थाट का आश्रय राग है। इस राग में रिषभ और धैवत स्वरों को हिलता डुलता हुआ झोके खाता हुआ करके लगाया जाता है जैसे - सा रे१ ग म रे१ रे१ सा। इसमें मध्यम से मींड द्वारा गंधार को स्पर्श करते हुए रिषभ पर आंदोलन करते हुए रुकते है। इसी तरह ग म ध१ ध१ प में निषाद को स्पर्श करते हुए धैवत पर आंदोलन किया जाता है। इस राग में गंधार और निषाद का प्रमाण अवरोह में अल्प है। इसके आरोह में कभी कभी पंचम को लांघकर मध्यम से धैवत पर आते है जैसे- ग म ध१ ध१ प।

वेलावली च भूपालः सोमरागस्तथैव च ।

एते रागास्तु गातव्याः प्रातःकाले विशेषतः ॥ 12॥

पदच्छेदः-वेलावली च भूपालः सोमरागः तथैव च एते रागास्तु गातव्याः प्रातःकाले विशेषतः

अनव्य-वेलावली-संगीत में एक राग वेलावली, च-और, भूपालः -यह राग कल्याण थाट जन्य राग है, इसमें वर्जित स्वर- म, नि है इसकी जाति- औडव-औडव, इसका वादी स्वर-ग, तथा संवादी स्वर-ध, तथा इसके गायन का समय रात्रि का प्रथम प्रहर है। इस राग का चलन मुख्यत: मन्द्र और मध्य सप्तक के प्रतह्म हिस्से में होती है (पूर्वांग प्रधान राग)। इस राग में ठुमरी नहीं गायी जाती मगर, बड़ा खयाल, छोटा खयाल, तराना आदि गाया जाता है। कर्नाटक संगीत में इसे मोहन राग कहते है। आरोह- सा, रे, ग, प, ध, सा, अवरोह- सां, ध, प, ग, रे, सा तथा पकड़- पडडग ध प ग, ग रे सा ध़, सा रे ग, प ग, ध प, ग रे सा होती है, सोमरागः-संगीत में एक प्रकार का राग, तथैव च-और उसी प्रकार, एते रागास्तु-ये राग, गातव्याः -गानें चाहिए, प्रातःकाले-सुबह के समय, विशेषतः -विशेष रूप से

भावार्थ-संगीत में एक राग वेलावली और राग भूपाल, यह राग कल्याण थाट जन्य राग है, इसमें वर्जित स्वर- म, नि है इसकी जाति- औडव-औडव, इसका वादी स्वर-ग, तथा संवादी स्वर-ध, तथा इसके गायन का समय रात्रि का प्रथम प्रहर है। इस राग का चलन मुख्यत: मन्द्र और मध्य सप्तक के प्रतह्म हिस्से में होती है (पूर्वांग प्रधान राग)। इस राग में ठुमरी नहीं गायी जाती है, लेकिन बड़ा खयाल, छोटा खयाल, तराना आदि गाया जाता है। कर्नाटक संगीत में इसे मोहन राग कहते है। आरोह- सा, रे, ग, प, ध, सा, अवरोह- सां, ध, प, ग, रे, सा तथा पकड़- पडडग ध प ग, ग रे सा ध़, सा रे ग, प ग, ध

प, ग रे सा होती है। संगीत में एक प्रकार का सोमराग, और उसी प्रकार ये राग विशेष रूप से सुबह के समय गानें चाहिए।

शङ्कराभरणः पूर्वो बलहंसस्तथैव च ।

देशी मनोहरी चैव सावेरी दोम्बुली तथा ॥13॥

पदच्छेदः-शङ्करा भरणः पूर्वो बलहंसः तथैव च देशी मनोहरी चैव सावेरी दोम्बुली तथा

अनव्य-शङ्कराभरणः-संपूर्णा जाति का राग जो नटनारायण राग का पुत्र माना जाता है । इसके गाने का समय प्रभात है, और किसी किसी के मत से सायंकाल में १६ दंड से दंड तक भी गाया जा सकता है, पूर्वो-राग पूर्वी सायंकाल संधि प्रकाश के समय गाया जाने वाला राग है। यह पूर्वांग प्रधान राग है। इस राग का विस्तार मन्द्र तथा मध्य सप्तक में अधिक होता है। इस राग की प्रकृति गम्भीर है। आरोह और अवरोह दोनों में तीव्र मध्यम का प्रयोग होता है तथा शुद्ध मध्यम का प्रयोग केवल अवरोह में वक्रता से किया जाता है। जैसे-प म् ग म ग-अर्थात् शुद्ध मध्यम, गंधार के बीच में रहता है और यही राग वाचक स्वर समूह है। पंचम स्वर पर अधिक ठहराव न करते हुए और उक्त राग वाचक स्वर लेने से राग पूरिया धनाश्री से बचा जाता है। तार षडज पर जाते समय पंचम को दुर्बल किया जाता है जैसे - म् ध नि सा', बलहंसस्तथैव च-वैसे ही एक प्रकार का राग, देशी-देशी, मनोहरी-मनोहरी, चैव-और, सावेरी-संगीत में एक प्रकार की भैरव थाट की रागिनी, दोम्बुली तथा-तथा एक प्रकार की रागनी

भावार्थ-संपूर्णा जाति का राग जो नटनारायण राग का पुत्र माना जाता है । इसके गाने का समय प्रभात है, और किसी किसी के मत से सायंकाल में 16 दंड से दंड तक भी गाया जा सकता है, राग पूर्वी सायंकाल संधि प्रकाश के समय गाया जाने वाला राग है। यह पूर्वांग प्रधान राग है। इस राग का विस्तार मन्द्र तथा मध्य सप्तक में अधिक होता है। इस राग की प्रकृति गम्भीर है। आरोह और अवरोह दोनों में तीव्र मध्यम का प्रयोग होता है तथा शुद्ध मध्यम का प्रयोग केवल अवरोह में वक्रता से किया जाता है। जैसे - प म् ग म ग-अर्थात् शुद्ध मध्यम, गंधार के बीच में रहता है और यही राग वाचक स्वर समूह है। पंचम स्वर पर अधिक ठहराव न करते हुए और उक्त राग वाचक स्वर लेने से राग पूरिया धनाश्री से बचा जाता है। तार षडज पर जाते समय पंचम को दुर्बल किया जाता है जैसे - म् ध नि सा। वैसे ही एक प्रकार का देशी राग, मनोहरी और सावेरी संगीत में एक प्रकार की भैरव थाट की रागिनी, तथा दोम्बुली क्रमशः होते है।

काम्भोजी गोपिकाम्भोजी कैशिकी मधुमाधवी ।

बहुलीद्वयं मुखारी च तथा मङ्गलकौशिका ॥14॥

पदच्छेदः-काम्भोजी गोपिकाम्भोजी कैशिकी मधुमाधवी बहुलीद्वयं मुखारी च तथा मङ्गलकौशिका

अनव्य-काम्भोजी-काम्भोजी,गोपिकाम्भोजी-गोपिकाम्भोजी,कैशिकी-कैशिकी, मधुमाधवी-मधुमाधवी, बहुलीद्वयं-बहुलीद्वय, मुखारी च-और, मुखारी, तथा-तथा, मङ्गलकौशिका

भावार्थ-काम्भोजी, गोपिकाम्भोजी, कैशिकी, मधुमाधवी, बहुलीद्वय, और, मुखारी, तथा मङ्गलकौशिका ये रागिनियाँ क्रमशः होती है।

एते रागविशेषास्तु मध्यान्हे परिकीर्तिताः ।

शुद्धनाटा च सालङ्गो नाटी शुद्धवराटिका ॥ 15 ॥

पदच्छेदः-एते रागविशेषः तू मध्यान्हे परिकीर्तिताः शुद्धनाटा च सालङ्गो नाटी शुद्धवराटिका

अनव्य-एते-ये, रागविशेषः -राग विशेष, तू-तो, मध्यान्हे-दोपहर में, परिकीर्तिताः -गानें चाहिए, शुद्धनाटा च-शुद्धनाटा और, सालङ्गो-संगीत में तीन तरह रागों में से एक प्रकार का राग है। यह वह राग है, जो बिलकुल शुद्ध तथा जिसमें किसी और राग का मेल नहीं होता है, परन्तु फिर भी किसी राग का आभास जान पड़ता है, नाटी-इसमें सभी शुद्ध स्वर लगते है, शुद्धवराटिका-शुद्धवराटिका

भावार्थ-ये रागविशेष जैसे शुद्धनाटा, सालङ्ग संगीत में तीन तरह रागों में से एक प्रकार का राग है। यह वह राग है, जो बिलकुल शुद्ध तथा जिसमें किसी और राग का मेल नहीं होता है, नाटी, शुद्धवराटिका दोपहर के समय गानें चाहिए।

गौलो मालवगौडश्च श्रीरागश्चाहरी तथा।

तथा रामकृती रञ्जी छाया सर्ववराटिका ॥16॥

पदच्छेदः-गौलो मालवगौड श्च श्रीरागश्चाहरी तथा तथा रामकृती रञ्जी छाया सर्ववराटिका

अनव्य-गौलो-संध्या समय गाई जानेवाली संपूर्ण राग की एक रागिनी, मालवगौड़श्च-षाड़व जाति का एक संकर राग जिसमें पंचम स्वर वर्जित है, इसका प्रयोग वीर रस के रागों के लिए किया जाता है तथा इसके स्वरग्राम इस प्रकार है-म, ध, नि, स, रि, ग, म, यह एक संपूर्ण जाति का राग माना जाता है, श्रीरागश्चा-संगीत में छह रागों में से तीसरा राग, जो संपूर्ण जाति का है और इसकी उत्पत्रति पृथ्वी की नाभि से माना गया है, और इसके स्वर ग्राम -सा रे ग म प ध नि सा अथवा नि ग म प ध नि सा रे है। यह हेमंत ऋतु में तीसरे पहर या संध्या समय गाया जाता है, हरी तथा-इसमें १४ वर्ण होते है तथा जिसके प्रत्येक चरण में जगण, रगण, जगण, रगण, और अंत में लघु गुरु होते है, तथा रामकृती-तथा रामकृती, रञ्जी-एक प्रकार का राग, छाया-एक रागिनी,आर्या छंद का भेद जिसमें १७ गुरु और लघु होते है, सर्ववराटिका-एक रागिनी

भावार्थ-राग रागिनी के क्रम में गौलो संध्या समय गाई जानेवाली संपूर्ण राग की एक रागिनी, मालवगौड़श्च-षाड़व जाति का एक संकर राग जिसमें पंचम स्वर वर्जित है, इसका प्रयोग वीर रस के रागों के लिए किया जाता है तथा इसके स्वरग्राम इस प्रकार है-म, ध, नि, स, रि, ग, म, यह एक संपूर्ण जाति का राग माना जाता है, श्रीरागश्चा-संगीत में छह रागों में से तीसरा राग, जो संपूर्ण जाति का है और इसकी उत्पत्ति पृथ्वी की नाभि से माना गया है, और इसके स्वर ग्राम -सा रे ग म प ध नि सा अथवा नि ग म प ध नि सा रे है। यह हेमंत ऋतु में तीसरे पहर या संध्या समय गाया जाता है, हरी तथा-इसमें १४ वर्ण होते है तथा जिसके प्रत्येक चरण में जगण, रगण, जगण, रगण, और अंत में लघु गुरु होते है। तथा रामकृती, सर्ववराटिका-एक रागिनी, रञ्जी-एक प्रकार की राग रागिनी, छाया-एक रागिनी,आर्या छंद का भेद जिसमें १७ गुरु और लघु होते है।

बराटिका द्रावटिका देशी नागवराटिका ।

कर्णाटहयगौडीति इत्येते चन्द्रमांशजाः ॥17॥

पदच्छेदः-बराटिका द्रावटिका देशी नागवराटिका कर्णाटहय गौडीत इत्येते चन्द्रमा अशजाः

अनव्य-बराटिका- भैरव राग की एक रागिनी, वराटिका के गाने का समय दिन में पच्चीस से अट्ठाईस दंड तक है, द्रावटिका, देशी, नागवराटिका, कर्णाटहय, गौडीत-गौडी, इत्येते-ये सब, चन्द्रमांशजाः -चन्द्रमा के अंश

भावार्थ- भैरव राग की एक रागिनी, वराटिका के गाने का समय दिन में पच्चीस से अट्ठाईस दंड तक है, द्रावटिका, देशी, नागवराटिका, कर्णाटहय, गौडी ये सब चन्द्रमा के अंश से उतपन्न है।

एते रागविशेषास्तु प्रातःकाले तु देवताः ।

सायमेषां प्रगानेन तस्य श्रीरतुला भवेत् ॥18॥

पदच्छेदः-एते रागविशेषास्तु प्रातःकाले तु देवताः सायमेषां प्रगानेन तस्य श्रीरतुला भवेत्

अनव्य-एते-ये, रागविशेषास्तु-विशेष राग तो, प्रातःकाले तु-प्रात काल, देवताः -सूर्य के, सायमेषां-शाम में इसके, प्रगानेन-गानें से, श्रीरतुला-उसकी आभा अतुलनीय, भवेत्-हो

भावार्थ-ये विशेष राग तो प्रात काल और शाम में इसके गानें से सूर्य की आभा अतुलनीय होती है।

ईशानं च हरिं स्मृत्वा मध्याह्नादेरनन्तरम् ।

रागतः श्रृण्वतो वापि सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ 19 ॥

पदच्छेदः-ईशानं च हरिं स्मृत्वा मध्याह्न आदेरनन्तरम् रागतः श्रृण्वतो वापि सर्वपापैः प्रमुच्यते

अनव्य-ईशानं च-ईशान, हरिं स्मृत्वा-विष्णु को याद करके, मध्याह्न-दोपहर, आदेरनन्तरम्-आरम्भ के पश्चात, रागतः -राग से, शृण्वतो-सुनते हुए, वापि-भी, सर्वपापैः -सभी पापों से, प्रमुच्यते-मुक्त हो जाता है

भावार्थ-ईशान दिशा में विष्णु को याद करके दोपहर अर्थात आरम्भ के पश्चात दोपहर के समय जो भी रागों को सुनते है, वो सभी पापों से मुक्त हो जाता है।

प्रहरैकोदयादर्वाक् प्रहरैकोदयोपरि।

देशाक्षी भैरवा शुद्धा नादं यत्प्रहरोद्भवम् ॥ 20॥

पदच्छेदः-प्रहरैक उद्याद् अर्वाक् प्रहरैकोदयोपरि। देशाक्षी भैरवा शुद्धा नादं यत् प्रहरो उद्भवम्

अनव्य-प्रहरैक-एक प्रहर, उदय अर्वाक्-उदय के समीप, प्रहरैकोदयोपरि-प्रहर एक उदय के ऊपर, देशाक्षी भैरवा-सूर्योदय व सूर्यास्त के तीन घंटे पहले गाये जानें वाले राग को देशाक्षी,भैरवा व शुद्धा कहते है, नादं-नाद, यत्प्रहरोद्भवम्-जो प्रहर का उद्भव है

भावार्थ-उदय से एक प्रहर पहले और उदय के एक प्रहर के बाद प्रहर से उतपन्न देशाक्षी,भैरवा व शुद्धा नाद होते है।

वराटिका तथा शुद्धा द्रावटीरागसंज्ञिका ।

प्रहरोपरि गातव्या मल्हारी माहुरी तथा ॥21॥

पदच्छेदः-वराटिका तथा शुद्धा द्रावटीराग संज्ञिका । प्रहरोपरि गातव्या मल्हारी माहुरी तथा

अनव्य-वराटिका-वराटिका का अर्थ घोंघे की तरह के एक समुद्री कीड़े का कड़ा अस्थि आवरण जिसको शंख के नाम से भी जाना जाता है, यह भैरव राग की रागिनी है इसको गानें का समय दिन में पच्चीस से अट्ठाईस दंड अथवा पैमाना तक है, तथा-तथा, शुद्धा-जब स्वर अपनी निश्चित श्रुतियों पर स्थित होते है तो उन्हें शुद्ध स्वर कहते है जैसे अपने मूल रूप में प्रतिष्ठित स, रे, ग, म, प, ध, नि, ये सात शुद्ध स्वर है। इन सात शुद्ध स्वरों में से षड्ज और पंचम ये दो अचल स्वर है क्योंकि ये अपने निश्चित स्थान पर स्थिर रहते है, अतः इनके दो रूप नहीं हो सकते, द्रावटीराग-राग द्रावटी, संज्ञिका-संज्ञा दी जाती है, प्रहरोपरि-प्रहर के ऊपर, गातव्या-गानें चाहिए, मल्हारी-मल्हारी, माहुरी तथा-तथा माहुरी

भावार्थ-वराटिका का अर्थ घोंघे की तरह के एक समुद्री कीड़े का कड़ा अस्थि आवरण जिसको शंख के नाम से भी जाना जाता है, यह भैरव राग की रागिनी है इसको गानें का समय दिन में पच्चीस से अट्ठाईस दंड है, तथा जब स्वर अपनी निश्चित श्रुतियों पर स्थित होते है तो उन्हें शुद्ध स्वर कहते है जैसे अपने मूल रूप में प्रतिष्ठित स, रे, ग, म, प, ध, नि, ये सात शुद्ध स्वर है। इन सात शुद्ध स्वरों में से

षड्ज और पंचम ये दो अचल स्वर है क्योंकि ये अपने निश्चित स्थान पर स्थिर रहते है, अतः इनके दो रूप नहीं हो सकते, राग द्रावटी संज्ञा से युक्त प्रहर के ऊपर मल्हारी तथा माहुरी गानें चाहिए।

आन्दोली च रामकृती छायानाटा च रङ्गका।

मध्याह्नात्परतो यामे गौडरागानि यानि च ॥ 22॥

पदच्छेदः-आन्दोली च रामकृती छायानाटा च रङ्गका। मध्याह्नात्परतो यामे गौडरागानि यानि च

अनव्य-आन्दोली च-आन्दोली और, रामकृती-आठ नायिकाएं आठ अलग-अलग राज्यों का प्रतिनिधित्व करती है, उनमें से एक, छायानाटा या छायानट-इस राग को राग छाया भी कहते है। यह छाया और नट रागों का मिश्रित रूप है। शुद्ध मध्यम का प्रयोग आरोह और अवरोह में समान रूप से किया जाता है। परन्तु तीव्र मध्यम का प्रयोग मात्र आरोह में ही होता है और कहीं नहीं होता यथा ध म् प या प ध म् प या म् प ध प। आरोह में शुद्ध निषाद को कभी-कभी छोड़कर तार सप्तक के सा' पर इस तरह से जाते है जैसे - रे ग म प ; प ध प प सा'। इसी तरह तार सप्तक के सा' से पंचम पर मींड द्वारा आने से राग का वातावरण बनता है। इसके पूर्वांग में रे ग म प तथा उत्तरांग में प ध नि सा' अथवा प सा' सा' रे' इस तरह जाते है, च रङ्का-और रङ्का, मध्याह्नात्परतो-मध्याह्न से परे, यामे-और जो, गौडरागानि-गौड़ रागनी, यानि च-और जो

भावार्थ-आन्दोली और, नाट्यशास्त्र में आठ प्रकार की नायिकाओं का वर्णन किया है, ये आठ नायिकाएं आठ अलग-अलग राज्यों का प्रतिनिधित्व करती है, उनमें से एक रामकृती छायानाटा या छायानट-इस राग को राग छाया भी कहते है। यह छाया और नट रागों का मिश्रित रूप है। शुद्ध मध्यम का प्रयोग आरोह और अवरोह में समान रूप से किया जाता है। परन्तु तीव्र मध्यम का प्रयोग मात्र आरोह में ही होता है और कहीं नहीं होता यथा ध म् प या प ध म् प या म् प ध प। आरोह में शुद्ध निषाद को कभी-कभी छोड़कर तार सप्तक के सा' पर इस तरह से जाते है जैसे - रे ग म प ; प ध प प सा'। इसी तरह तार सप्तक के सा' से पंचम पर मींड द्वारा आने से राग का वातावरण बनता है। इसके पूर्वांग में रे ग म प तथा उत्तरांग में प ध नि सा' अथवा प सा' सा' रे' इस तरह जाते है, और रङ्का, ये मध्याह्न से परे होते है वे गौड़ रागनी कहे जाते है।

त्रियामोपरि गातव्या शुद्धसालङ्गनाटिका।

एवं कालविधिं ज्ञात्वा गायेद्यः स सुखी भवेत् ॥23॥

पदच्छेदः-त्रियामोपरि गातव्या शुद्धसालङ्ग नाटिका एवं कालविधिं ज्ञात्वा गायेद्यः स सुखी भवेत्

अनव्य-त्रियामोपरि-तीनों से ऊपर, गातव्या-गानीं चाहिए, शुद्धसालङ्ग-संगीत में तीन तरह रागों में से एक प्रकार का राग है। यह वह राग है, जो बिलकुल शुद्ध तथा जिसमें किसी और राग का मेल नहीं

होता है, परन्तु फिर भी किसी राग का आभास जान पड़ता है, नाटिका-भारतीय शास्त्रीय संगीत में नृत्य और नृत्यनाटिकाओं का रूप, एवं कालविधिं-इस प्रकार समय की विधि को, ज्ञात्वा-जानकर, गायेद्यः -जो गाये जाते है, स सुखी भवेत्-वह सुखी हों।

भावार्थ-तीनों से ऊपर संगीत में तीन तरह रागों में से एक प्रकार का राग है। यह वह राग है, जो बिलकुल शुद्ध तथा जिसमें किसी और राग का मेल नहीं होता है, परन्तु फिर भी किसी राग का आभास जान पड़ता है, भारतीय शास्त्रीय संगीत में नृत्य और नृत्यनाटिकाओं में गायी जाती है। इस प्रकार जो समय की विधि को ज्ञान पूर्वक जानकर गाये जाते है, वह सुखी होता है।

रागावेलाप्रगानेन रागाणां हिंसको भवेत् ।

यः शृणोति स दारिद्री आयुर्नश्यति सर्वदा ॥ 24 ॥

पदच्छेदः-रागावेलाप्रगानेन रागाणां हिंसको भवेत् यः शृणोति स दारिद्री आयुर्नश्यति सर्वदा

अनव्य-रागावेलाप्रगानेन-रागों को समय पर न गानें से, रागाणां-जो रागों में, हिंसको भवेत्-हिंसक होता है, यः शृणोति-जो सुनता है, स दारिद्री-वह दरिद्र, आयुर्-आयु का, नश्यति- ह्रास अथवा नाश होना।

भावार्थ-राग जब हिंसक प्रवृति का होता है और जब रागों को समय के अनुरूप न गाया जाता है, तो असमय इस राग के श्रोता दरिद्रता को प्राप्त होता है और साथ ही आयु का ह्रास अथवा नाश होता है।

देवताविषये गीतं पुण्यनामप्रवर्द्धनम् ।

आध्यात्मिकैव (ध्यात्मिकेन योगेन) योगेन सर्वपापप्रणाशनम् ॥25॥

पदच्छेदः-देवताविषये गीतं पुण्यनाम प्रवर्द्धनम् आध्यात्मिकैव योगेन सर्वपाप प्रणाशनम्

अनव्य-देवताविषये-देवताओं के विषय, गीतं-संगीत में बोल कर जिसे गाया जाता है, पुण्यनाम-मंगलकारक व शुभता को बढ़ानें वाले नाम, प्रवर्द्धनम्-वृद्धि करनें वाला, आध्यात्मिकैव-आध्यात्मि ही, योगेन-योग से, सर्वपाप-सभी पापों को, प्रणाशनम्-को नष्ट करनें वाला है।

भावार्थ-देवताओं के विषयभूत गीत रूपी नाम का स्मरण जो मंगलकारक होते है, वह पुण्य को और शुभता को बढ़ानें वाले तथा आध्यात्मिक योग से सभी पापों को नष्ट करनें वाला है।

विवाहसमये दानदेवतास्तुतिसंयुते ।

अबलरागमाकर्ण्य (अबेलराग) न दोषों भैरवी विना ॥26॥

पदच्छेदः-विवाहसमये दानदेवता स्तुतिसंयुते अबलरागम् आकर्ण्य (अबेलराग) न दोषों भैरवी बिना

अनव्य-विवाहसमये-विवाह के समय, दानदेवता-दान देने से देव नाम पड़ता है, स्तुतिसंयुते-स्तुति से युक्त होनें पर, अबलरागम्-बल से रहित राग, आकर्ण्य -वह राग जो कानों न सुना जाय, न दोषों-दोष नहीं लगता है, भैरवी बिना-राग भैरवी के बिना जो प्रात:काल गाया जानें वाला राग, इस राग की उत्पत्ति ठाठ भैरवी से मानी गई है, इसमें रे, ग, ध और नि, कोमल लगते है और म को वादी तथा सा को संवादी स्वर माना गया है।

भावार्थ-राग भैरवी के बिना जो प्रात:काल गाया जानें वाला राग, इस राग की उत्पत्ति ठाठ भैरवी से मानी गई है, इसमें रे, ग, ध और नि, कोमल लगते है और म को वादी तथा सा को संवादी स्वर माना गया है। विवाह के समय देवता आदि के नाम से दान देने से और स्तुति से युक्त होनें पर देव नाम पड़ता है, राग भैरवी विवाह आदि समारोहों में समापन इसी राग से करने की प्रथा सी बन गयी है यह बलहीन राग स्तुति से युक्त होनें पर भी यदि सुना भी जाय तो दोष नहीं लगता है। क्योंकि राग भैरवी प्रात:काल गाया जानें वाला राग है।

श्रीरागो मालवश्चैव तथा मालवकौशिका ।
सावेरी मेघरञ्जी च हेन्दोला कौशिकी तथा ॥27॥

पदच्छेदः-श्रीरागो मालवश्चैव तथा मालवकौशिका सावेरी मेघरञ्जी च हेन्दोला कौशिकी तथा

अनव्य-श्रीरागो-यह राग श्री पुरुष राग, मालवश्चैव-और मालव राग रात्रि के समय गाया जानें वाला राग, तथा-तथा, मालवकौशिका-मालवकौशिका, सावेरी-सावेरी, मेघरञ्जी-मेघरञ्जी, च हेन्दोला-और हेन्दोला, कौशिकी तथा-तथा कौशिकी

भावार्थ-रागों के क्रम में राग श्री, यह पुरुष राग है, और मालव राग, रात्रि के समय गाया जानें वाला राग, तथा मालवकौशिका, सावेरी, मेघरञ्जी, हेन्दोला तथा कौशिकी रागों की रागिनियाँ इस प्रकार है।

तुण्डी तुरुष्कतुण्डी च बङ्गाली माहुरी तथा ।
देवक्रिया रागहंसी देशाक्षी भैरवी तथा ॥28॥

पदच्छेदः-तुण्डी तुरुष्कतुण्डी च बङ्गाली माहुरी तथा देवक्रिया रागहंसी देशाक्षी भैरवी तथा

अनव्य-तुण्डी-तुण्डी, तुरुष्कतुण्डी-तुरुष्कतुण्डी, च बङ्गाली-और बङ्गाली, माहुरी तथा-तथा माहुरी, देवक्रिया-देवक्रिया, रागहंसी-रागहंसी, देशाक्षी-देशाक्षी, भैरवी तथा-तथा भैरवी

भावार्थ-रागों के क्रम में तुण्डी, तुरुष्कतुण्डी और बङ्गाली और बङ्गाली तथा माहुरी, देवक्रिया, रागहंसी, देशाक्षी तथा भैरवी रागों की रागिनियाँ इस प्रकार है।

सालङ्गभैरवी चान्या कम्भारी च तथा परा।
कर्णाटाह्वयबङ्गाला शुद्धहिन्दोलिका तथा ॥29॥

पदच्छेदः-सालङ्गभैरवी चान्या कम्भारी च तथा परा कर्णाटाह्वय बङ्गाला शुद्धहिन्दोलिका तथा
अनव्य-सालङ्गभैरवी-सालङ्ग, भैरवी, चान्या-च अन्य-और अन्य, कम्भारी च तथा परा-कम्भारी और परा, कर्णाटाह्वय-कर्णाटाह्वय, बङ्गाला-बङ्गाला, शुद्ध हिन्दोलिका तथा-तथा शुद्ध हिन्दोलिका
भावार्थ-राग क्रमशः सालङ्ग, भैरवी, कम्भारी और परा, कर्णाटाह्वय, बङ्गाला तथा शुद्ध हिन्दोलिका होता है।

पुन्नाटः शुद्धनाटश्च तथा सारङ्गनाटिका ।
वेलावली छायनाटी रागङ्गस्तथैव च ॥30॥

पदच्छेदः-पुन्नाटः शुद्धनाटश्च तथा सारङ्ग नाटिका वेलावली छायनाटी रागङ्गस्तथैव च
अव्यय-पुन्नाटः-कर्नाटक संगीत का पुन्नाट, शुद्धनाटश्च-शुद्धनाट, और सारङ्गनाटिका-तथा सारङ्गनाटिका, वेलावली-वेलावली, छायनाटी-छायनाटी, रागङ्ग स्तथैव च-रागों के अङ्ग होते है।
भावार्थ-रागों में क्रमशः कर्नाटक संगीत का पुन्नाट, शुद्धनाट, और तथा सारङ्गनाटिका, वेलावली, छायनाटी रागों के अङ्ग होते है।

वराटी द्रावटी चैव तथा नागवराटिका ।
कर्णाटमिश्रनाटी च तथा शुद्धवराटिका ॥31॥

पदच्छेदः-वराटी द्रावटी चैव तथा नागवराटिका कर्णाटमिश्रनाटी च तथा शुद्धवराटिका
अनव्य-वराटी-वराटी, द्रावटी चैव-द्रावटी, तथा-तथा, नागवराटिका-नागवराटिका, कर्णाटमिश्रनाटी च-कर्णाटमिश्रनाटी, तथा शुद्धवराटिका-और शुद्धवराटिका
भावार्थ-रागों की रागनियों को क्रमशः वराटी, द्रावटी तथा नागवराटिका, और शुद्धवराटिका, कर्णाटमिश्रनाटी होते है।

कौमोदकी मलहरी सारङ्गो बहुलीद्वयम् ।
त्रोटी पहटिका चैव मुखारी मधुमाधवी ॥32॥

पदच्छेदः-कौमोदकी मलहरी सारङ्गो बहुली द्वयम् त्रोटी पहटिका चैव मुखारी मधुमाधवी
अनव्य-कौमोदकी-कौमोदकी, मलहरी-मलहरी, सारङ्गो-सारङ्गो, बहुली द्वयम्-दोनों ही बलवान, त्रोटी-त्रोटी, पहटिका चैव-और पहटिका, मुखारी-मुखारी, मधुमाधवी-मधुमाधवी
भावार्थ-रागों की रागनियों को क्रमशः कौमोदकी, मलहरी, सारङ्ग, त्रोटी, पहटिका, मुखारी और मधुमाधवी होते है।

मल्वारी गुर्जरी चैव सौराष्ट्री ललिता तथा ।
नागध्वनी च काम्भोजी धनाश्री च तथा परा ॥33॥

पदच्छेदः-मल्वारी गुर्जरी चैव सौराष्ट्री ललिता तथा नागध्वनी च काम्भोजी धनाश्री च तथा परा

अनव्य-मल्वारी-मल्वारी, गुर्जरी-राग भैरव की पत्नी है, यह संपूर्ण जाति की रागिनी है । इसमें तीव्र मध्यम और शेष सभी स्वर कोमल लगते है । यह रामकली और ललित को मिलाकर बनती है । समय दिन में गायी जाती है, नागध्वनी-यह संकर रागिनी जो मल्लार और केदार वा सूहा अथवा कान्हडे और सारंग के योग से बनी है सरगम इस प्रकार है-नि सा ऋ ग म प होते है, च काम्भोजी-काम्भोजी और, धनाश्री च-यह एक रागिनी है तथा श्री राग की तीसरी पत्नी मानी जाती है, इसकी जाति षाड़व, ऋषभ वर्जित गृहांशन्यास षड़ज है गाने का समय दिन का दूसरा पहर और तीसरा पहर है तथा सरगम इस प्रकार है- स । ग । म । प । ध । नि । स, तथा परा-चार प्रकार की वाणियों में पहली वाणी परा जो नादस्वरूपा और मूलाधार से निकली हुई मानी जाती है

भावार्थ-रागों की रागनियों को क्रमशः मल्वारी, गुर्जरी-राग भैरव की पत्नी है, यह संपूर्ण जाति की रागिनी है। इसमें तीव्र मध्यम और शेष सभी स्वर कोमल लगते है । यह रामकली और ललित को मिलाकर बनती है। समय दिन में गायी जाती है, चैव-और, सौराष्ट्री-स्त्री जाति की रागिनी सौराष्ट्री, ललिता तथा-पझपुराण, ब्रह्मवैवर्त पुराण आदि के अनुसार राधिका की प्रधान आठ सखियों में से एक रागिनी, इसके बारे में दो मत है 1-यह कि ललिता मेघ राग की पत्नी है 2-ललिता वसंत राग की पत्नी है। इसके स्वरग्राम का प्रकार-स ग म ध नि स अथवा स रे ग म प ध नि स (प्रथम); ध नि स ग म ध (द्वितीय) है, तथा-तथा, नागध्वनी, यह संकर रागिनी जो मल्लार और केदार वा सूहा अथवा कान्हडे और सारंग के योग से बनी है। इसका सरगम इस प्रकार है-नि सा ऋ ग म प होते है, काम्भोजी और, धनाश्री यह एक रागिनी है तथा श्री राग की तीसरी पत्नी मानी जाती है, इसकी जाति षाड़व, ऋषभ वर्जित गृहांशन्यास षड़ज है गाने का समय दिन का दूसरा पहर और तीसरा पहर है तथा सरगम इस प्रकार है-स । ग । म । प । ध । नि । स, और चार प्रकार की वाणियों में पहली वाणी परा जो नादस्वरूपा और मूलाधार से निकली है।

कोलाहरश्छायगौडा रामा दोम्बुलिका तथा।
वसन्तभैरवी चैव सावेरी सैन्धवी तथा ॥34॥

पदच्छेदः-कोलाहर श्र् छायगौडा रामा दोम्बुलिका तथा। वसन्तभैरवी चैव सावेरी सैन्धवी तथा

अनव्य-कोलाहर-कोलाहर, च-और, छायगौडा-छायगौडा, रामा-यह आर्या छँद का 17 वाँ भेद है, जिसमें 11 गुरु और 35 लघु वर्ण होते है, दोम्बुलिका तथा-दोम्बुलिका, वसन्तभैरवी चैव-वसन्तभैरवी, सावेरी-सावेरी एक रागिनी, सैन्धवी तथा-सैन्धवी

भावार्थ-रागों की रागनियों को क्रमशः कोलाहर, छायगौडा, रामा आर्या छँद का 17 वाँ भेद है, जिसमें 11 गुरु और 35 लघु वर्ण होते है, दोम्बुलिका तथा वसन्तभैरवी तथा सावेरी एक रागिनी, सैन्धवी होते है।

अथ गृहस्वराः।

गृह स्वर

जिस स्वर से जिस किसी भी राग का गायन वादन किया जाता उस स्वर को ग्रह स्वर कहा जाता है।

सम्पूर्णरागो देशाक्षी मध्यमादिः प्रकीर्तितः ।
वसन्तभैरवी शुद्ध भैरवी मादितः क्रमात् ॥35॥

पदच्छेदः-सम्पूर्णरागो देशाक्षी मध्यमादिः प्रकीर्तितः वसन्तभैरवी शुद्ध भैरवी मादितः क्रमात्

अनव्य-सम्पूर्णरागो-सम्पूर्ण रागों में देशाक्षी, मध्यमादिः-मध्यम आदिः-सात स्वरों में से चौथे स्वर को 'म' है, प्रकीर्तितः-कहे गये है, वसन्तभैरवी-वसन्तभैरवी, शुद्ध भैरवी-शुद्ध भैरवी, मादितः-आदि को, क्रमात्-क्रम से

भावार्थ-सम्पूर्ण रागों में देशाक्षी, सात स्वरों में से चौथे स्वर को 'म' है, वसन्तभैरवी, शुद्ध भैरवी आदि को क्रम से कहा गया है।

सम्पूर्णमालवीरागो गान्धारादिः प्रकीर्तितः।
नाटरागश्च सम्पूर्णः स षड्जादिरुदाहृतः ॥36॥

पदच्छेदः-सम्पूर्ण मालवी रागो गान्धारादिः प्रकीर्तितः नाटरागश्च सम्पूर्णः स षड्ज आदि रुदाहृतः

अनव्य-सम्पूर्णमालवीरागो-सभी मालवी राग, गान्धारादिः-गान्धार आदि, प्रकीर्तितः -कहे गये है, नाटरागश्च-और नाटराग, सम्पूर्णः-सम्पूर्ण, स-वह, षड्जादि-षड्ज आदि, रुदाहृतः -उदाहरणया दृष्टांत के रूप में प्रयुक्त है।

भावार्थ-सभी मालवी राग गान्धार आदि को कहा गया है। और सम्पूर्ण नाटराग षड्ज आदि उदाहरणया दृष्टांत के रूप में प्रयुक्त किया गया है।

मुखहारी च सम्पूर्णो धैवतादिर्निगद्यते ।
सम्पूर्णश्चाहरी प्रोक्तो मध्यमादिरुपक्रमः ॥37॥

पदच्छेदः-मुखहारी च सम्पूर्णो धैवतादि र्निगद्यते सम्पूर्णश्चाहरी प्रोक्तो मध्यमादि रुपक्रमः

अनव्य-मुखहारी च-मुखहारी और, सम्पूर्णो-सम्पूर्ण, धैवतादि-धैवत आदि संगीत के सात स्वरों में से छठा स्वर ध जो मध्यम के आगे खींचा जाता है, घोड़े के हिनहिनाने के समान जो स्वर निकलता है, वह धैवत है। यह षाड़व जाति का स्वर माना गया है, इस राग की क्रमशः तीन श्रुतियाँ रोहिणी, रम्या,

और मदती है, र्निगद्यते-निर्धारण किया गया है, सम्पूर्णः श्च हरी-राग में लगने वाले स्वरों से राग की जाति निश्चित होती है. राग में कम से कम पांच स्वर अवश्य लगने चाहिए, इसी प्रकार कुछ रागों में सात स्वरों का, कुछ स्वर में छह स्वरों का और कुछ में पांच स्वरों का प्रयोग होता है। इस आधार पर मुख्य रूप से राग की तीन जातियाँ मानी गयी है 1. सम्पूर्ण जाति-यह सात स्वरों से युक्त होता है, 2. षाडव जाति-यह छह स्वरों से युक्त होता है और 3.औडव जाति-यह पांच स्वरों से युक्त होता है। 1.सम्पूर्ण जाति-जब किसी राग में सातों स्वरों का प्रयोग होता है और किसी प्रकार का कोई स्वर वर्जित नही होता तो उसे सम्पूर्ण जाति का राग कहते है, इस श्रेणी में यमन, बिलावल, भैरव आदि राग आते है, 2.षाडव जाति-जिस राग में छह स्वरों का प्रयोग होता है, लेकिन जब इसमें एक स्वर वर्जित हो जाता है तब यह षाडव जाति का राग कहलाता है, वह राग मारवा है। तथा 3.औडव जाति-वह राग जिसमें दो स्वर वर्जित करके केवल पांच स्वरों का प्रयोग होता है, उसे औडव जाति का राग कहते है, उदाहरण के रूप में भूपाली राग को औडव जाति का राग कहा जाता है और, हरी-हरी, प्रोक्तो-कहा गया है, मध्यमादि-सात स्वरों में से चौथे स्वर को 'म' आदि है, रुपक्रमः-रुपों के क्रम मे

भावार्थ-मुखहारी और राग सम्पूर्ण, तथा धैवत आदि संगीत के सात स्वरों में से छठवाँ स्वर ध है तथा जो मध्यम के आगे खींचा जाता है, एक घोड़े के हिनहिनाने के समान होत है, उससे जो स्वर निकलता है, वह धैवत है। इसको षाड़व जाति का स्वर माना गया है, इस राग की क्रमशः तीन श्रुतियाँ रोहिणी, रम्या, और मदती है, र्निगद्यते-निर्धारण किया गया है, राग में लगने वाले स्वरों से राग की जाति निश्चित होती है. राग में कम से कम पांच स्वर अवश्य लगने चाहिए, इसी प्रकार कुछ रागों में सात स्वरों का, कुछ स्वर में छह स्वरों का और कुछ में पांच स्वरों का प्रयोग होता है। राग सम्पूर्ण-इस आधार पर मुख्य रूप से राग की तीन जातियाँ मानी गयी है, 1.सम्पूर्ण जाति-यह सात स्वरों से युक्त होता है, 2.षाडव जाति-यह छह स्वरों से युक्त होता है और 3.औडव जाति-यह पांच स्वरों से युक्त होता है। 1.सम्पूर्ण जाति-जब किसी राग में सातों स्वरों का प्रयोग होता है और किसी प्रकार का कोई स्वर वर्जित नही होता तो उसे सम्पूर्ण जाति का राग कहते है, इस श्रेणी में यमन, बिलावल, भैरव आदि राग आते है, 2.षाडव जाति-जिस राग में छह स्वरों का प्रयोग होता है, लेकिन जब इसमें एक स्वर वर्जित हो जाता है तब यह षाडव जाति का राग कहलाता है, वह राग मारवा है। तथा 3.औडव जाति-वह राग जिसमें दो स्वर वर्जित करके केवल पांच स्वरों का प्रयोग होता है, उसे औडव जाति का राग कहते है, उदाहरण के रूप में भूपाली राग को औडव जाति का राग कहा जाता है और, सात स्वरों में से चौथे स्वर को 'म' आदि है। रुपों के क्रम में हरी सा कहा गया है।

बलहंसश्च सम्पूर्णो गान्धारादिः प्रकीर्तितः ।

वसन्तः शुद्धसंज्ञश्च सषड्जादिरुदाहृतः ॥38॥

पदच्छेदः-बलहंसश्च सम्पूर्णो गान्धारादिः प्रकीर्तितः वसन्तः शुद्धसंज्ञश्च सषड्ज आदि रुदाहृतः

अन्वय-बलहंसश्च-बलहंस, सम्पूर्णो-सम्पूर्ण, गान्धार आदि, प्रकीर्तितः-की ख्याति प्राप्त है, वसन्तः-राग वसंत हिंदुस्तानी संगीत पद्धति का राग यह बसंत ऋतु में गाया बजाया जाता है, इसके आरोह में पाँच तथा अवरोह में सात स्वर होते है, इसलिए इसको औडव संपूर्ण जाति का राग कहा जाता है, वैसे तो इसके गानें का समय रात का अंतिम प्रहर है परन्तु यह किसी समय भी गाया बजाया जा सकता है, शुद्धसंज्ञश्च-इसलिए इसको शुद्ध राग के रूप में जाना जाता है, सषड्जादि-संगीत के सात स्वरों में से प्रथम स्वर के रूप से युक्त, रुदाहृतः-उदाहरण दृष्टांत के रूप में प्रयुक्त

भावार्थ-सम्पूर्ण बलहंस को गान्धारआदि की ख्याति प्राप्त है, तथा राग वसंत हिंदुस्तानी संगीत पद्धति का राग यह बसंत ऋतु में गाया बजाया जाता है, इसके आरोह में पाँच तथा अवरोह में सात स्वर होते है, इसलिए इसको औडव संपूर्ण जाति का राग कहा जाता है, वैसे तो इसके गानें का समय रात का अंतिम प्रहर है परन्तु यह किसी समय भी गाया बजाया जा सकता है, इसलिए इसको शुद्ध राग के रूप में जाना जाता है। संगीत के सात स्वरों में से प्रथम स्वर के रूप से युक्त उदाहरण दृष्टांत के रूप में प्रयुक्त होता है। इसका वादी स्वर सा तथा संवादी स्वर म है।

रामक्रिया शुद्धसंज्ञा सषड्जादिरुदाहृता ।

वराटिका शुद्धसंज्ञा सषड्जादिरुपक्रमा ॥39॥

पदच्छेदः-रामक्रिया शुद्धसंज्ञा स षड्ज आदि उदाहृता वराटिका शुद्धसंज्ञा सषड्ज आदिरुप क्रमा

अन्वय-रामक्रिया-रामक्रिया यह शुद्धरामक्रिया जन्य राग है, शुद्धसंज्ञा-शुद्धसंज्ञा, सषड्जादि-षड्ज आदि से युक्त, उदाहृता-उदाहरणीय है, वराटिका-वराटिका, शुद्धसंज्ञा-शुद्धसंज्ञा, सषड्जादिरुपक्रमा-संगीत के सात स्वरों में से पहला स्वर सा के सहित संगीत शास्त्र के अनुसार इस स्वर का उच्चारण नासा, कण्ठ, उर, तालु जीभ और दाँतों के सम्मिलित प्रयत्न से होता है, इसलिए इसका नाम षडज् पड़ा है, आदि के रुप क्रम के अनुसार

भावार्थ-रामक्रिया यह शुद्धरामक्रिया जन्य राग है, इसको शुद्धसंज्ञा षड्ज आदि से युक्त, उदाहरणीय है, वराटिका शुद्धसंज्ञा से युक्त संगीत के सात स्वरों में से पहला स्वर सा के सहित संगीत शास्त्र के अनुसार इस स्वर का उच्चारण नासा, कण्ठ, उर, तालु जीभ और दाँतों के सम्मिलित प्रयत्न से होता है, आदि के रुप क्रम के अनुसार इसलिए इसका नाम षडज् पड़ा है।

एवं सम्पूर्णरागाणां गृहस्वरउदाहृतः (40-1)

पदच्छेदः-एवं सम्पूर्ण रागाणां गृह स्वर उदाहृतः

अन्वय-एवं-इस प्रकार, सम्पूर्ण-पूर्ण रूप से युक्त, रागाणां-रागों को, गृह स्वर-जिस स्वर से जिस किसी भी राग का गायन वादन किया जाता उस स्वर को ग्रह स्वर कहा जाता है, उदाहृतः-उदाहरणीय है

भावार्थ-इस प्रकार पूर्ण रूप से युक्त रागों को जिस स्वर से जिस किसी भी राग का गायन वादन किया जाता उस स्वर को ग्रह स्वर कहा जाता है, उदाहरणीय है।

अथ षाडवराग गृहस्वराः उच्यते ।

संगीत में छह स्वरों वाला ऐसा राग जिसमें सिर्फ़ छह स्वर लगते हों, और साथ ही जिस स्वर से जिस किसी भी राग का गायन वादन किया जाता उस स्वर को ग्रह स्वर कहा जाता है।

षाडवो देवगान्धारो गादिवर्ज्यों निषादकः (?)॥40-2॥

पदच्छेदः -षाडवो देवगान्धारो गादि वर्ज्यों निषादकः

अन्वय-षाडवो-षाड़व, रागों की एक जाति क्रम में है। इसमें केवल छह स्वरों का ही प्रयोग किया जाता है, इसमें प्रयुक्त स्वरों का क्रम स, रे, ग, म, प और ध है, और इसमें निषाद स्वर वर्जित होता है, इस राग में राग दीपक और राग मेघ आते है। षाड़व राग दो प्रकार है-(1) शुद्ध षाड़व और (2) ब्राह्म षाड़व, देवगान्धारो-देवगान्धार को राग भैरव का पुत्र माना जाता है, यह संपूर्ण जाति का राग है और इसमें ऋषभ और धैवत का प्रयोग कोमल है, इसके स्वर ग्राम-ग म प ध नि स रे, गादि-गानें में लय, ताल, राग आदि के साथ, वर्ज्यों-निषेध अथवा वर्जित किया गया है, निषादकः -रात्रि के दूसरे प्रहर में गाया जानें वाला तथा राग बहार और काफ़ी थाट से उत्पन्न षाड़व जाति का राग है। अर्थात इसके आरोह तथा अवरोह से छह छह स्वरों का प्रयोग होता है, गांधार और निषाद दोनो के स्वर कोमल है, निषादकः -और इसमें निषाद स्वर वर्जित होता है

भावार्थ-षाड़व, रागों की एक जाति क्रम में है। इसमें केवल छह स्वरों का ही प्रयोग किया जाता है, इसमें प्रयुक्त स्वरों का क्रम स, रे, ग, म, प और ध है, इस राग में राग दीपक और राग मेघ आते है। षाड़व राग दो प्रकार है-(1) शुद्ध षाड़व और (2) ब्राह्म षाड़व, देवगान्धार को राग भैरव का पुत्र माना जाता है, यह संपूर्ण जाति का राग है और इसमें ऋषभ और धैवत का प्रयोग कोमल है, इसके स्वर ग्राम-ग म प ध नि स रे, गादि-गानें में लय, ताल, राग आदि के साथ रात्रि के दूसरे प्रहर में गाया जानें वाला तथा राग बहार और काफ़ी थाट से उत्पन्न षाड़व जाति का राग है। अर्थात इसके आरोह तथा

अवरोह से छह छह स्वरों का प्रयोग होता है, गांधार और निषाद दोनो के स्वर कोमल है, और इसमें निषाद स्वर वर्जित होता है।

नीलाम्बरी षाडवः स्याद्गादिर्वज्यों निषादकः ।

श्रीरागः षाडवो रागः सषड्जादिर्गवर्जितः ॥41॥

पदच्छेदः-नीलाम्बरी षाडवः स्याद् गादिर्वज्यों निषादकः श्रीरागः षाडवो रागः सषड्जादिर्ग वर्जितः

अन्वय-नीलाम्बरी-नीलाम्बरी, षाडवः -षाडव, स्याद्-हो, गादिर्वज्यों-गानें में लय, ताल, राग आदि के साथ, वज्यों-निषेध अथवा वर्जित किया गया है, निषादकः-रात्रि के दूसरे प्रहर में गाया जानें वाला तथा राग बहार और काफ़ी थाट से उत्पन्न षाड़व जाति का राग है। अर्थात इसके आरोह तथा अवरोह से छह छह स्वरों का प्रयोग होता है, गांधार और निषाद दोनो ही के स्वर कोमल है, और, निषादकः-इसमें निषाद स्वर वर्जित होता है, श्रीरागः-संगीत के छह रागों में यह तीसरा राग है, इसकी जाति संपूर्ण है, षाडवो रागः-षाड़व, रागों की एक जाति क्रम में है। इसमें केवल छह स्वरों का ही प्रयोग किया जाता है, इसमें प्रयुक्त स्वरों का क्रम स, रे, ग, म, प और ध है, और इसमें निषाद स्वर वर्जित होता है, इस राग में राग दीपक और राग मेघ आते है। षाड़व राग दो प्रकार है-(1) शुद्ध षाड़व और (2) ब्राह्म षाड़व, सषड्जादिर्गवर्जितः- षड्जादि को छोड़कर

भावार्थ-जब नीलाम्बरी और षाडव राग हों, तब रात्रि के दूसरे प्रहर में गाया जानें वाला तथा राग बहार और काफ़ी थाट से उत्पन्न जो षाड़व जाति का राग है। अर्थात इसके आरोह तथा अवरोह से छह छह स्वरों का प्रयोग होता है, जिसके गांधार और निषाद दोनो ही के स्वर कोमल होते है, इसमें निषाद स्वर वर्जित होता है, श्रीरागः संगीत के छह रागों में यह तीसरा राग है, इसकी जाति संपूर्ण है, षाड़व, रागों की एक जाति क्रम में है। इसमें केवल छह स्वरों का ही प्रयोग किया जाता है, इसमें प्रयुक्त स्वरों का क्रम स, रे, ग, म, प और ध है, इस राग में राग दीपक और राग मेघ आते है। षाड़व राग दो प्रकार है-(1) शुद्ध षाड़व और (2) ब्राह्म षाड़व, षड्जादि को छोड़कर इसमें निषाद स्वर वर्जित होता है।

शुद्धबहुली मध्यमादिर्निवयंस्तु षाडवः ।

शुद्धगौलः षाडवः स्यान्निषादादिर्धवर्जितः॥42॥

पदच्छेदः-शुद्ध बहुली मध्यम आदि र्निवयंस्तु षाडवः शुद्धगौलः षाडवः स्यान् निषाद आदिर्ध वर्जितः

अन्वय-शुद्धबहुली-स्वरों के दो प्रकार है-शुद्ध स्वर और विकृत स्वर, बारह स्वरों में से सात मुख्य स्वरों को शुद्ध स्वर कहते है अर्थात इन स्वरों को एक निश्चित स्थान दिया गया है और वो उस स्थान पर शुद्ध कहलाते है, बहुली यह राग या रागिनी जो दो अन्य रागों या रागिनियों को मिलाकर बने हों

क्रमशः इसके 16 भेद कहे गए है-चैत्र, मंगलक, नगनिका, चर्च्चा, अतिनाठ, उन्नवी, दोहा, बहुला, गुरुबला, गीता, गोवि, हेम्ना, कोपी, कारिका, त्रिपदिका, और अधा, मध्यमादि-मध्यम आदि, र्निवर्यस्तु षाडवः-षाडव को छोड़कर, शुद्धगौलः-शुद्ध गौल, षाडवः स्यान्-षाडव हो, निषादादिर्धवर्जितः-निषाद आदि स्वर इसमें वर्जित होता है

भावार्थ-स्वरों के दो प्रकार है-शुद्ध स्वर और विकृत स्वर, बारह स्वरों में से सात मुख्य स्वरों को शुद्ध स्वर कहते है अर्थात इन स्वरों को एक निश्चित स्थान दिया गया है और वो उस स्थान पर शुद्ध कहलाते है, बहुली यह राग या रागिनी जो दो अन्य रागों या रागिनियों को मिलाकर बने हों क्रमशः इसके16 भेद कहे गए है-चैत्र, मंगलक, नगनिका, चर्च्चा, अतिनाठ, उन्नवी, दोहा, बहुला, गुरुबला, गीता, गोवि, हेम्ना, कोपी, कारिका, त्रिपदिका, और अधा, मध्यम आदि षाडव को छोड़कर शुद्ध गौल षाडव हो तो भी निषाद आदि स्वर इसमें वर्जित होता है।

ललितः षाडवो रागः सादिर्वर्ज्यो ग च स्वरः (?)। .

मालवश्री षाडवः स्यात्षड्जादिश्च रिवर्जितः॥43॥

पदच्छेदः-ललितः षाडवो रागः सादिर्वर्ज्यो ग च स्वरः (?) मालवश्री षाडवः स्यात् षड्ज आदिश्च रिवर्जितः

अन्वय-ललितः -राग ललित यह षाड़व जाति का राग है, जो भैरव राग का पुत्र माना जाता है, तथा धैवत और गांधार के अतिरिक्त और सभी स्वर कोमल लगते है । गानें का समय रात्रि के तीस दंड़ बीत जाने पर अर्थात् प्रातःकाल का राग है, इसमें सुकुमार अर्थात नाजुकता है, के साथ भौं, आँख, हाथ, पैर आदि अंगों के माध्यम से कला प्रदर्शन किया जाता है, और इसमें निषाद स्वर का प्रयोग वर्जित है, षाडवो रागः -षाड़व, रागों की एक जाति क्रम में है। इसमें केवल छह स्वरों का ही प्रयोग किया जाता है, इसमें प्रयुक्त स्वरों का क्रम स, रे, ग, म, प और ध है, इस राग में राग दीपक और राग मेघ आते है। षाड़व राग दो प्रकार है-(1) शुद्ध षाड़व और (2) ब्राह्म षाड़व, सादिर्वर्ज्यो-षड्ज आदि स्वर तथा ग च स्वरः -और गांधार वर्जित होता है, मालवश्री-यह श्री राग की एक रागिनी के नाम से जानी जाती है, यह सम्पूर्ण जाति की रागिनी है और इसके गाने का समय सायंकाल है। नारद जी इसको मालव राग की रागिनी मानते है, इसको मालश्री और मालसी भी कहते है, षाडवः-षाड़व, रागों की एक जाति क्रम में है। इसमें केवल छह स्वरों का ही प्रयोग किया जाता है, इसमें प्रयुक्त स्वरों का क्रम स, रे, ग, म, प और ध है, और इसमें निषाद स्वर वर्जित होता है, इस राग में राग दीपक और राग मेघ आते है। षाड़व राग के दो प्रकार है-(1) शुद्ध षाड़व और (2) ब्राह्म षाड़व, स्यात्-होते है,

षड्ज आदिश्च-संगीत के सात स्वरों में से प्रथम स्वर वर्जित होता है, रिवर्जितः -ऋषभ स्वर भी वर्जित होता है

भावार्थ-राग ललित यह षाड़व जाति का राग है, जो भैरव राग का पुत्र माना जाता है, तथा धैवत और गांधार के अतिरिक्त और सभी स्वर कोमल लगते है । गानें का समय रात्रि के तीस दंड़ बीत जाने पर अर्थात् प्रातःकाल का राग है, इसमें सुकुमार अर्थात नाजुकता है, के साथ भौं, आँख, हाथ, पैर आदि अंगों के माध्यम से कला प्रदर्शन किया जाता है, षाड़व, रागों की एक जाति क्रम में है। इसमें केवल छह स्वरों का ही प्रयोग किया जाता है, इसमें प्रयुक्त स्वरों का क्रम स, रे, ग, म, प और ध है, इस राग में राग दीपक और राग मेघ आते है। षाड़व राग दो प्रकार है-(1) शुद्ध षाड़व और (2) ब्राह्म षाड़व। षड्ज आदि स्वर तथा और गांधार वर्जित होता है, यह श्री राग की एक रागिनी के नाम से जानी जाती है, यह सम्पूर्ण जाति की रागिनी है और इसके गाने का समय सायंकाल है। नारद जी इसको मालव राग की रागिनी मानते है, इसको मालश्री और मालसी भी कहते है, षाड़व, रागों की एक जाति क्रम में है। इसमें केवल छह स्वरों का ही प्रयोग किया जाता है, इसमें प्रयुक्त स्वरों का क्रम स, रे, ग, म, प और ध है, और इसमें निषाद स्वर वर्जित होता है, इस राग में राग दीपक और राग मेघ आते है। षाड़व राग दो प्रकार है-(1) शुद्ध षाड़व और (2) ब्राह्म षाड़व होते है, संगीत के सात स्वरों में से प्रथम स्वर सा, ऋषभ तथा निषाद स्वर का प्रयोग भी वर्जित होता है।

भूपालः षाडवो रागो गादिः षड्जविवर्जितः।

पडवज्ञी षाडवश्च रिवज्योऽपि निषादकः ॥44॥

पदच्छेदः-भूपालः षाडवो रागो गादिः षड्ज विवर्जितः पडवज्ञी षाडवश्च रिवज्योऽपि निषादकः

अन्वय-भूपालः -यह कल्याण थाट का राग है इसमें वादी स्वर गांधार तथा संवादी स्वर धैवत है इसको गाने का समय रात्रि का प्रथम प्रहर तथा इस राग में ठुमरी नहीं गायी जाती है, लेकिन बड़ा खयाल, छोटा खयाल, तराना आदि गाया जाता है साथ ही कर्नाटक संगीत में इसे मोहन राग कहते है, षाडवो-षाड़व राग के दो प्रकार है-(1) शुद्ध षाड़व और (2) ब्राह्म षाड़व, गादिः -गानें में लय, ताल, राग आदि के साथ, षड्ज विवर्जितः -संगीत के सात स्वरों में से प्रथम स्वर सा वर्जित होता है, पडवज्ञी-पडवज्ञी, षाडवश्च-षाडव, श्च-और, ऋषभ तथा निषाद स्वर का प्रयोग भी वर्जित होता है।

भावार्थ-भूपाल-यह कल्याण थाट का राग है इसमें वादी स्वर गांधार तथा संवादी स्वर धैवत है इसको गानें का समय रात्रि का प्रथम प्रहर तथा इस राग में ठुमरी नहीं गायी जाती है, लेकिन बड़ा खयाल, छोटा खयाल, तराना आदि गाया जाता है साथ ही कर्नाटक संगीत में इसे मोहन राग कहते है, षाड़व राग के दो प्रकार है-(1) शुद्ध षाड़व और (2) ब्राह्म षाड़व आदि गानें में लय, ताल, राग आदि के साथ

संगीत के सात स्वरों में से प्रथम स्वर सा, वर्जित होता है, पडवज्ञी और, ऋषभ तथा निषाद स्वर का प्रयोग भी वर्जित होता है।

गुण्डक्री षाडवश्चैव गान्धारादिर्गवर्जितः ।
कुरञ्जी षाडवो रागो निवर्ज्यो मध्यमादितः ॥45॥
सङ्गृह्य नारदेनैव गृहस्वरमुदीरितम् ।॥ 46-1॥

पदच्छेदः-गुण्डक्री पाडवश्चैव गान्धार आदि र ग वर्जितः कुरञ्जी षाडवो रागो निवर्ज्यो मध्यमादितः सङ्गृह्य नारदेनैव गृहस्वर मुदीरितम्

अन्वय-गुण्डक्री-गुण्डक्री, षाडवश्च-षाडव, श्च-और, गान्धार-यह एक संकर राग है तथा ज्यादातर बहुत सी रागों और रागिनियों के मेल से बना है, तथा यह विकृत स्वर है जो वज्रिका नामक श्रुति से आरंभ होता है इसकी तीन प्रकार की श्रुतियाँ होती है, रिवर्जितः-ऋषभ स्वर भी वर्जित होता है, कुरञ्जी-कुरञ्जी, षाडवो रागो-षाड़व, रागों की एक जाति क्रम में है। इसमें केवल छह स्वरों का ही प्रयोग किया जाता है, इसमें प्रयुक्त स्वरों का क्रम स, रे, ग, म, प और ध है, इस राग में राग दीपक और राग मेघ आते है। षाड़व राग दो प्रकार है-(1) शुद्ध षाड़व और (2) ब्राह्म षाड़व, निवर्ज्यो-निषाद स्वर वर्जित होता है, मध्यमादितः-मध्यम आदि से, सङ्गृह्य-संग्रह करके, नारदेनैव-नारद जी के द्वारा ही, गृहस्वर-जिस स्वर से जिस किसी भी राग का गायन वादन किया जाता उस स्वर को ग्रह स्वर कहा जाता है, मुदीरितम्-कहा गया है।

भावार्थ-गुण्डक्री, षाडव, और गान्धार यह एक संकर राग है तथा बहुत सी रागों और रागिनियों के मेल से बना है, तथा यह विकृत स्वर है जो वज्रिका नामक श्रुति से आरंभ होता है इसकी तीन प्रकार की श्रुतियाँ होती है, इसमें ऋषभ तथा यह एक संकर राग है तथा ज्यादातर बहुत सी रागों और रागिनियों के मेल से बना है, तथा यह विकृत स्वर है जो वज्रिका नामक श्रुति से आरंभ होता है इसकी तीन प्रकार की श्रुतियाँ होती है, रिवर्जितः-ऋषभ स्वर भी वर्जित होता है, स्वर वर्जित होता है, कुरञ्जी, षाड़व, रागों की एक जाति क्रम में है। इसमें केवल छह स्वरों का ही प्रयोग किया जाता है, इसमें प्रयुक्त स्वरों का क्रम स, रे, ग, म, प और ध है, इस राग में राग दीपक और राग मेघ आते है। षाड़व राग दो प्रकार है-(1) शुद्ध षाड़व और (2) ब्राह्म षाड़व तथा मध्यम आदि से निषाद स्वर वर्जित होता है।

नारद जी के द्वारा ही संग्रह करके जिस स्वर से जिस किसी भी राग का गायन वादन किया जाता उस स्वर को ग्रह स्वर कहा जाता है, कहा गया है।

अथ औडव राग गृहस्वराः।

अथ औडव राग जिस स्वर से जिस किसी भी राग का गायन वादन किया जाता उस स्वर को ग्रह स्वर कहा जाता है।

धन्यासी औडवः प्रोक्तः सावेरी धविवर्जितः ॥46-2॥

पदच्छेदः-धन्यासी औडवः प्रोक्तः सावेरी धविवर्जितः

अन्वय-धन्यासी-अन्यमतानुसार धन्यासी श्री राग की रागिनी कही जाती है, औडवः-औडव जाति, प्रोक्तः-कहा गया है, संगीत में किसी भी राग का परिवर्तित रूप रागिनी कही जाती है, प्रत्येक राग की प्रायः छह रागिनियाँ मानी गई है, सावेरी मेघ राग की रागिनी कही गयी है, धविवर्जितः -इसमें धैवत स्वर अर्थात ध वर्जित है।

भावार्थ-अन्यमतानुसार धन्यासी श्री राग की रागिनी कही जाती है, इसकी जाति औडव कही गई है, संगीत में किसी भी राग का परिवर्तित रूप रागिनी कही जाती है, प्रत्येक राग की प्रायः छह रागिनियाँ मानी गई है, सावेरी मेघ राग की रागिनी कही गयी है। इसमें धैवत स्वर अर्थात ध का प्रयोग वर्जित है।

औडवो गुर्जरी प्रोक्तः सादिर्वज्यों रिधौ तथा।
रिधौ वर्ज्यौ मध्यमादिरौडवा मधुमाधवी ॥47॥

पदच्छेदः-औडवो गुर्जरी प्रोक्तः सादिर्वज्यों रिधौ तथा रिधौ वर्ज्यौ मध्यमादि औडवा मधुमाधवी

अन्वय-औडवो-औडव राग वह राग है जिसमें पाँच स्वर लगें हो, गुर्जरी-भैरव राग की पत्नी, भार्या या रागिनी कहलाती है, यह संपूर्ण जाति की रागिनी है । इसमें तीव्र मध्यम का प्रयोग होता है, और शेष सभी स्वर कोमल लगते है। यह रामकली और ललित को मिलाकर बनती है। इसके दिन के समय गाया जाता है, प्रोक्तः-कहा गया है, सादिर्वज्यों-संगीत के सात स्वरों में से प्रथम स्वर सा वर्जित होता है, रिधौ तथा-ऋषभ तथा धैवत, रिधौ वर्ज्यौ-ऋषभ तथा धैवत वर्जित है, मध्यमादि-मध्यम आदि, औडवा-औडवराग वह राग है जिसमें पाँच स्वर लगें हो, मधुमाधवी-यह रागिनी भैरव राग की सहचरी मानी जाती है।

भावार्थ-औडवराग वह राग है जिसमें पाँच स्वर लगे हो, गुर्जरी-भैरव राग की पत्नी, भार्या या रागिनी कहलाती है, यह संपूर्ण जाति की रागिनी है। इसमें तीव्र मध्यम का प्रयोग होता है, और शेष सभी स्वर कोमल लगते है। यह रामकली और ललित को मिलाकर बनती है । इसके दिन के समय गाया जाता है ऐसा कहा गया है, संगीत के सात स्वरों में से प्रथम स्वर सा वर्जित होता है, ऋषभ तथा धैवत के

साथ मध्यम आदि औडवराग राग है जिसमें पाँच स्वर लगें होते है, मधुमाधवी यह एक रागिनी है, तथा भैरव राग की सहचरी मानी जाती है।

मेघरञ्जी मध्यमादि धनिवर्ज्यौं तथौडवः ।

वेलावल्यौडवः स्यात्तु गादिर्वर्ज्यौं सरीस्वरौ ॥48॥

पदच्छेदः-मेघरञ्जी मध्यमादि धनिवर्ज्यौं तथौडवः वेलावल्यौडवःस्यात्तु गादिर्वर्ज्यौं सरीस्वरौ

अन्वय-मेघरञ्जी-मेघरञ्जी, मध्यमादि-मध्यम आदि, धनिवर्ज्यौं-धैवत और निषाद निषेध अथवा वर्जित किया गया है, तथौडवः-और औडव, वेलावल्यौडवः-वेलावली औडव, स्यात्तु-हो, गादिर्वर्ज्यौं-गांधार आदि निषेध अथवा वर्जित किया गया है, सरीस्वरौ-षड्ज और ऋषभ स्वर को

भावार्थ-मेघरञ्जी औडव धैवत, निषाद और मध्यम आदि को निषेध अथवा वर्जित किया गया है तथा वेलावली औडव हो तो गांधार, षड्ज और ऋषभ स्वर को आदि निषेध अथवा वर्जित किया गया है।

रामकृत्यौडवः स्यात्तु' गादिर्वर्ज्यौं रिधौ स्वरौ ।

नारायणी निषादादिरौडवो धपवर्जितः॥49॥

पदच्छेदः -रामकृति औडवः स्यात्तु गादिर्वर्ज्यों रिधी स्वरौ । नारायणी निषादादिरौडवो धपवर्जितः

अव्यय-रामकृत्यौडवः -रामकृति औडव, स्यात्तु-स्यात् तु-हो तो, गादिर्वर्ज्यौं-इसमें गांधार आदि स्वर अर्थात ग का प्रयोग वर्जित है, रिधौ-ऋषभ तथा धैवत, स्वरौ-स्वरों में, नारायणी-राग नारायणी को दक्षिण पद्धति के संगीत से हिन्दुस्तानी पद्धति में विद्वानों द्वारा लाया गया है। इस राग में कोमल निषाद की उपस्थिति इसे राग दुर्गा से अलग करती है। पंचम न्यास स्वर है और अवरोह में धैवत को दीर्घ किया जाता है, जैसे - सा रे प ; म प नि१ ध ध प। धैवत को दीर्घ करने से यह राग, सूरदासी मल्हार से अलग हो जाता है, जहाँ धैवत दीर्घ नहीं किया जाता। यह एक शांत प्रकृति का राग है, जिसका विस्तार मध्य और तार सप्तकों में किया जाता है। यह स्वर संगतियाँ राग नारायणी का रूप दर्शाती है-सा रे प ; म प ; म प ध नि१ ध सा' ; म प ध सा' ; सा' रे नि१ ध सा' ; सा' रे' म' रे' सा' ; सा' नि१ ध ध प ; म प ध प म रे ; म रे ,नि१ ,ध सा, निषादादिरौडवो-निषाद आदि औडव, धपवर्जितः - धैवत और पंचम को निषेध अथवा वर्जित किया गया है।

भावार्थ-रामकृति औडव हो तो ऋषभ, धैवत और इसमें गांधार आदि स्वरों में अर्थात रे,ग और ध का प्रयोग वर्जित है। राग नारायणी को दक्षिण पद्धति के संगीत से हिन्दुस्तानी पद्धति में विद्वानों द्वारा लाया गया है। इस राग में कोमल निषाद की उपस्थिति इसे राग दुर्गा से अलग करती है। पंचम न्यास स्वर है और अवरोह में धैवत को दीर्घ किया जाता है, जैसे - सा रे प ; म प नि१ ध ध प। धैवत को दीर्घ करने से यह राग, सूरदासी मल्हार से अलग हो जाता है, जहाँ धैवत दीर्घ नहीं किया जाता। यह

एक शांत प्रकृति का राग है, जिसका विस्तार मध्य और तार सप्तकों में किया जाता है। यह स्वर संगतियाँ राग नारायणी का रूप दर्शाती है-सा रे प ; म प ; म प ध नि१ ध सा' ; म प ध सा' ; सा' रे नि१ ध सा' ; सा' रे' म' रे' सा' ; सा' नि१ ध ध प ; म प ध प म रे ; म रे ,नि१ ,ध सा, निषाद आदि औडव हों तो धैवत और पंचम को निषेध अथवा वर्जित किया गया है।

पालिरोडवः षड्जादिर्वर्ज्यौ मध्यमपञ्चमौ ।

एवं प्रधानरागाः स्युर्लक्षणोक्तं यथाक्रमम् ॥50॥

पदच्छेदः -पालिरोडवः षड्जादिर्वर्ज्यौ मध्यम पञ्चमौ एवं प्रधान रागाः स्यु लक्षणोक्तं यथा क्रमम्

अव्यय-पालिरोडवः-पाली औडव, षड्जादिर्वर्ज्यौ-षड्ज आदि को निषेध अथवा वर्जित किया गया है, मध्यमपञ्चमौ-मध्यम और पञ्चम, एवं प्रधानरागाः -ऐसे प्रधान रागों, स्यु-हो, लक्षणोक्तं-लक्षण कहे गये है, यथाक्रमम्-क्रमानुसार

भावार्थ-पाली औडव हों तो षड्ज आदि को निषेध अथवा वर्जित किया गया है, मध्यम और पञ्चम ऐसे प्रधान रागों को क्रमानुसार लक्षणों से युक्त कहा गया है।

अनन्ताः सन्ति सन्दर्भा नानादेश्याः प्रकीर्तिताः ।

सङ्कीर्णरूपिणो रागाः सङ्कीर्णा नाम विश्रुताः ॥51॥

पदच्छेदः -अनन्ताः सन्ति सन्दर्भा नानादेश्याः प्रकीर्तिताः । सङ्कीर्णरूपिणो रागाः सङ्कीर्णा नाम विश्रुताः

अव्यय-अनन्ताः सन्ति-जिसका अंत न हो अर्थात अनन्त हो, सन्दर्भा-के सन्दर्भ, नानादेश्याः -अनेक आदेश, प्रकीर्तिताः -ख्याति को प्राप्त है, सङ्कीर्णरूपिणो-सङ्कीर्ण रूपी, रागाः -राग, सङ्कीर्णा नाम-सङ्कीर्ण नाम, विश्रुताः -सुनें गये है।

भावार्थ-सङ्कीर्ण रूपी रागों नाम सङ्कीर्ण नाम से और जिसका अंत न हो अर्थात अनन्त हो के सन्दर्भ में अनेक आदेश की ख्याति को प्राप्त है।

ब्रह्मा चा (?) षाडवाश्चैव क्षत्रजा औडवास्तथा ।

सम्पूर्णा मुनिजाः प्रोक्ता भरतज्ञैः प्रशंसिताः ॥52॥

पदच्छेदः -ब्रह्मा (ब्रह्मजा)चा (?) षाडवाश्चैव क्षत्रजा औडवास्तथा । सम्पूर्णा मुनिजाः प्रोक्ता भरतज्ञैः प्रशंसिताः

अव्यय-ब्रह्मा चा (ब्रह्मजा)-ब्रह्मा और, षाडवाश्चैव-षाडव ही, क्षत्रजा-क्षत्रजा, औडवास्तथा-औडव है, सम्पूर्णा-सम्पूर्ण, मुनिजाः -मुनियों के द्वारा, प्रोक्ता-कहे गये, भरतज्ञैः -भरत मुनि आदि के द्वारा, प्रशंसिताः -प्रशंसित किए गये

भावार्थ-षाडव के ब्रह्मा तथा औडव के क्षत्रजा तथा अन्य सम्पूर्ण राग मुनियों व भरत मुनि आदि के द्वारा प्रशंसित किए गये है।

अथ पुल्लिङ्गरागाः।

बङ्गालः सोमरागश्च श्रीरागश्च तथैव च ।

भूपाली छायगौडश्च शुद्धहिन्दोलिका तथा ॥ 53॥

पदच्छेदः -बङ्गालः सोमरागश्च श्रीरागश्च तथैव च भूपाली छायगौडश्च शुद्धहिन्दोलिका तथा

अव्यय-बङ्गालः -बंगाल राग जिसे कुछ लोग मेघराग का और कुछ भैरव राग का पुत्र मानते है, सोमरागश्च-और सोमराग को मालकोश राग का पुत्र कहा गया है, श्रीरागश्च-यह छह रागों में से तीसरा राग तथा जो संपूर्ण जाति का है, तथैव च-तथा, भूपाली-यह कल्याण थाट का राग है इसमें वादी स्वर गांधार तथा संवादी स्वर धैवत है इसको गानें का समय रात्रि का प्रथम प्रहर तथा इस राग में ठुमरी नहीं गायी जाती है, लेकिन बड़ा खयाल, छोटा खयाल, तराना आदि गाया जाता है साथ ही कर्नाटक संगीत में इसे मोहन राग कहते है, छायगौडश्च-छायगौड, शुद्धहिन्दोलिका-शुद्धहिन्दोलिका, तथा-तथा

भावार्थ-बंगाल राग जिसे कुछ लोग मेघराग का और कुछ भैरव राग का पुत्र मानते है और सोमराग को मालकोश राग का पुत्र कहा गया है, तथा श्रीराग यह छह रागों में से तीसरा राग तथा जो संपूर्ण जाति का है। राग भूपाली कल्याण थाट का राग है, इसमें वादी स्वर गांधार तथा संवादी स्वर धैवत है इसको गानें का समय रात्रि का प्रथम प्रहर तथा इस राग में ठुमरी नहीं गायी जाती है, लेकिन बड़ा खयाल, छोटा खयाल, तराना आदि गाया जाता है साथ ही कर्नाटक संगीत में इसे मोहन राग कहते है, छायगौड तथा शुद्धहिन्दोलिका होते है।

आन्दोली दोम्बुली चैव गौडः कर्णाटकाह्वयः।

फडमञ्जी शुद्धनाटी तथा मालवगौलकः ॥54॥

पदच्छेदः -आन्दोली दोम्बुली चैव गौडः कर्णाटका ह्वयः फडमञ्जी शुद्ध नाटी तथा मालव गौलक

अव्यय-आन्दोली-आन्दोली, दोम्बुली-दोम्बुली, चैव-और, गौडः -संपूर्ण जाति का राग इसमें सभी शुद्ध स्वर लगते है, इसको श्रीराग का पुत्र माना जाता है तथा इसके गाने का समय तीसरा पहर और संध्या है । इसके कान्हड़ा, गौड़, केदार गौड़, नारायण गौड़, रीति गौड़ आदि अनेक भेद है, कर्णाटकाह्वयः-कर्णाटक संगीतं भारत के शास्त्रीय संगीत की दक्षिण भारतीय शैली का नाम है, जो उत्तरी भारत की शैली हिन्दुस्तानी संगीत से काफी अलग है, कर्नाटक संगीत ज्यादातर भक्ति संगीत के रूप में होता

है और ज्यादातर रचनाएँ हिन्दू देवी देवताओं को संबोधित होता है, फडमञ्जी-फडमञ्जी, शुद्धनाटी-यह मेलराग है, तथा-तथा, मालवगौलकः -मालवगौलक मेल राग है,

भावार्थ-आन्दोली, दोम्बुली और गौड राग संपूर्ण जाति का राग इसमें सभी शुद्ध स्वर लगते है, इसको श्रीराग का पुत्र माना जाता है तथा इसके गाने का समय तीसरा पहर और संध्या है । इसके कान्हड़ा, गौड़, केदार गौड़, नारायण गौड़, रीति गौड़ आदि अनेक भेद है, कर्णाटकाह्वय, कर्णाटक संगीतं भारत के शास्त्रीय संगीत की दक्षिण भारतीय शैली का नाम है, जो उत्तरी भारत की शैली हिन्दुस्तानी संगीत से काफी अलग है, कर्नाटक संगीत ज्यादातर भक्ति संगीत के रूप में होता है और ज्यादातर रचनाएँ हिन्दू देवी देवताओं को संबोधित होता है, फडमञ्जी, शुद्धनाटी तथा, मालवगौलक मेल राग है।

रागरङ्गःच्छायनाटी रागः कोकाहलस्तथा ।
सौराष्ट्री च वसन्तश्च शुद्ध सारङ्गःभैरवी ॥55॥

पदच्छेदः -रागरङ्ग च छायनाटी रागः कोकाहल स्तथा सौराष्ट्री च वसन्तश्च शुद्ध सारङ्ग भैरवी

अव्यय-रागरङ्ग-रागरङ्ग, च-और, छायनाटी-छायनाटी, रागः -राग, कोकाहलस्तथा-कोकाहल और, सौराष्ट्री-सौराष्ट्री, वसन्तश्च-राग वसंत हिंदुस्तानी संगीत पद्धति का राग यह बसंत ऋतु में गाया बजाया जाता है, इसके आरोह में पाँच तथा अवरोह में सात स्वर होते है, इसलिए इसको औडव संपूर्ण जाति का राग कहा जाता है, वैसे तो इसके गानें का समय रात का अंतिम प्रहर है परन्तु यह किसी समय भी गाया बजाया जा सकता है, शुद्ध सारङ्गःभैरवी-शुद्ध सारङ्गःभैरवी

भावार्थ-रागरङ्ग, और, छायनाटी राग, कोकाहल और, सौराष्ट्री, तथा शुद्ध सारङ्ग भैरवी शुद्ध राग है। वसंत हिंदुस्तानी संगीत पद्धति का राग यह बसंत ऋतु में गाया बजाया जाता है, इसके आरोह में पाँच तथा अवरोह में सात स्वर होते है, इसलिए इसको औडव संपूर्ण जाति का राग कहा जाता है, वैसे तो इसके गानें का समय रात का अंतिम प्रहर है परन्तु यह किसी समय भी गाया बजाया जा सकता है।

रागध्वनिस्तथा ह्येते पुंरागाः परिकीर्तिताः ।
नारदेन विचित्रेण सन्ति नामानि वक्ष्यते (?) ॥56॥

पदच्छेदः -रागध्वनि स्तथा ह्येते पुंरागाः परिकीर्तिताः । नारदेन विचित्रेण सन्ति नामानि वक्ष्यते (?)

अव्यय-रागध्वनिस्तथा-रागध्वनि, स्तथा ह्येते-ये सब स्थित होते है, पुंरागाः-पुल्लिंग राग, परिकीर्तिताः-गुणों का विस्तृत वर्णन परिकीर्तन को प्राप्त है, नारदेन-नारद जी के द्वारा, विचित्रेण-विचित्र, सन्ति-है, नामानि वक्ष्यते-नाम कहे गए है।

भावार्थ-नारद जी के द्वारा इन विचित्र की ध्वनियाँ कही गई है, जो रागों में स्थित होते है, ये सब पुल्लिंग राग होते है।

अथ स्त्रीरागाः।

तुण्डी तुरुष्कतुण्डी च मल्वारी माहुरी तथा ।

पौरालिकी च काम्भारी भल्लाती सैन्धवी तथा ॥57॥

पदच्छेदः -तुण्डी तुरुष्कतुण्डी च मल्वारी माहुरी तथा पौरालिकी च काम्भारी भल्लाती सैन्धवी तथा

अव्यय-तुण्डी-तुण्डी रागिनी, तुरुष्कतुण्डी-तुरुष्कतुण्डी, च मल्वारी-और मल्वारी, माहुरी तथा-माहुरी, पौरालिकी-पौरालिकी, च काम्भारी-और काम्भारी, भल्लाती-भल्लाती, सैन्धवी तथा-तथा सैन्धवी

भावार्थ-रागिनियोँ के क्रम में तुण्डी, तुरुष्कतुण्डी, मल्वारी और माहुरी तथा पौरालिकी, और काम्भारी, भल्लाती, तथा सैन्धवी होती है।

सालङ्गाख्या च गान्धारी देवक्री देशिनी तथा।

वेलावली च बहुली गुण्डक्री घूर्जरी तथा ॥58॥

पदच्छेदः -सालङ्गा ख्या च गान्धारी देवक्री देशिनी तथा। वेलावली च बहुली गुण्डक्री घूर्जरी तथा

अव्यय-सालङ्गाख्या-सालङ्ग कही जानें वाली, च गान्धारी-और गान्धारी, देवक्री-देवक्री, देशिनी तथा-देशिनी, वेलावली च-वेलावली, बहुली-बहुली, गुण्डक्री-गुण्डक्री, घूर्जरी तथा-घूर्जरी

भावार्थ-रागिनियोँ के क्रम कही जानें वाली सालङ्ग, और गान्धारी, देवक्री, तथा देशिनी, वेलावली, बहुली, गुण्डक्री तथा घूर्जरी होती है।

वराटी दावडी हंसी गौडी नारायणी तथा ।

अहरी मेघरञ्जी च मिश्रनाटा यथाक्रमात् ॥59॥

पदच्छेदः -वराटी दावडी हंसी गौडी नारायणी तथा अहरी मेघरञ्जी च मिश्रनाटा यथाक्रमात्

अव्यय-वराटी-वराटी, दावडी-दावडी, हंसी-हंसी, गौडी-गौडी, नारायणी तथा-नारायणी, अहरी-अहरी, मेघरञ्जी-मेघरञ्जी, च मिश्रनाटा-और मिश्रनाटा, यथाक्रमात्-क्रम के अनुसार

भावार्थ-रागिनियोँ के क्रम कही जानें वाली वराटी, दावडी, हंसी, गौडी, नारायणी तथा अहरी तथा मेघरञ्जी क्रम के अनुसार होती है।

अथ नपुंसकरागाः।

कैशिकी ललितश्चैव धन्नाशी च कुरञ्जिका ।

सौराष्ट्री द्रावडी शुद्धा तथा नागवराटिका ॥ 60॥

पदच्छेदः -कैशिकी ललितश्चैव धन्नाशी च कुरञ्जिका । सौराष्ट्री द्रावडी शुद्धा तथा नागवराटिका

अव्यय-कैशिकी-संगीत में श्रृंगार रस की रागिनी, ललितश्चैव-ललितः -राग ललित यह षाड़व जाति का राग है, जो भैरव राग का पुत्र माना जाता है, तथा धैवत और गांधार के अतिरिक्त और सभी स्वर कोमल लगते है । गानें का समय रात्रि के तीस दंड़ बीत जाने पर अर्थात् प्रातःकाल का राग है, इसमें सुकुमार अर्थात नाजुकता है, के साथ भौं, आँख, हाथ, पैर आदि अंगों के माध्यम से कला प्रदर्शन किया जाता है, चैव-और, धन्नाशी-धन्नाशी, च कुरञ्जिका-और कुरञ्जिका, सौराष्ट्री-स्त्री जाति की रागिनी सौराष्ट्री, द्रावडी शुद्धा-द्रावडी, शुद्धा, तथा नागवराटिका-नागवराटिका

भावार्थ-नपुंसक रागों की श्रेणी में क्रमशः कैशिकी, संगीत में श्रृंगार रस की रागिनी, राग ललित यह षाड़व जाति का राग है, जो भैरव राग का पुत्र माना जाता है, तथा धैवत और गांधार के अतिरिक्त और सभी स्वर कोमल लगते है । इसके गानें का समय रात्रि के तीस दंड़ बीत जाने पर अर्थात् प्रातःकाल का राग है, इसमें सुकुमार अर्थात नाजुकता है, के साथ भौं, आँख, हाथ, पैर आदि अंगों के माध्यम से कला प्रदर्शन किया जाता है, और, धन्नाशी, और कुरञ्जिका, स्त्री जाति की रागिनी सौराष्ट्री, द्रावडी, शुद्धातथा नागवराटिका होते है।

कौमोदकी च रामक्री सावेरी च तथैव च ।

बलहंसः सामवेदी शङ्कराभरणस्तथा ॥61॥

पदच्छेदः -कौमोदकी च रामक्री सावेरी च तथैव च बलहंसः सामवेदी शङ्करा भरण स्तथा

अव्यय-कौमोदकी-कौमोदकी, च-और, रामक्री-रामक्री, सावेरी च-सावेरी, तथैव च-और, बलहंसः-रागों के मेल में हरि काम्भोजी के मेल से उतपन्न आरोह स्वर- स रि म प ध स, तथा अवरोह स्वर-स नि ध प म रेि म ग स, सामवेदी-सामवेदी, शङ्कराभरण-शङ्करा भरण, स्तथा-होते है।

भावार्थ-नपुंसक रागों की श्रेणी में क्रमशः कौमोदकी, रामक्री, सावेरी, बलहंसः-रागों के मेल में हरि काम्भोजी के मेल से उतपन्न आरोह स्वर- स रि म प ध स, तथा अवरोह स्वर-स नि ध प म रेि म ग स, सामवेदी शङ्करा भरण होते है।

नपुंसका इति प्रोक्ता रागलक्षणकोविदैः।

एतन्मतं नारदस्य ब्रह्मणा कथितं पुरा ॥62॥

पदच्छेदः -नपुंसका इति प्रोक्ता राग लक्षणको विदैः। एतन्मतं नारदस्य ब्रह्मणा कथितं पुरा

अव्यय-नपुंसका-जो द्वय राग अर्थात् जो न तो पुरुषराग की श्रेणी का हो और न ही स्त्रीराग की श्रेणी का हो, इति प्रोक्ता-ऐसे कहे गए है, राग लक्षणको-राग लक्षणों के, विदैः -विद्वानों द्वारा, एतन्मतं-यह मत, नारदस्य-नारद जी का, ब्रह्मणा-ब्रह्मा के द्वारा, कथितं-कहा गया है, पुरा-पूर्व में

भावार्थ-ब्रह्मा तथा नारद जी के द्वारा कथित राग लक्षणों से युक्त ये सब नपुंसक राग के कहे गये है।

रौद्रेऽद्भुते तथा वीरे पुंरागैः परिगीयते ।

शृङ्गारहास्यकरुणं (१) स्त्रीरागैश्च प्रगीयते ॥63॥

पदच्छेदः -रौद्रे अद्भुते तथा वीरे पुंरागैः परिगीयते । शृङ्गार हास्य करुणं (करुणे स्त्री)(१) स्त्रीरागैश्च प्रगीयते

अव्यय-रौद्रे-अत्यंत उग्र और प्रचंड, अद्भुते तथा -विस्मय करनें, वीरे-शूरवीर, पुंरागैः -पुल्लिंग रागों के द्वारा, परिगीयते-गाया जाता है, शृङ्गार-शृंगार रस रसों में से एक प्रमुख रस, हास्य-जहाँ हास की उत्पत्ति होती है इसे ही हास्य रस कहते है, करुणं (करुणे स्त्री)-जहाँ पर पुनः मिलने कि आशा समाप्त हो जाती है करुण रस कहलाता है, स्त्रीरागै-रागिनी राग का स्त्री रूप ही है, प्रगीयते-जो गाया गया हो।

भावार्थ-अत्यंत उग्र और प्रचंड, विस्मय करनें, और शूरवीर पुल्लिंग रागों अथवा पुरुष राग के द्वारा गाया जाता है। शृंगार रस रसों में से एक प्रमुख रस, जहाँ हास की उत्पत्ति होती है इसे ही हास्य रस कहते है और करुणं (करुणे स्त्री) जहाँ पर पुनः मिलने कि आशा समाप्त हो जाती है करुण रस कहलाता है रागिनी राग का स्त्री रूप ही है, गाया गया है। श्रव्य काव्य के पठन अथवा श्रवण एवं दृश्य काव्य के दर्शन तथा श्रवण में जो अलौकिक आनन्द प्राप्त होता है, वही काव्य में रस कहलाता है। रस के जिस भाव से यह अनुभूति होती है कि वह रस है, स्थायी भाव होता है।

भयानके च बीभत्से शान्ते गायनपुंसके ।

अनेन विधिना ज्ञात्वा गेयं सर्वार्थसाधनम् ॥64॥

पदच्छेदः -भयानके च बीभत्से शान्ते गायनपुंसके अनेन विधिना ज्ञात्वा गेयं सर्वार्थसाधनम्

अव्यय-भयानके-रसो में एक के प्रकार का रस जिसे देखने अथवा सुननें से भय लगता हो, च बीभत्से-रसो में एक के प्रकार का रस जिसे देखकर अथवा सुननें से घृणा भाव उतपन्न हो, शान्ते-रसो में एक के प्रकार का रस जिसे देखने अथवा सुननें से वेग, क्षोभ या क्रिया भाव न हो, गायनपुंसके-का गायन नपुंसक राग में, अनेन-एक से अधिक, विधिना-विधियोँ से, ज्ञात्वा-जानकर, गेयं-गाने के योग्य, सर्वार्थसाधनम्-वह जो सभी प्रयोजनों को सिद्ध करता हो।

भावार्थ-रसो में एक के प्रकार का रस जिसे देखने अथवा सुननें से भय लगता हो, जिसे देखकर अथवा सुननें से घृणा भाव उतपन्न हो अथवा वेग, क्षोभ या क्रिया भाव न हो ऐसा गायन नपुंसक राग कहलाता है। एक से अधिक विधियोँ से जानकर गाने के योग्य हो और वह सभी प्रयोजनों को सिद्ध करता हो।

शृणु चान्यं प्रवक्ष्यामि नादं चैव शुभाशुभम् ।
साम्प्रतं मुनिशार्दूल गीतगानविधि तथा ॥65॥

पदच्छेदः -शृणु चान्यं प्रवक्ष्यामि नादं चैव शुभ अशुभम् । साम्प्रतं मुनिशार्दूल गीतगान विधि तथा

अव्यय-शृणु-सुनों, चान्यं-और अन्य को, प्रवक्ष्यामि-बता रहा हूँ, नादं-ध्वनि के माध्यम से उत्तपन्न, तथा अग्नि और वायु के संयोग से नाद की उत्पत्ति हुई है अग्नि द्वारा प्रेरित प्राण फिर ऊपर चढ़ने लगता है । नाभि में पहुँचकर वह अति सूक्ष्म हृदय में सूक्ष्म, गलदेश (गला) में पुष्ट, शीर्ष में अपुष्ट और मुख में कृत्रिम नाद उत्पन्न करता है। नाद दो प्रकार का है-आहत और अनाहत, चैव-और, शुभाशुभम्-शुभ व अशुभ, साम्प्रतं-इसी समय, मुनिशार्दूल-मुनि शार्दूल, गीतगान-गीत गान, विधि तथा-विधि को

भावार्थ-अब अन्य शुभ और अशुभ ध्वनि के माध्यम से उत्तपन्न, तथा अग्नि और वायु के संयोग से नाद की उत्पत्ति हुई है अग्नि द्वारा प्रेरित प्राण फिर ऊपर चढ़ने लगता है । नाभि में पहुँचकर वह अति सूक्ष्म हृदय में सूक्ष्म, गलदेश (गला) में पुष्ट, शीर्ष में अपुष्ट और मुख में कृत्रिम नाद उत्पन्न करता है, के बारे में बता रहा हूँ। तथा मुनि शार्दूल द्वारा गीत गान की विधि को बतला रहा हूँ।

मध्यमादिर्मालवश्री श्रीकापि जयसाक्षिका ।
वराटी धूर्जरी गौडकोलाहलवसन्तकाः ॥66॥

पदच्छेदः -मध्यम आदिर् मालवश्री श्रीकापि जयसाक्षिका । वराटी धूर्जरी गौड कोलाहल वसन्तकाः

अव्यय-मध्यम-मध्यम, आदिर्-आदि, मालवश्री-श्री राग की एक रागिनी-यह संपूर्ण जाति की रागिनी है और इसके गाने का समय सायंकाल है । नारद इसे मालव की रागिनी मानते है, श्रीकापि-श्रीकापि, जयसाक्षिका-जयसाक्षिका, वराटी-वराटी, धूर्जरी-धूर्जरी, गौड-सम्पूर्ण जाति का एक राग जिसमें सब शुद्ध स्वर लगते है और जो तीसरे पहर तथा संध्या के समय गाया जाता है, कोलाहल-यह संपूर्ण जाति का एक संकर राग है, जो कल्याण, कान्हड़ा और बिहाग के मेल से बनता है । इसमें सब शुद्धस्वर लगते है, वसन्तकाः -छह रागों में दूसरा राग है और इसकी छह रागिनियाँ है जो इस प्रकार है-देशी, देवगिरी, वैराटी, ताड़िका, ललिता तथा हिंडोला

भावार्थ-मध्यम, और मालवश्री, श्री राग की एक रागिनी-यह संपूर्ण जाति की रागिनी है और इसके गाने का समय सायंकाल है । नारद इसे मालव की रागिनी मानते है, श्रीकापि, जयसाक्षिका, वराटी, तथा धूर्जरी, गौड यह सम्पूर्ण जाति का राग जिसमें सब शुद्ध स्वर लगते है और जो तीसरे पहर तथा संध्या के समय गाया जाता है, कोलाहल राग संपूर्ण जाति का एक संकर राग है, जो कल्याण, कान्हड़ा और बिहाग के मेल से बनता है । इसमें सब शुद्धस्वर लगते है, छह रागों में दूसरा राग है और इसकी छह रागिनियाँ है जो इस प्रकार है-देशी, देवगिरी, वैराटी, ताड़िका, ललिता तथा हिंडोला है।

धन्नाश्री देशदेशाख्या बङ्गालादित्रयोदश।
रागाङ्गरागमाख्यातं नारदेन महात्मना ॥67॥

पदच्छेदः -धन्नाश्री देशदेशाख्या बङ्गालादि त्रयोदश। राग अङ्ग रागमा ख्यातं नारदेन महात्मना

अव्यय-धन्नाश्री-धन्नाश्री, देशदेशाख्या-देशदेशा का वर्णन, बङ्गालादि-बङ्गाल आदि, त्रयोदश-तेरह, रागाङ्ग-रागों के अङ्ग, रागमाख्यातं-राग कहे गए है, नारदेन-नारद मुनि, महात्मना-महात्मा

भावार्थ-धन्नाश्री, देशदेशा का वर्णन तथा बङ्गाल आदि, तेरह रागों के अङ्ग महात्मा नारद मुनि के द्वारा कहे गये है।

भूपालो भैरवश्चैव श्रीरागः फडमञ्जरी।
वसन्तमालवी नाटबङ्गालाः पुरुषाः स्मृताः ॥68॥

पदच्छेदः -भूपालो भैरवश्चैव श्रीरागः फडमञ्जरी। वसन्तमालवी नाटबङ्गालाः पुरुषाः स्मृताः

अव्यय-भूपालो-यह कल्याण थाट का राग है इसका वादी स्वर ग तथा संवादी स्वर ध है, तथा इसमें वर्जित स्वर-म और नि है। इसकी जाति-औडव-औडव तथा गायन समय रात्रि का प्रथम प्रहर है, भैरवश्चैव-यह राग भैरव थाट का राग इसलिए इसको भैरव थाट का आश्रय राग भी कहा जाता है, इस राग में सात स्वर लगते है, इसलिये इसकी जाति सम्पूर्ण-सम्पूर्ण मानी जाती है। इस राग में रे और ध स्वर कोमल लगते है जिसे इस प्रकार दर्शाया जाता है। इस राग को गाने बजाने का समय भोर का है इसलिए इसको भोर का राग भी कहा जाता है, श्रीरागः -यह छह रागों में से तीसरा राग तथा जो संपूर्ण जाति का है, फडमञ्जरी-फडमञ्जरी, वसन्तमालवी-वसंत राग की रागिनियों में मालवी रागिनी को वसन्त राग की पत्नी कहते है, नाटबङ्गालाः -नाटबङ्गालाः, पुरुषाः -पुरुष राग कहे गये है, स्मृताः -स्मृति में रखना

भावार्थ-भूपाल कल्याण थाट का राग है इसका वादी स्वर ग तथा संवादी स्वर ध है, तथा इसमें वर्जित स्वर-म और नि है। इसकी जाति-औडव-औडव तथा गायन समय रात्रि का प्रथम प्रहर है, राग भैरव थाट अथवा राग इसलिए इसको भैरव थाट का आश्रय राग भी कहा जाता है, इस राग में सात स्वर लगते है, इसलिये इसकी जाति सम्पूर्ण-सम्पूर्ण मानी जाती है। इस राग में रे और ध स्वर कोमल लगते है। इस राग को गाने बजाने का समय भोर का है इसलिए इसको भोर का राग भी कहा जाता है, श्रीराग छह रागों में से तीसरा राग तथा जो संपूर्ण जाति का है, फडमञ्जरी, वसंत राग की रागिनियोँ में मालवी रागिनी को वसन्त राग की पत्नी कहते है तथा नाट बङ्गाला आदि को पुरुष राग कहा गया है, इसको स्मृति में रखना चाहिए।

वेलावली मलहरी बहुली भूपयोषितः।
देवक्रिया च पौराली काम्भारी भैरवस्त्रियः ॥69॥

पदच्छेदः -वेलावली मलहरी बहुली भूपयोषितः। देवक्रिया च पौराली काम्भारी भैरवस्त्रियः

अव्यय-वेलावली-संगीत का राग, मलहरी-मलहरी, बहुली-बहुली, भूपयोषितः -भूपयोषित, च देवक्रिया-और देवक्रिया, पौराली-पौराली, काम्भारी-काम्भारी, भैरवस्त्रियः -भैरव राग की रागिनियाँ है।

भावार्थ-वेलावली, मलहरी, बहुली, भूपयोषितः, देवक्रिया, पौराली और काम्भारी भैरव राग की रागिनियाँ है।

श्रीरागपतिकाम्भोजी भल्लाती च कुरञ्जिका।
देशी मनोहरी तुण्डी पडमञ्जरियोषितः ॥70॥

पदच्छेदः -श्रीरागपति काम्भोजी भल्लाती च कुरञ्जिका। देशी मनोहरी तुण्डी पडमञ्जरियोषितः

अव्यय-श्रीराग की रागिनियाँ काम्भोजी, भल्लाती-भल्लाती, च कुरञ्जिका-और कुरञ्जिका, देशी, मनोहरी, तुण्डी, पडमञ्जरियोषितः -पडमञ्जरी स्त्री

भावार्थ-श्रीराग की रागिनियाँ काम्भोजी, भल्लाती, और कुरञ्जिका, देशी, मनोहरी, तुण्डी और पडमञ्जरी होती है।

सारङ्गनाटनाटाख्या अहरीनाटयोषितः।।
नारायणी च गान्धारी रञ्जी बङ्गालयोषितः ॥71॥

पदच्छेदः -सारङ्गनाट नाटाख्या अहरीनाट योषितः।। नारायणी च गान्धारी रञ्जी बङ्गाल योषितः

अव्यय-सारङ्गनाट-सारङ्गनाट, नाटाख्या-नाट आख्या, अहरीनाट-अहरीनाट, योषितः -स्त्री राग, नारायणी-नारायणी, च गान्धारी-और गान्धारी, रञ्जी-रञ्जी, बङ्गाल-और बङ्गाल

भावार्थ-रागिनियोँ के क्रम में राग सारङ्गनाट, अहरीनाट, नारायणी, गान्धारी, रञ्जी और बङ्गाल स्त्री राग है।

पराटी द्रावडी हंसी वसन्तस्य च योषितः।

गुण्डक्रिया धूर्जरी च गौडी मालवयोषितः ॥72॥

पदच्छेदः -पराटी द्रावडी हंसी वसन्तस्य च योषितः। गुण्डक्रिया धूर्जरी च गौडी मालवयोषितः

अव्यय-पराटी-पराटी, द्रावडी-द्रावडी, हंसी-वह वर्णवृत्त जो बाईस अक्षरों का होता है, जिसके प्रत्येक चरण में दो मगण, एक तगण, तीन नगण, एक सगण और एक गुरु होता है हंसी कहलाता है, वसन्तस्य च-रागों के क्रम में दूसरा राग वसन्त राग इसकी उत्पत्ति पंचवक्त्र शिव के पाँचवें मुख से कही गई है, योषितः -स्त्री अर्थात रागिनियाँ, गुण्डक्रिया-गुण्डक्रिया, धूर्जरी-धूर्जरी, च गौडी-और गौडी, मालवयोषितः -मालव राग की स्त्री अर्थात रागिनियाँ

भावार्थ-पराटी, द्रावडी तथा वह वर्णवृत्त जो बाईस अक्षरों का होता है, जिसके प्रत्येक चरण में दो मगण, एक तगण, तीन नगण, एक सगण और एक गुरु होता है हंसी कहलाता है, रागों के क्रम में दूसरा राग वसन्त राग इसकी उत्पत्ति पंचवक्त्र शिव के पाँचवें मुख से कही गई है, स्त्रीअर्थात रागिनियोँ से संबन्धित कही गई है। गुण्डक्रिया, धूर्जरी और गौडी मालव राग की स्त्री अर्थात रागिनियोँ से संबन्धित कही गई है।

स्त्रीपुंसरागमाख्यातं द्वात्रिंशद्रागसंमतिः।

अन्ये षट्कं च पुरुषाः शट्त्रिंशद्गीतपारगैः ॥73॥

पदच्छेदः -स्त्री पुंसराग माख्यातं द्वात्रिंशत् रागसंमतिः। अन्ये षट्कं च पुरुषाः शट्त्रिंशद्गीतपारगैः

अव्यय-स्त्रीपुंसरागमाख्यातं-स्त्री तथा पुरुष राग के रूप में प्रसिद्ध, द्वात्रिंशत्-बत्तीस, रागसंमतिः -रागों में, अन्ये-अन्य, षट्कं च-और छह, पुरुषाः -पुरुष रागों में, शट्त्रिंशत्-छत्तीस, गीतपारगैः -गीत संगीत के जानकारों के द्वारा

भावार्थ-स्त्री तथा पुरुष राग के रूप में प्रसिद्ध बत्तीस राग तथा अन्य छह पुरुष रागों में छत्तीस रागिनियाँ या उनकी भार्याएँ है, गीत संगीत के जानकारों के द्वारा कहे गये है।

श्रीरागोऽपि वसन्तश्च भैरवः पञ्चमस्तथा ।

मेघराजस्तु विज्ञेयो नाटनारायणश्च षट् ॥74॥

पदच्छेदः -श्रीरागो अपि वसन्तश्च भैरवः पञ्चमस्तथा । मेघराजस्तु विज्ञेयो नाटनारायणश्च षट्

अव्यय-श्रीरागोऽपि-रागों में से तीसरा राग श्रीरागो जो संपूर्ण जाति का राग कहलाता है, वसन्तश्च-रागों में से दूसरा राग वसंत, इस राग की उत्पत्ति के पंचवक्त्र शिव के पाँचवें मुख से कही गई है,

देशी, देवगिरी, वैराटी, ताड़िका, ललिता और हिंडोला क्रमशः इसकी छह रागिनियाँ है, अन्य मत से अंधूली, गमकी, पटमंजरी, गौड़केरी, धामकली और देवशाखा छह रागिनियाँ है, यह वसंत ऋतु के तीसरे पहर या संध्या में गाया जानें वाला राग है, मालवी, त्रिवेणी, गौरी, केदारा, मधुमाधवी और पहाड़ी क्रमशः इसकी छह रागिनियाँ है, अन्य मत से गांधारी देवगांधारी, मालवश्री, साखी और रामकीरी ये पाँच रागिनियाँ कही गई है, भैरवः -रागों में से पहला तथा मुख्य राग है भैरव, यह ओड़व जाति का राग है क्यों कि इसमें ऋषभ और पंचम स्वर का प्रयोग नहीं होता है। भैरवी, बैरारी, मधुमाधवी, सिंधवी और बंगाली इसकी पाँच इसकी रागिनियाँ कही गई है, अन्य मत से भैरवी गुर्जरी, रेवा, गुणकली, बंगाली और बहुली ये छह इसकी रागिनियाँ है, रागिनियाँ के विषय में तरह-तरह के मतभेद पाए जाते है, पञ्चमस्तथा-संगीत के सात स्वरों में पाँचवाँ स्वर पंचम अर्थात प, इसमें प्राण, अपान, समान, उदान और व्यान एक साथ लगते है इसलिये यह 'पंचम' कहलाता है । स्वरग्राम में इसका संकेत 'प' होता है, शरदऋतु के प्रातःकाल में गाया जानें वाला यह राग हिंडोल, गांधार और मनोहर के मेल से बना है ऐसा भी कहा जाता है, अन्य मत से इसे ललित और वसंत के मेल से बना है ऐसा भी कहा जाता है, और स्तिथ होना, मेघ-यह ओड़व जातिका राग है और यह राग ब्रह्मा के मस्तक से उत्पन्न हुआ है, इसमें ध, नि सा रे ग, ये पाँच स्वर लगते है, इसकी स्त्रियाँ या रागिनियाँ मल्लारी, सोरठी, सारंगी वा हंसिका और मधुमाधवी है, अन्य मत से इसकी स्त्रियाँ या रागिनियाँ मल्लारी, देशी, सोरठ, नाटिका, तरुणी और कादंविनी होती है, राजस्तु-यह रागों में राजा के समान होता है, विज्ञेयो-यह समझने के योग्य है, नाटनारायणश्च षट्-नाटनारायण की जाति षाड़व संपूर्ण जाति का एक राग है इसमें इसमें निषाद स्वर वर्जित है, यह छह राग मानें जाते है।

भावार्थ-रागों में से तीसरा राग श्रीरागो जो संपूर्ण जाति का राग कहलाता है, रागों में से दूसरा राग वसंत, इस राग की उत्पत्ति के पंचवक्त्र शिव के पाँचवें मुख से कही गई है, देशी, देवगिरी, वैराटी, ताड़िका, ललिता और हिंडोला क्रमशः इसकी छह रागिनियाँ है, अन्य मत से अंधूली, गमकी, पटमंजरी, गौड़केरी, धामकली और देवशाखा छह रागिनियाँ है, यह वसंत ऋतु के तीसरे पहर या संध्या में गाया जानें वाला राग है, मालवी, त्रिवेणी, गौरी, केदारा, मधुमाधवी और पहाड़ी क्रमशः इसकी छह रागिनियाँ है, अन्य मत से गांधारी देवगांधारी, मालवश्री, साखी और रामकीरी ये पाँच रागिनियाँ कही गई है, रागों में से पहला तथा मुख्य राग है भैरव, यह ओड़व जाति का राग है क्यों कि इसमें ऋषभ और पंचम स्वर का प्रयोग नहीं होता है। भैरवी, बैरारी, मधुमाधवी, सिंधवी और बंगाली इसकी पाँच इसकी रागिनियाँ कही गई है, अन्य मत से भैरवी गुर्जरी, रेवा, गुणकली, बंगाली और बहुली ये छह इसकी रागिनियाँ है, रागिनियाँ के विषय में तरह-तरह के मतभेद पाए जाते है, संगीत

के सात स्वरों में पाँचवाँ स्वर पंचम अर्थात प, इसमें प्राण, अपान, समान, उदान और व्यान एक साथ लगते है इसलिये यह 'पंचम' कहलाता है । स्वरग्राम में इसका संकेत 'प' होता है, शरदऋतु के प्रातःकाल में गाया जानें वाला यह राग हिंडोल, गांधार और मनोहर के मेल से बना है ऐसा भी कहा जाता है, अन्य मत से इसे ललित और वसंत के मेल से बना है ऐसा भी कहा जाता है, और स्तिथ होना है। मेघ राग ओड़व जाति का राग है और यह राग ब्रह्मा के मस्तक से उत्पन्न हुआ है, इसमें ध, नि सा रे ग, ये पाँच स्वर लगते है, इसकी स्त्रियाँ या रागिनियाँ मल्लारी, सोरठी, सारंगी वा हंसिका और मधुमाधवी है, अन्य मत से इसकी स्त्रियाँ या रागिनियाँ मल्लारी, देशी, सोरठ, नाटिका, तरुणी और कादंविनी होती है, यह रागों में राजा के समान होता है, नाटनारायण की जाति षाड़व संपूर्ण जाति का एक राग है इसमें इसमें निषाद स्वर वर्जित है, यह छह राग मानें जाते है।

गौडी कोलाहली चैव द्रावल्यान्दोलिकी तथा ।
माधवी देवगान्धारी श्रीरागस्य वराङ्गनाः ॥75॥

पदच्छेदः -गौडी कोलाहली चैव द्रावल्य आन्दोलिकी तथा । माधवी देवगान्धारी श्रीरागस्य वराङ्गनाः

अव्यय-गौडी-गौडी, कोलाहली-कोलाहली, चैव-तथा, द्रावल्य-द्रावल्य, माधवी-माधवी, देवगान्धारी-देवगान्धारी, श्रीरागस्य-श्रीराग की, वराङ्गनाः -रागिनियाँ ही मानी जाती है।

भावार्थ-रागिनियोँ के क्रम क्रमशः गौडी, कोलाहली, तथा द्रावल्य, आन्दोलिकी तथा-आन्दोलिकी तथा, माधवी, देवगान्धारी श्रीराग की रागिनियाँ ही मानी जाती है।

शुद्धनाटा च सावेरी सैन्धवी मालती तथा।
त्रोटिकौमोदकी चैव पञ्चमस्य वराङ्गनाः ॥76॥

पदच्छेदः -शुद्धनाटा च सावेरी सैन्धवी मालती तथा। त्रोटि कौमोदकी चैव पञ्चमस्य वराङ्गनाः

अव्यय-शुद्धनाटा-शुद्धनाटा, च सावेरी-और सावेरी, सैन्धवी-सैन्धवी, मालती तथा-तथा मालती, त्रोटि-त्रोटि, कौमोदकी चैव-और कौमोदकी, पञ्चमस्य-राग पँचम की,

भावार्थ-रागिनियोँ के क्रम क्रमशः शुद्धनाटा, और सावेरी, सैन्धवी, तथा मालती, त्रोटि और कौमोदकी राग पँचम की रागिनियाँ मानी जाती है।

सौराष्ट्री चैव काम्भारी बङ्गाली मधुमाधवी।
देवक्री चैव भूपाली मेघरागस्य योषितः ॥77॥

पदच्छेदः -सौराष्ट्री चैव काम्भारी बङ्गाली मधुमाधवी। देवक्री चैव भूपाली मेघरागस्य योषितः

अव्यय-सौराष्ट्री-सौराष्ट्री, चैव काम्भारी-तथा काम्भारी, बङ्गाली-बङ्गाली, मधुमाधवी-मधुमाधवी, देवक्री चैव-तथा देवक्री, भूपाली-भूपाली, मेघराग-राग मेघ की, योषितः -रागिनियाँ

भावार्थ-रागिनियोँ के क्रम क्रमशः सौराष्ट्री, बङ्गाली, मधुमाधवी, तथा देवक्री, भूपाली, राग मेघ की स्त्री अर्थात रागिनियोँ कही गई है।

वल्लभा माधवी चैव विदग्धा चाभिसारिका ।

त्रिवेणी मेघरञ्जी च नाटनारायणस्य च ॥78॥

पदच्छेदः -वल्लभा माधवी चैव विदग्धा च अभिसारिका । त्रिवेणी मेघरञ्जी च नाटनारायणस्य च

अव्यय-वल्लभा-वल्लभा,माधवी-माधवी, चैव-तथा, विदग्धा-विदग्धा, चाभिसारिका-और अभिसारिका, त्रिवेणी, मेघरञ्जी च-और मेघरञ्जी, नाटनारायणस्य च-नाटनारायणस्य की स्त्री अर्थात रागिनियोँ कही गई है।

भावार्थ-रागिनियोँ के क्रम क्रमशः वल्लभा, तथा माधवी, और अभिसारिका, त्रिवेणी, और मेघरञ्जी नाटनारायण की जाति षाड़व संपूर्ण जाति का एक राग है इसमें इसमें निषाद स्वर वर्जित है, की स्त्री अर्थात रागिनियोँ कही गई है।

.....

.....॥79॥

आयुर्धर्मयशोबुद्धिधनधान्यफलं लभेत् ।

रागाभिवृद्धिसन्तानं पूर्णरागाः प्रगीयते (?)॥80॥

पदच्छेदः -आयुर् धर्म यशो बुद्धि धनधान्य फलं लभेत् राग अभिवृद्धि सन्तानं पूर्णरागाः प्रगीयते (मग्ङले)

अव्यय-आयुर्धर्मयशोबुद्धि-आयु, धर्म, यशो, बुद्धि, धनधान्य-धन-धान्य, फलं-शुभ कर्मों के परिणाम जो संख्या में चार माने जाते है और जिनके नाम धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष, लभेत्-का लाभ देनें वाला, रागाभिवृद्धि-सफलता, उन्नति और समृद्धि, सन्तानं-संतति, पूर्णरागाः -गहरी आसक्ति सुख की अनभूति कराता है, प्रगीयते (मग्ङले)-जो गाया गया हो

भावार्थ-आयु, धर्म, यशो, बुद्धि, धन-धान्य शुभ कर्मों के परिणाम जो संख्या में चार माने जाते है और जिनके नाम धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष, का लाभ देनें वाला तथा सफलता, उन्नति और समृद्धि, संतति की गहरी आसक्ति अर्थात सुख की अनभूति कराता है, वह जो पूर्णरागों को गाता है, ऐसा कहा गया है।

सङ्ग्रामरूपलावण्यविरहं गुणकीर्तनम् ।

षाडवेन प्रगातव्यं लक्षणं गदितं यथा ॥81॥

पदच्छेदः -सङ्ग् ग्राम रूप लावण्य विरहं गुण कीर्तनम् । षाडवेन प्रगातव्यं लक्षणं गदितं यथा

अव्यय-सङ्ग्रामरूपलावण्यविरहं-सात स्वरों का समूह जिसको संगीत की भाषा में सप्तक कहते है, ग्राम क्रमशः षड़ज, मध्यम और गांधार नामक तीन ग्राम निश्चित कर लिए गए है , उसी प्रकार देवताओं का भी एक क्रम है ब्रह्मा, विष्णु और महेश है। प्रत्येक ग्राम में सात-सात मूर्च्छनाएँ होती है । सा (षड़ज) से आरंभ करके (सा रे ग म प ध नि) जो सात स्वर है, उनके समूह को षड़ज ग्राम-म स्वर अर्थात मध्यम से आरभ करके म प ध नि सा रे ग, यह जो सात स्वर हों, उनके समूह को मध्यम ग्राम और इसी प्रकार गा स्वर अर्थात गांधार या प स्वर अर्थात पंचम से आरंभ करके जो स्वर हों, उनके समूह को गांधार अथवा पंचम को अवस्थानुसार ग्राम कहते है । इनमें से पहले दो ग्रामों का व्यवहार तो इसी लोक में मनुष्यों द्वारा होता है परन्तु तीसरे ग्राम का व्यवहार स्वर्गलोक में नारद जी करते है । तीसरे ग्राम के सुर-स्वर बहुत ही ऊँचे होते है, और मनुष्यों के लिए संभव भी नहीं है। अतः तीसरे ग्राम के सुर-स्वर केवल तन्त्र वाध्यों जैसे सितार, सारंगी, हारमोनिम आदि बाज में ही निकल सकते है, अर्थात ग्रामों के साथ, जिसमें रूप जिसका ज्ञान आँखों को होता है, आतिशय सौंदय लवण का भाव या धर्म शील की उत्तमता और वियोग का दु:ख भी प्रदर्शित होता हो के सहित, गुणकीर्तनम्-के गुणों का कीर्तन, षाडवेन-सा (षड़ज) से आरंभ करके, प्रगातव्यं-गाना चाहिए, लक्षणं-लक्षणों सहित, गदितं यथा-जिस प्रकार कहा हुआ है।

भावार्थ-सात स्वरों का समूह जिसको संगीत की भाषा में सप्तक कहते है, के ग्राम क्रमशः षड़ज, मध्यम और गांधार नामक तीन ग्राम निश्चित कर लिए गए है , उसी प्रकार देवताओं का भी एक क्रम है ब्रह्मा, विष्णु और महेश है। प्रत्येक ग्राम में सात-सात मूर्च्छनाएँ होती है । सा (षड़ज) से आरंभ करके (सा रे ग म प ध नि) जो सात स्वर है, उनके समूह को षड़ज ग्राम-म स्वर अर्थात मध्यम से आरभ करके म प ध नि सा रे ग, यह जो सात स्वर हों, उनके समूह को मध्यम ग्राम और इसी प्रकार गा स्वर अर्थात ग स्वर गांधार या प स्वर अर्थात पंचम से आरंभ करके जो स्वर हों, उनके समूह को गांधार अथवा पंचम को अवस्थानुसार ग्राम कहते है । इनमें से पहले दो ग्रामों का व्यवहार तो इसी लोक में मनुष्यों द्वारा होता है परन्तु तीसरे ग्राम का व्यवहार स्वर्गलोक में नारद जी करते है । तीसरे ग्राम के सुर-स्वर बहुत ही ऊँचे होते है, और मनुष्यों के लिए संभव भी नहीं है। अतः तीसरे ग्राम के सुर-स्वर केवल तन्त्र वाध्यों जैसे सितार, सारंगी, हारमोनिम आदि बाज में ही निकल सकते है, अर्थात ग्रामों के साथ, जिसमें रूप जिसका ज्ञान आँखों को होता है, आतिशय सौंदय लवण का भाव या धर्म शील की उत्तमता और वियोग का दु:ख भी प्रदर्शित होता हो के सहित सा अर्थात षड़ज से आरंभ करके जिस प्रकार कहा गया है, लक्षणों सहित गाना चाहिए।

व्याधिनाशी (नाशे) शत्रुनाशी (नाशे) भयशोकविनाशने ।
व्याधिदारिध्यसन्तापे विषमग्रहमोचने ॥82॥

पदच्छेदः -व्याधिनाशी (नाशे) शत्रुनाशी (नाशे) भयशोकविनाशने व्याधि दारिध्य सन्तापे विषम ग्रह मोचने

अव्यय-व्याधिनाशी (नाशे)-बीमारी को समाप्त या ध्वंस करनें वाली, शत्रुनाशी (नाशे)-शत्रुओं को समाप्त या ध्वंस करनें वाली, भयशोक-विपत्ति की संभावना से मन में होनेवाला क्षोभ तथा अनिष्ट की प्रप्ति से उत्पन्न मनोविकार, विनाशने-ध्वस्त करना, व्याधिदारिध्य-बीमारी और दरिद्रता, सन्तापे-मानसिक कष्ट, विषमग्रहमोचने-असमान सूर्य, चंद्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र और शनि आदि के विपरीत प्रभाव से मुक्त करना

भावार्थ-बीमारी को समाप्त या ध्वंस करनें वाला, शत्रुओं को समाप्त या ध्वंस करनें वाला, विपत्ति की संभावना से मन में होनेवाला क्षोभ तथा अनिष्ट की प्रप्ति से उत्पन्न मनोविकार को ध्वस्त करनें और बीमारी और दरिद्रता, मानसिक कष्ट तथा असमान सूर्य, चंद्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र और शनि आदि ग्रहों के विपरीत प्रभाव से मुक्त करानें वाले संगीत के राग ही होते है।

कामडम्बरनाशे च मङ्गलं (मङ्गले) विषसंहृते।
औडवेन प्रगातव्यं ग्रामशान्त्यर्थकर्मणि ॥83॥

पदच्छेदः -काम आडम्बर नाशे च मङ्गलं (मङ्गले) विषसंहृते। औडवेन प्रगातव्यं ग्राम शान्त्यर्थ कर्मणि

अव्यय-कामडम्बरनाशे-काम आडम्बर के नाश में, च मङ्गलं-और अभीष्ट की सिद्धि, विषसंहृते-विष से संहार किए गए, औडवेन-ओड़व जाति का राग, प्रगातव्यं-गाना चाहिए, ग्रामशान्त्यर्थ-ग्राम (संगीत के सात स्वरों का समूह) की शांति के लिए, कर्मणि-काम करनेवाला

भावार्थ-काम आडम्बर के नाश और अभीष्ट की सिद्धि के लिए तथा विषम रागों से गानें से संहार हुये ग्रामों (संगीत के सात स्वरों का समूह) की शांति के लिए ओड़व जाति के राग गाना चाहिए।

मुक्ताङ्गकम्पिताः केचित्केचिदर्धविकम्पिताः।
केचित्कम्पविहीनाश्चैवेति रागास्त्रिधा कृताः ॥84॥

पदच्छेदः-मुक्ताङ्गकम्पिताः केचित् केचिद अर्धविकम्पिताः। केचित् कम्पविहीना च श्रैवेति रागा स्त्रिधा कृताः

अव्यय-मुक्ताङ्गकम्पिताः -मुक्त अंगों से कम्पित, केचित्-कोई कोई, केचिद-कभी कभी, अर्धविकम्पिताः -आधे मंद पड़ते हुए स्वरों को गलत रूप से उच्चारित करना, केचित्-कोई कोई, कम्पविहीना-कुछ कम्पन विहीन, च श्रैवेति-और ऐसे, रागास्त्रिधा-तीन राग, कृताः -किए या कहे गये

भावार्थ-कहीं कहीं पर मुक्त अंगों से कम्पित तो कहीं कहीं पर आधे मंद पड़ते हुए स्वरों को गलत रूप से उच्चारित और कहीं कहीं कम्पन विहीन, ऐसे तीन प्रकार के कहे जाते है।

अकम्पाः कम्पसंयुक्ताः सकम्पाः कम्पवर्जिताः।
यस्तच्छृणोति मूढात्मा तार्वुभौ ब्रह्मघातकौ ॥ 85 ॥

पदच्छेदः -अकम्पाः कम्पसंयुक्ताः सकम्पाः कम्पवर्जिताः। यस्त च छृणोति मूढात्मा तार्वुभौ ब्रह्मघातकौ

अव्यय-अकम्पाः -न काँपनेवाला, कम्पसंयुक्ताः -कँपकँपी से संबंद्ध, सकम्पाः -जो कंपन के साथ हो, कम्पवर्जिताः -काँपना जो ग्रहण के अयोग्य ठहराया गया हो, यस्तच्छृणोति-जो सुनता है, मूढात्मा-निर्बोध अथवा मूर्ख, तार्वुभौ-इस जगत में दो प्रकार के मनुष्य आनंद में रहते है, प्रथम जो पूर्णत: अज्ञानी हो और दूसरा वे जिनका बुद्धिलय हो गया हो, यही दोनों, ब्रह्मघातकौ-ब्राह्मण की हत्या करनेवाला

भावार्थ-न काँपनेवाला, कँपकँपी से संबंद्ध तथा जो कंपन के साथ हो और जो काँपना जो ग्रहण के अयोग्य ठहराया गया हो, निर्बोध अथवा मूर्ख इस जगत में दो प्रकार के मनुष्य आनंद में रहते है, प्रथम जो पूर्णत: अज्ञानी हो और दूसरा वे जिनका बुद्धिलय हो गया हो, यही दोनों संगीतरूपी ब्राह्मण की हत्या करनें वाले कहलाते है।

विष्णुरूपो भवेत्तालो नादश्चैव शिवात्मकः ।
प्रणवो ब्रह्म चेत्याहुर्गीतशास्त्रविशारदाः ॥86॥

पदच्छेदः -विष्णुरूपो भवेत्तालो नादश्चैव शिवात्मक प्रणवो ब्रह्म चेत्याहुर्गीत शास्त्र विशारदाः

अव्यय-विष्णुरूपो-विष्णु सम्पूर्ण विश्व की सर्वोच्च शक्ति, जिसकी शक्ति इस सम्पूर्ण ब्रम्हाण्ड में प्रविष्ट है, इसलिए वह विष्णु रूप कहलाते है, भवेत्तालो-तालों में हो, नादश्चैव-आकाश में स्थित अग्नि अर्थात ऊर्जा और वायु के संयोग से नाद की उत्पत्ति हुई है, नाद के तीन प्रकार है-प्राणिभव-अंगों से उत्पन्न किया गया, अप्राणिभव-तन्त्र वाध्य जैसे वीणा आदि से निकलता है वह अप्राणिभव और उभयसंभव-जिसकी उत्पत्ति वायु के संतुलित वेग के प्रयोग निकाला जाता है वह जैसे-बाँसुरी आदि है। नाद के बिना गीत, स्वर, राग आदि कुछ भी संभव नहीं है। नाद परमज्योति वा ब्रह्मस्वरुप है, जिससे सारा जगत् नादात्मक है। नाद दो प्रकार का है-आहत और अनाहत। अनाहत नाद को केवल ईश्वर के परम ज्ञान को प्राप्त ही सुन सकते है। अन्तःकरण नाद सुनने के लिये एकाग्रचित होकर शांतिपूर्वक आँख, कान, नाक, मुँह इन सबका भौतिक प्रयोग संतुलित कर दें। अभ्यास बढ़ जाने पर क्रमशः वह सूक्ष्मतम् सूक्ष्म होती अनेकानेक प्रकार की ध्वनियों में से जिसमें चित्त सबसे अधिक स्थिर

हो, अभ्यास करते करते वह नादरुपी ब्रह्म में चित्त लीन हो जायगा, शिवात्मकः -शिव, आदि, अनन्त, को आत्मिक समाहित, प्रणवो-ओंकार, ब्रह्म-ब्रह्म, चेत्याहुर्गीत-यदि गीत कहा हो, शास्त्र विशारदाः -शास्त्रों के पंडित या विद्वान् हो

भावार्थ-ताल को विष्णु सम्पूर्ण विश्व की सर्वोच्च शक्ति, जिसकी शक्ति इस सम्पूर्ण ब्रम्हाण्ड में प्रविष्ट है, इसलिए वह विष्णु रूप कहलाते है व आकाश में स्थित अग्नि अर्थात ऊर्जा और वायु के संयोग से नाद की उत्पत्ति हुई है, नाद के तीन प्रकार है-प्राणिभव-अंगों से उत्पन्न किया गया, अप्राणिभव-तन्त्र वाध्य जैसे वीणा आदि से निकलता है वह अप्राणिभव और उभयसंभव-जिसकी उत्पत्ति वायु के संतुलित वेग के प्रयोग निकाला जाता है वह जैसे-बाँसुरी आदि है। नाद के बिना गीत, स्वर, राग आदि कुछ भी संभव नहीं है। नाद परमज्योति वा ब्रह्मस्वरुप है, जिससे सारा जगत् नादात्मक है। नाद दो प्रकार का है-आहत और अनाहत। अनाहत नाद को केवल ईश्वर के परम ज्ञान को प्राप्त ही सुन सकते है। अन्तःकरण नाद सुनने के लिये एकाग्रचित होकर शांतिपूर्वक आँख, कान, नाक, मुँह इन सबका भौतिक प्रयोग संतुलित कर दें। अभ्यास बढ़ जाने पर क्रमशः वह सूक्ष्मतम् सूक्ष्म होती अनेकानेक प्रकार की ध्वनियों में से जिसमें चित्त सबसे अधिक स्थिर हो, अभ्यास करते करते वह नादरुपी ब्रह्म में शिव, आदि, अनन्त, को आत्मिक रूप से ओंकार ब्रह्मस्वरूप होता है, शास्त्रों के पंडित या विद्वान् हो, के द्वारा कहा गया है।

तालं धृत्वा प्रमाणेन पश्चाद्गीतं समारभेत् ।
तथा नादं प्रकुर्वीत पश्चाद्गीतं प्रगीयते ॥87॥

पदच्छेदः -तालं धृत्वा प्रमाणेन पश्चाद गीतं समारभेत् । तथा नादं प्रकुर्वीत पश्चाद गीतं प्रगीयते

अव्यय-तालं-गाने बजाने में वह शब्द जो दोनों हथेलियों को एक दूसरी पर मारनें से उत्पन्न होता है, संस्कृत ग्रंथों में ताल दो प्रकार के माने गए है-मार्ग और देशी, धृत्वा-धारण करनें वाले अर्थात विष्णु, ब्रह्मा,आकाश, समुद्र, बुद्धिमान व्यक्ति प्रमाणेन-आदि, चार प्रकार के प्रमाण माने है-प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, और शब्द, पश्चाद-बाद में, गीतं-संगीत के वह बोल जो पद या छंद में गाया जाता है, गीत दो प्रकार का होता है-वैदिक और लौकिक, समारभेत्-आरम्भ करें, तथा नादं-आकाश में स्थित अग्नि अर्थात ऊर्जा और वायु के संयोग से नाद की उत्पत्ति हुई है, नाद के तीन प्रकार है-प्राणिभव-अंगों से उत्पन्न किया गया, अप्राणिभव-तन्त्र वाध्य जैसे वीणा आदि से निकलता है वह अप्राणिभव और उभयसंभव-जिसकी उत्पत्ति वायु के संतुलित वेग के प्रयोग निकाला जाता है वह जैसे-बाँसुरी आदि है। नाद के बिना गीत, स्वर, राग आदि कुछ भी संभव नहीं है। नाद परमज्योति वा ब्रह्मस्वरुप है, जिससे सारा जगत् नादात्मक है। नाद दो प्रकार का है-आहत और अनाहत। अनाहत नाद को केवल

ईश्वर के परम ज्ञान को प्राप्त ही सुन सकते है। अन्तःकरण नाद सुनने के लिये एकाग्रचित होकर शांतिपूर्वक आँख, कान, नाक, मुँह इन सबका भौतिक प्रयोग संतुलित कर दें। अभ्यास बढ़ जाने पर क्रमशः वह सूक्ष्मतम् सूक्ष्म होती अनेकानेक प्रकार की ध्वनियों में से जिसमें चित्त सबसे अधिक स्थिर हो, अभ्यास करते करते वह नादरुपी ब्रह्म में चित्त लीन हो जायगा, प्रकुर्वीत-शुरुआत करें, पश्चाद-बाद में, गीतं-संगीत के वह बोल जो पद या छंद में गाया जाता है, गीत दो प्रकार का होता है-वैदिक और लौकिक, प्रगीयते-गाया जाता है

भावार्थ-गाने बजाने में वह शब्द जो दोनों हथेलियों को एक दूसरी पर मारनें से उत्पन्न होता है, संस्कृत ग्रंथों में ताल दो प्रकार के माने गए है-मार्ग और देशी को धारण करनें वाले अर्थात विष्णु, ब्रह्मा,आकाश, समुद्र, बुद्धिमान व्यक्ति प्रमाणेन-आदि नें चार प्रकार के प्रमाण माने है-प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, और शब्द,के बाद में संगीत के वह बोल जो पद या छंद में गाया जाता है, गीत दो प्रकार का होता है-वैदिक और लौकिक का आरम्भ करें। तथा नाद जिसकी आकाश में स्थित अग्नि अर्थात ऊर्जा और वायु के संयोग से नाद की उत्पत्ति हुई है, नाद के तीन प्रकार है-प्राणिभव-अंगों से उत्पन्न किया गया, अप्राणिभव-तन्त्र वाध्य जैसे वीणा आदि से निकलता है वह अप्राणिभव और उभयसंभव-जिसकी उत्पत्ति वायु के संतुलित वेग के प्रयोग निकाला जाता है वह जैसे-बाँसुरी आदि है। नाद के बिना गीत, स्वर, राग आदि कुछ भी संभव नहीं है। नाद परमज्योति वा ब्रह्मस्वरुप है, जिससे सारा जगत् नादात्मक है। नाद दो प्रकार का है-आहत और अनाहत। अनाहत नाद को केवल ईश्वर के परम ज्ञान को प्राप्त ही सुन सकते है। अन्तःकरण नाद सुनने के लिये एकाग्रचित होकर शांतिपूर्वक आँख, कान, नाक, मुँह इन सबका भौतिक प्रयोग संतुलित कर दें। अभ्यास बढ़ जाने पर क्रमशः वह सूक्ष्मतम् सूक्ष्म होती अनेकानेक प्रकार की ध्वनियों में से जिसमें चित्त सबसे अधिक स्थिर हो, अभ्यास करते करते वह नादरुपी ब्रह्म में चित्त लीन हो जायगा। बाद में गीत, यह दो प्रकार का होता है-वैदिक और लौकिक। संगीत के वह बोल जो पद या छंद में गाया जाता है।

अनेनैव प्रकारेण गीतमाकर्णयेध्रुवम् ।

तस्य नाभावदोषोऽस्ति महापातकतत्समः (?) ॥88॥

पदच्छेदः -अनेनैव प्रकारेण गीतम् आकर्णयेद् ध्रुवम् । तस्य नाभावदोषोऽस्ति महापातक तत्समः (?)

अव्यय-अनेनैव प्रकारेण-इस प्रकार से, गीतम्-गीत को, आकर्णयेद्-सुनना, ध्रुवम्-निश्चित, तस्य-उसका, नाभावदोषोऽस्ति-दोष का अभाव नहीं है, महापातकतत्समः-उसके समान महापाप

भावार्थ-इस प्रकार गीत को सुननें से उसका दोष का अ भाव नहीं होता है यह ध्रुव निश्चित है, नहीं तो उसके समान कोई महापाप नहीं है।

श्रुतिहीनं च यद्गानं वीणावेण्वादिसम्भवम् ।
या शृणोति स आप्रोन्ति पातकं दुःखमेव च ॥ 89॥

पदच्छेदः -श्रुतिहीनं च यद्गानं वीणावेण्वादि सम्भवम् । या शृणोति स आप्रोन्ति पातकं दुःखमेव च

अव्यय-श्रुतिहीनं-श्रवण करने की क्रिया जो भाव जो ओछा, नीच, बुरा, अथवा जो असत् हो, च यद्गानं-और उस गान को, वीणावेण्वादि-वीणा वेणु आदि, सम्भवम्-उत्पत्ति हो, या शृणोति-जो सुनता है, स आप्रोन्ति-वह प्राप्त करता है, पातकं-वह कर्म जिसके करने से नरक जाना पड़ता है, दुःखमेव च-और दुख को ही

भावार्थ-श्रवण करने की क्रिया जो भाव जो ओछा, नीच, बुरा, अथवा जो असत् हो वीणा वेणु आदि से उस राग के गान को जो सुनता है, वह कर्म जिस कर्म को करनें से नरक जाना पड़ता है और दुख को ही प्राप्त करता है।

अपस्वरं कुनादं च श्रुतिहीनं तथाधिकम् ।
यः शृणोति स मूढात्मा पतते नरके चिरम् ॥90॥

पदच्छेदः -अपस्वरं कुनादं च श्रुतिहीनं तथाधिकम् । यः शृणोति स मूढात्मा पतते नरके चिरम्

अव्यय-अपस्वरं-कटु अथवा दुष्ट स्वर या ध्वनि, कुनादं च-और बुरा नाद, श्रुतिहीनं-श्रवण करने की क्रिया जो भाव जो ओछा, नीच, बुरा, अथवा जो असत् हो, तथाधिकम्-तथा अधिक, यः शृणोति-जो सुनता है, स मूढात्मा-वह निर्बोध अथवा मूर्ख, पतते नरके चिरम्-वह पतित है और लम्बे समय तक नरक को भोगता है

भावार्थ- कटु अथवा दुष्ट स्वर या ध्वनि, और बुरा नाद, श्रवण करने की क्रिया जो भाव जो ओछा, नीच, बुरा, अथवा जो असत् हो, तथा अधिक राग-द्वेशपूर्ण हो को जो सुनता है वह निर्बोध अथवा मूर्ख होता है पतित है, और लम्बे समय तक नरक को भोगता है।

शोकसन्तापदारिद्रय्मायुः क्षीणं भवेध्रुवम् ।
राज्यनाशो मनोदुःखं भवत्येव न संशयः ॥91॥

पदच्छेदः -शोकसन्ताप दारिद्रय्मायुः क्षीणं भवेत् ध्रुवम् । राज्यनाशो मनोदुःखं भवत्येव न संशयः

अव्यय-शोकसन्ताप-अभीष्ट की प्राप्ति न होनें और अनिष्ट की प्रप्ति से उत्पन्न ग्लानि का मनोभाव, दारिद्रय्मायुः -निर्धनता में आयु, क्षीणंभवेत्-कमजोर होता है, ध्रुवम्-ध्रुव निश्चित, राज्यनाशो-राज्य का विनाश, मनोदुःखं-मन का दुख, भवत्येव-होता ही है, न संशयः -संदेह नहीं

भावार्थ-अभीष्ट की प्राप्ति न होनें और अनिष्ट की प्रप्ति से उत्पन्न ग्लानि का मनोभाव तथा राज्य का विनाश, मन का दुख और निर्धनता में आयु क्षीर्ण होती है। इसमें कोई संदेह नहीं है, यह ध्रुव निश्चित है।

ज्ञात्वा सर्वमिदं शास्त्रं यः शृणोति सदा नृपः ॥

आयुरारोग्यमैश्वर्यं लभते वाञ्छितं फलम् ॥92॥

पदच्छेदः -ज्ञात्वा सर्वमिदं शास्त्रं यः शृणोति सदा नृपः।। आयु आरोग्य ऐश्वर्यम् लभते वाञ्छितं फलम्

अव्यय-ज्ञात्वा-जानकर, सर्वमिदं-सब कुछ, शास्त्रं-शास्त्रों को, यः शृणोति-जो सुनता है, सदा नृपः - सर्वदा राजा, आयु-आयु, आरोग्य-स्वस्थ तथा तंदुरुस्त, ऐश्वर्यम्-आणिमादिक अधिपत्य सिद्धियाँ, लभते वाञ्छितं फलम्-इच्छित फलों को प्राप्त करना

भावार्थ-सभी शास्त्रों को जानकर जो शास्त्रोंक्त रागों को सुनता है, वह आयु, स्वस्थ तथा तंदुरुस्त आणिमादिक अधिपत्य सिद्धियोँ को तथा इच्छित फलों को प्राप्त करता है।

इति श्रीनारदकृतौ सङ्गीतमकरन्दे तृतीय-पादः समाप्तः

इस प्रकार श्रीनारद जी द्वारा संपादित सङ्गीतमकरन्द का तीसरा चरण पूर्णता को प्राप्त होता है।

सङ्गीताध्याये चतुर्थः पादः।

अथ मृदङ्गलक्षणम् ।

दक्षिणाङ्गे स्थितो रुद्र उमा वामे प्रतिष्ठिता।

शिवशक्तिमयो नादो मर्दले परिकीर्तितः॥1॥

पदच्छेदः -दक्षिण अङ्गे स्थितो रुद्र उमा वामे प्रतिष्ठिता शिवशक्ति मयो नादो मर्दले परिकीर्तितः

अनव्यय-दक्षिणाङ्गे-जिनके दाहिने अंग ओर, स्थितो-स्थान प्राप्त है, रुद्र-महादेव, उमा-माँ पार्वती, वामे-दक्षिण या दाहिने का उलटा, प्रतिष्ठिता-प्रतिष्ठित करनेवाला, शिवशक्ति-कल्याणकारी और शुभकारी पापों का नाश करने वाला, अथवा विस्तार में कहें तो पापों का नाश करने वाला, और देने वाला यानी दाता, शिव पुरुष के और शक्ति स्वरुप देवी पार्वती प्रकृति की, पुरुष और प्रकृति के बीच यदि संतुलन न हो, तो सृष्टि का अपूर्ण है अर्थात शिवशक्ति मय सृष्टि ही पूर्णता है। नादो-उच्च ध्वनि का विस्तार करना, मर्दले-पखावज के ढंग का एक प्रकार का प्राचीन वाद्ययन्त्र जो वर्तमान में प्रायः कीर्तन, आदि के समय बंगाल में बजाया जाता है, का घनघोर वादन, परिकीर्तितः -गुणगान से प्राप्त ख्याति का प्रकाश

भावार्थ-एक प्रकार का प्राचीन वाद्य यन्त्र जो एक प्रकार से ढोल तथा पखावज मिश्रित वाद्य जिसका उद्घोष बहुत ही तीव्र होता है, वर्तमान में विशेष रूप शक्ति पूजा आदि के समय बंगाल में बजाया जाता है, गुणगान से घनघोर वादन की ख्याति प्राप्त है, उस आत्मरमणीय स्थान पर जहाँ शिव पुरुष के और शक्ति स्वरुपा देवी पार्वती प्रकृति की प्रतिनिधित्व कर रहे हैं, अर्थात शक्ति स्वरुपा देवी पार्वती प्रकृति की प्रतिनिधी हैं, देवाधिदेव महादेव जो स्वयं में कल्याणकारी और शुभकारी पापों का नाश करने वाला, अथवा विस्तार में कहें तो पापों का नाश करनें और देने वाले यानी दाता हैं, जिनके बायीं ओर शक्ति स्वरुपा देवी पार्वती और के दाहिनी ओर देवाधिदेव महादेव प्रतिष्ठित हैं। पुरुष और प्रकृति के बीच यदि संतुलन न हो, तो सृष्टि का अपूर्ण है अर्थात शिवशक्ति मय सृष्टि ही पूर्णता है।

शिवनादे भवेयाधिः शक्त्या दारिद्यमानुयात् ।
द्विर्नादयुक्तः श्रेष्ठश्च श्रुतियुक्तश्च मर्द्यले ॥2॥

पदच्छेदः- शिवनादे भवेत व्याधिः शक्त्या दारिद्य मानुयात् द्विर्नाद युक्तः श्रेष्ठ श्च श्रुति युक्त श्च मर्द्यले

अन्वय- शिवनादे-शिव नाद में, भवेत व्याधिः-बीमारी उत्पन्न करने वाला, शक्त्या- शक्ति से, दारिद्य-दरिद्रता व गरीबी, मानुयात्-प्राप्त होती है, द्विर्नाद युक्तः- दोनों नादों से युक्त, श्रेष्ठश्च-श्रेष्ठ है, श्रुति युक्तश्च श्रुति से युक्त, मर्द्यले-मर्दल मे

भावार्थ- केवल शिव नाद के श्रवण से व्याधि(बीमारी) एवं उमा के द्वारा दारिद्रय उत्पन्न होता है अर्थात् जिससे गायक व श्रोता दोनों ही बीमारी व दरिद्रता को प्राप्त होते है इसलिए इसका उपाय देवर्षि नारद द्वारा बताते हुए कहा गया है की दोनों नादों व श्रुतियों से युक्त मर्दल (मृदङ्ग) का नाद ही श्रेष्ठ एवं श्रुति से युक्त (सुनने योग्य) होता है।

स्त्रीध्वनिः पुरुषाकारः स्त्र्याकारश्चैव पुंस्वरः ।
आयुलक्ष्मीहरौ नित्यमश्राव्यौ तावुभौ ध्वनी ॥3॥

पदच्छेदः- स्त्रीध्वनिः पुरुषाकारः स्त्र्याकारश्चैव पुंस्वरः आयु लक्ष्मी हरौ नित्यम श्राव्यौ तावुभौ ध्वनी

अन्वय- स्त्रीध्वनि- स्त्री की ध्वनि, पुरुषाकार-पुरुष का आकार, स्त्र्याकार- स्त्री का आकार, श्चैवपुंस्वरः-पुलिङ्ग स्वर, आयुलक्ष्मीहरौ-आयु व धन को हरने वाला, नित्यम- नित्य नियम से, श्राव्यौ-सुनना चाहिए, तावुभौ ध्वनी-वे दोनों ध्वनि

भावार्थ- जब पुरुष आकार होता है टीबी स्त्री ध्वनि होती है तथा जब स्त्री आकार होता है तब पुरुष ध्वनि होती है। यदि इस प्रकार के नियम से दोनों न सुने जाएँ तो आयु, धन, लक्ष्मी का हरण होता है।

सर्वेषां श्रुतिसंयुक्तमव्यक्तमधुरान्वितम् ।
नादमीदृग्विधं श्रेष्ठमायुर्लक्ष्मीकरं जगुः ॥ 4॥

पदच्छेदः- सर्वेषां श्रुति संयुक्त मव्यक्त मधुरान्वितम् नाद मीदृग्विधं श्रेष्ठ मायुर्लक्ष्मी करं जगुः

अन्वय-सर्वेषां-सब मे, श्रुतिसंयुक्त-श्रुति संयुक्त, मव्यक्त-अव्यक्त, मधुरान्वितमं-मधुरता से युक्त, नादमीदृग्विधं- इस प्रकार के नाद को, श्रेष्ठं-श्रेष्ठ, मायुर्लक्ष्मीकरं-आयु व लक्ष्मी प्रदान करने वाला, जगुः-कहा गया है।

भावार्थ-सभी नाद व श्रुतियों से युक्त तथा अव्यक्त माधुर्यम से युक्त मधुरस ही अन्विन्त नाद श्रेष्ठ आयु व लक्ष्मी को देने वाला होता है।

लक्षणं तु मृदङ्गस्य कथ्यते नारदेन च।

चतुर्विंशतिच्छन्दांसि चर्मग्रन्थीनि तानि च ॥ 5॥

पदच्छेदः-लक्षणं तु मृदङ्गस्य कथ्यते नारदेन च चतुर्विंशति च्छन्दांसि चर्म ग्रन्थीनि तानि च

अन्वय- लक्षणं तु-लक्षण तो, मृदङ्गस्य-मृदङ्ग का, कथ्यते नारदेन च- नारद के द्वारा कहा जाता है, चतुर्विंशति-चौबीस, छन्दांसि-छंदों मे, चर्मग्रन्थीनि-चर्म ग्रंथि, तानि च- और वे सब

भावार्थ- देवर्षि नारद द्वारा मृदङ्ग के लक्षण कहे गए है जिसमे मृदङ्ग मे चौबीस छन्द चर्म ग्रंथि के रूप मे विराजमान है।

अथ वीणालक्षणम् ।

कच्छपी कुब्जिका चित्रा वहन्ती परिवादिनी ।

जया घोषावती ज्येष्ठा नकुलीष्टेति कीर्तिता (?)॥6॥

पदच्छेदः- कच्छपी कुब्जिका चित्रा वहन्ती परिवादिनी जया घोषावती ज्येष्ठा नकुली ष्टेति कीर्तिता

अन्वय- कच्छपी- कच्छपी वीणा, कुब्जिका- कुब्जिका वीणा, चित्रा-चित्रा वीणा, वहन्ती- वहन्ती वीणा, परिवादिनी- परिवादिनी वीणा, जया-जया वीणा, घोषावती- घोषावती वीणा, ज्येष्ठा- ज्येष्ठावीणा, नकुलीष्टेति कीर्तिता- नकुली वीणा कही गयी है।

भावार्थ- कच्छपी, कुब्जिका, चित्रा, वहन्ती, परिवादिनी, जया, घोषावती, ज्येष्ठा, नकुली यह आठ प्रकार की वीणाओं का वर्णन नारद द्वारा बताई गयी है।

महती वैष्णवी ब्राह्मी रौद्री कूर्मी च रावणी ।

सारस्वती किन्नरी च सैरन्ध्री घोषका तथा ॥7॥

पदच्छेदः- महती वैष्णवी ब्राह्मी रौद्री कूर्मी च रावणी सारस्वती किन्नरी च सैरन्ध्री घोषका तथा

अन्वय- महती- महती वीणा, वैष्णवी- वैष्णवी वीणा, ब्राह्मी- ब्राह्मी वीणा, रौद्री- रौद्री वीणा, कूर्मी च- कुर्मी, रावणी- रवाणी वीणा, सरस्वती- सारस्वती वीणा, किन्नरी-किन्नरी वीणा, च सैरन्ध्री- सैरन्ध्रीवीणा, घोषका -घोषका वीणा तथा-और

भावार्थ- वीणाओं के दस नाम महती, वैष्णवी, ब्राह्मी, रौद्री, कूर्मी च रावणी, सारस्वती, किन्नरी च सैरन्ध्री तथा घोषका नारद द्वारा दिये गए है

दशवीणाः समाख्यातास्तत्रीविन्यासभेदतः।

षट्त्रिंशदङ्गुली वीणा विस्तारः षट्भिरगुलैः ॥ 8॥

पदच्छेदः- दशवीणाः समाख्याता स्तत्रीविन्यास भेदतः षट्त्रिंशद ङ्गुली वीणा विस्तारः षट्भिरगुलैः

अन्वय- दशवीणाः-दस वीणा, समाख्याता-काही गयी है, तंत्रीविन्यास-तंत्रीयों को सजाना सँवारना, भेदत- भेद से, षट्त्रिंशद-छत्तीस, ङ्गुली-अंगुली, वीणा विस्तार- वीणा का विस्तार, षट्भिरगुलैः-छः अंगुल

भावार्थ- दस प्रकार की वीणाओं का तंत्री विन्यास (तंत्रियों की सजावट व सवारने की विधि) के भेद से वीणा की माप का विस्तार छः अंगुल से सैंतीस अंगुल तक का होना चाहिए।

अथ वाद्यविशेषः

मृदङ्गो ददुर्श्चैव पणवस्त्वङ्गसंज्ञिकः ।

झर्झरी पटहादीनि शम्भो मुखरिकास्तथा ॥9॥

पदच्छेदः -मृदअङ्गो, ददुर्, श्रैव, च्, पणव, स्त्व, अङ्ग, संज्ञिकः, झर्झरी, पटहा, दीनि, शम्भो, मुखरिका,स्तथा

अनव्यय-मृदङ्गो- एक विशेष प्रकार की मिट्टी से निर्मित आकार वाला, दर्दुर-प्राचीन काल का एक वाद्य जिससे गरजने की सी ध्वनि उत्त्पन होती हो, श्रैंव-ब्रह्मर्षि नारद जी के द्वारा देवाधिदेव के समक्ष क्षमा प्रार्थना करते हुए, पणव-प्राचीन काल का एक वाद्य यंत्र जिसका वर्तमान रूपान्तरण जैसे छोटा नगाड़ा, छोटा ढोल अथवा ढोलकी ,स्त्वङ्गसंज्ञिकः -महर्षि अथवा ब्रह्मर्षि नारद जी के द्वारा देवाधिदेव के समक्ष छंदोबद्ध अथार्त पद्य,गुणधर्म के रुप में क्रमानुसार इसके अंगों के स्वरूप कथन का गुणागान करना तथा उसकी महत्ता का वर्णन किया, इसके सभी निर्मित अवयवों को ध्यान में रखना चाहिए। झर्झरी-एक वाद्य जिसकी ध्वनि भगवान शिव पर जलार्पण की जैसी ध्वनि हो,पटहादीनि-एक वाद्य जिस पर हाथों को घुमाते हुये पटक देनें की कलाविधि, शम्भो_मुखरिकास्तथा-शम्भो शब्द के उच्चारण में "भो" ही स्थित रहता है वैसा ही स्वर उत्त्पन करनें वाले वाद्य जैसे शंख भेरी पणव मुरज ढक्का बाद धनित घंटा नाद आदि है ।

भावार्थ-ब्रह्मर्षि नारद जी के द्वारा देवाधिदेव के समक्ष क्षमा प्रार्थना करते हुए वाद्य यंत्रों का विवरण प्रस्तुत कर रहे हैं, जो इस प्रकार है, एक विशेष प्रकार की मिट्टी से निर्मित आकार वाला वाद्य और जिससे गरजने की सी ध्वनि उत्त्पन होती है, प्राचीन काल का ही एक वाद्य जिसमे शंख भेरी पणव

मुरज ढक्का बाद धनित घंटा नाद आदि तथा एक वाद्य जिसकी ध्वनि भगवान शिव पर जलार्पण की ध्वनि जैसी हो साथ ही एक वाद्य जिस पर हाथों को घुमाते हुये पटक अथवा प्रहार देनें पर अथवा करने पर "भो" जैसा स्वर उद्घोषित होता है, नारद जी के द्वारा देवाधिदेव के समक्ष छंदोबद्ध अथार्त पद्य,गुणधर्म के रुप में क्रमानुसार इसके अंगों के स्वरूप कथन का गुणागान करना तथा उसकी महत्ता का वर्णन किया, इसके सभी निर्मित अवयवों को ध्यान में रखना चाहिए।

शृङ्गं च कहला चेति सुषिरादिप्रकीर्तिताः।

हरीतक्याकृतिस्त्वन्या एवमाद्यास्ततोर्ध्वगः ॥10॥

पदच्छेदः –शृङ्गं च केहला चेति सुषिरादि प्रकीर्तिताः हरीतक्याकृति स्त्वन्या एव माद्या स्ततो र्ध्वगः

अनव्यय-शृङ्गं-वट,आँवला अथवा पाकड़ वृक्ष की लकडी, च-और, कहला-प्राचीन काल का वाद्य जो बड़े ढोल की सी आकृति जैसा, चेति-आधुनिक, सुषिरादि-संगीत में वह वाद्ययंत्र जो वायु के जोर से बजाये जाते हों जो छेदों या सूराखों से भरा हुआ हो तथा जो फूँककर बजाया जाने वाला वाद्य, प्रकीर्तिताः -जिसकी ख्याति सभी ओर बिखरती थी, हरीतक्याकृति-हरड़ की आकृति वाला (फल एक से तीन इंच तक लंबे और अण्डाकार होते हैं, जिसके पृष्ठ भाग पर पाँच रेखाएँ होती हैं। कच्चे फल हरे तथा पकने पर पीले धूमिल होते हैं। प्रत्येक फल में एक बीज होता है। अप्रैल-मई में नए पल्लव आते हैं। फल शीतकाल में लगते हैं। पके फलों का संग्रह जनवरी से अप्रैल के मध्य किया जाता है।), स्त्वन्या-विद्वान अर्थात जो सभी विधाओं के ज्ञान से युक्त हो, का मत है, एव- ही अथवा भी, माद्या-किसी चर राशि के परिमाण (Magnitude) को व्यक्त करने का एक प्रकार का सांख्यिकीय तरीका है, स्ततो-किसी पदार्थ के सार भाग का विवरण प्रस्तुत करना, र्ध्वगः -"ध" स्वरों की वर्ग की श्रेणी

भावार्थ- ब्रह्मर्षि नारद जी "ध" स्वरों की वर्ग की श्रेणी के दो वाद्य यंत्रों का विवरण विधिवत रूप से वर्णित कर रहे हैं जो क्रमानुसार है। वट,आँवला अथवा पाकड़ वृक्ष की लकडी से प्राचीन काल का वाद्य जो बड़े ढोल की सी आकृति, जिसकी हरड़ की आकृति वाला (हरड़ फल एक से तीन इंच तक लंबे और अण्डाकार होते हैं, जिसके पृष्ठ भाग पर पाँच रेखाएँ होती हैं। इसका सांख्यिकीय तरीका किसी चर राशि के परिमाण (Magnitude) को व्यक्त करने का एक प्रकार है, इसी क्रम मे कुछ वाद्ययंत्र जो वायु के जोर से बजाये जाते हों जो छेदों या सूराखों से भरा हुआ होता है तथा जो फूँककर बजाया जाने वाला वाद्य है।

आलिङ्गश्चैव गोपुच्छो मध्यदक्षिणवामगः ।

ढक्का डमरुगा मन्द्रा मडुझर्झरडिण्डिमाः॥11॥

पदच्छेदः आलिङ्ग श्चैव गो पुच्छो मध्य दक्षिण वामगः ,ढक्का डमरु गा मन्द्रा मडु झर्झर डिण्डिमाः

अनव्यय-आलिङ्ग-हृदय से लगाने योग्य, श्रैव-शिवलिंग के आकार का सा, च-और, गोपुच्छो-गाय की पूँछ के समान, मध्यदक्षिण-मध्य व दक्षिण-दक्षिण या दाहिने का उलटा, वामगः -बायी ओर, ढक्का-एक प्रकार का वाद्य जिससे उतन्न ध्वनि बडे ढोल अथवा नगाड़े की सी होती है, डमरुगा-एक छोटा संगीत वाद्य यन्त्र होता है (पद्धति ने वाद्ययंत्रों को चार मुख्य समूहों में वर्गीकृत किया है जिसमें यह एक घन वाद्य है), मन्द्रा-संगीत में स्वरों के तीन भेदों में से एक । इस जाति के स्वर मध्य से अवरोहित होते हैं । इसे उदारा वा उतार भी कहते हैं, मडु-प्राचीन काल में दक्षिण भारत का वाद्ययंत्र, झर्झर-हुडुक नाम का लकड़ी का वाद्य जिसपर चमड़ा मढ़ा होता है, डिण्डिमाः -प्राचीन काल का एक वाद्य जिसको वर्तमान मे डुगडुगी अथवा डुग्गी कहा जा सकता है। इसके ऊपर चमड़ा मढ़ा होता था, इसको डुगडुगिया भी कहा जा सकता है।

भावार्थ- ब्रह्मर्षि नारद जी हृदय से लगाने योग्य देवाधिदेव का स्मरण करते हुये आधुनिक वाद्ययंत्र मृदङ्ग की बनावट के आकार को विधिवत वर्णन कर रहे हैं, जो कि इस प्रकार था। गाय की पूँछ के समान, जिसका मध्य भाग बडे ढोल अथवा नगाड़े का सा होता है तथा क्रमशः बीच से दाहिना तथा दाहिने का उलटा भाग जो एक छोटा संगीत वाद्य यन्त्र हुडुक नाम का लकड़ी का वाद्य जिसपर चमड़ा मढ़ा होता है, जिसको वर्तमान मे डमरू जो महादेव जी का प्रिय है, तथा बायी ओर का उल्टा अर्थात दाहिना, जो प्राचीन काल का एक वाद्य जिसको वर्तमान मे डुगडुगी अथवा डुग्गी कहा जा सकता है। इसके ऊपर चमड़ा मढ़ा होता था, इसको डुगडुगिया भी कहा जा सकता है।

उडुत्रिविधगुञ्जा च कटकाकरणादयः।
ध्वनिश्च विविधा ज्ञेया नारदेन कृता मताः ॥13॥

पदच्छेदः-उडु, त्रिविध, गुञ्जा, च, कटका, करणा, दयः, ध्वनि, श्च, विविधा, ज्ञेया, नारदेन, कृता, मताः
अनव्यय-उडु-केवट के द्वारा, त्रिविध-तीन प्रकार से, गुञ्जा-अरहर के बराबर खूब लाल दाना, च-और, कटका-हाथ का ऊपरी ऊँचा उठा हुआ भाग, करणा-हाथों मे, दयः –देना, ध्वनिश्च-ध्वनि को जो, विविधा-बहुत प्रकार से अथवा अनेकानेक तरह का, ज्ञेया-ज्ञान का विषय जो एक से अनेक शब्दों के संयोग से निर्मित एक शब्द, नारदेनकृता -महर्षि नारद जी के द्वारा कहा गया, मताः –मत अथवा सहमति देना

भावार्थ-ब्रह्मर्षि नारद जी उपरोक्त क्रम में महादेव जी के समक्ष पुनः एक अन्य प्रकार के वाद्ययन्त्र का परिचय जैसे उसका स्वरूप तथा उससे उत्पन्न स्वरों की तथा बनावट का विवरण प्रस्तुत कर रहे हैं।तीन प्रकार से उत्पन्न स्वरों का गुञ्जायमान करनें वाले इस वाद्य को केवट के द्वारा बहुत प्रकार से अथवा अनेकानेक तरह के ध्वनि का विस्तार किया जाता है।अब परिचय स्वरूप जिसका ऊपरी

भाग उठा हुआ और उसमें अरहर के बराबर खूब लाल दानें भरे हों, इसको हाथों में लेकर ध्वनि का विस्तार किया जाता हो महर्षि नारद जी का मत तथा सहमति है।

अथ स्वरादयः।

नादोपासनया देवा ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः।

भवन्त्युपासिता नूनं तस्मादेतत्तदात्मकम् ॥ 13॥

पदच्छेदः-नादोपासनया देवा ब्रह्म विष्णु महेश्वराः भवन्त्यु पासिता नूनं तस्मा देतत्तदात्मकम्

अन्वय- नादोपासनया-नाद की उपासना से, देवा- देव, ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः- ब्रह्म, विष्णु, महेश्वर भवन्त्युपासिता- उपसित होते है, नूनं- निश्चय ही, तस्मा-इससे, देतत्तदात्मकम्-यह समझना चाहिए

भावार्थ- यह समझने योग्य है की नाद की उपासना से निश्चय ही ब्रह्म, विष्णु, तथा महेश्वर देव प्रसन्न होते है।

आत्मा विवक्षमाणोऽयं मनः प्रेरयते मनः ।

देहस्था वहिमहती स प्रेरयति मारुतः ॥14॥

पदच्छेदः-आत्मा विवक्षमाणोऽयं मनः प्रेरयते मनः देहस्था वहिमहती स प्रेरयति मारुतः

अन्वय- आत्मा-आत्मा, विवक्षमाणोऽयं- विवक्षित यह, मनः- मन, प्रेरयते मनः- मन को प्रेरित करत है, देहस्था- देह मे स्थित, वहिमहती- अग्नि महान, स प्रेरयति- वीएच प्रेरित करती है, मारुतः- वायु को

भावार्थ- आत्मा मन को प्रेरित करती है, मन क्रियाग्नि व देहग्नि को प्रेरित करती है तथा क्रियाग्नि वायु को प्रेरित करती है।

इति ग्रन्थिस्थितः सोऽथ क्रमादूर्ध्वपदे चरेत् ।

नाभिहत्कण्ठमूर्धन्येष्यभिधारयते ध्वनिम् ॥15॥

पदच्छेदः- इति ग्रन्थिस्थितः सोऽथ क्रमादूर्ध्वपदे चरेत् नाभि हत्कण्ठ मूर्धन्येष्यभिधारयते ध्वनिम् ॥

अन्वय-- इति ग्रन्थिस्थितः-यह ग्रंथि मे स्थित, सोऽथ-यह, क्रमादूर्ध्वपदे- क्रम से ऊपर, चरेत्- आचरण करे, नाभिहत्त-नाभि हृदय, कण्ठ-कंठ, मूर्धन्येषु- मूर्धा मे, अभिधारयते-धारण की जाती है, ध्वनिम्-ध्वनि

भावार्थ- ग्रंथि मे स्थित यह ध्वनि क्रम से ऊपर की और चलते हुए पहले नाभि से हृदय, हृदय से कंठ, तथा कंठ से मूर्धा की ओर आचरण करती है।

नादोऽतिसूक्ष्मः सूक्ष्मश्च पुष्टोऽपुष्टश्च कृत्रिमः ।

इति पञ्चविधा धत्ते पञ्चस्थानस्थिताः क्रमात् ॥ 16 ॥

पदच्छेदः- नादो ऽतिसूक्ष्मः सूक्ष्म श्च पुष्टो ऽपुष्ट श्च कृत्रिमः इति पञ्चविधा धत्ते पञ्च स्थान स्थिताः क्रमात्

अन्वय- नादोऽतिसूक्ष्मः-नाद अति सूक्ष्म है, सूक्ष्मश्च- और सूक्ष्म, पुष्टोऽपुष्टश्च-पुष्ट व अपुष्ट, कृत्रिमः- कृत्रिम, इति पञ्चविधा-ऐसा पाँच प्रकार का, धत्ते-धारण किया जाता है, पञ्चस्थान-पाँच स्थान, स्थिताः क्रमात्-क्रम से स्थित

भावार्थ-यह नाद सूक्ष्म से भी सूक्ष्म अर्थात अतिसूक्ष्म , पुष्ट व अपुष्ट तथा कृत्रिम अर्थात तार ऐसे पाँच नाद क्रमश: पाँच स्थानों मे स्थित है।

अतिसूक्ष्मश्च सूक्ष्मश्च पुष्टोऽपुष्टस्तथैव च ।

तारश्चेति च विज्ञेयाः पञ्चधा देहजाः स्वराः ॥ 17॥

पदच्छेदः- अति सूक्ष्म श्च सूक्ष्म श्च पुष्टो ऽपुष्ट स्तथैव च तारश्चेति च विज्ञेयाः पञ्चधा देहजाः स्वरा:

अन्वय- अतिसूक्ष्मश्च-अति सूक्ष्म, सूक्ष्मश्च-सूक्ष्म, पुष्टोऽपुष्टस्तथैव च-पुष्ट व अपुष्ट, तारश्चेति-तार, च विज्ञेयाः- जानना चाहिए, पञ्चधा-पाँच प्रकार का, देहजाः-देह से युक्त, स्वराः- स्वर

भावार्थ- अतिसूक्ष्म, सूक्ष्म, पुष्ट व अपुष्ट, व तार यह पाँच प्रकार के नाद देह शरीर से उत्पन्न माने जाते है तथा इन्हे देह युक्त स्वर जाना जाता है।

नकारः प्राणमानन्दस्तकारमनलं विदुः ।

जातः प्राणाग्निसंयोगात्तेन नादोऽभिधीयते ॥18॥

पदच्छेदः- नकारः प्राणमानन्द स्तकार मनलं विदुः जातः प्राणा ग्नि संयोगा त्तेन नादोऽभिधीयते

अन्वय- नकारः- नकार, प्राणमानन्द- आनंद का प्राण, स्तकार -तकार अनलं-अग्नि, विदुः- माने, जातः-जन्म, प्राणाग्निसंयोगा- प्राण अग्नि के सहयोग से, त्तेन-उससे, नादोऽभिधीयते- नाद प्रारम्भ होता है।

भावार्थ- नाद शब्द का नकार प्राण व आनंद होता है तथा तकार शब्द अग्नि माना जाता है। अत: प्राण व अग्नि के संयोग से ही नाद प्रारम्भ होता है।

व्यवहारे त्वसौ त्रेधा हृदि मन्द्रोऽभिधीयते।

कण्ठे मध्यो मूर्ध्नि तारो द्विगुणश्चोत्तरोत्तरः ॥ 19 ॥

पदच्छेदः- व्यवहारे त्वसौ त्रेधा हृदि मन्द्रोऽभिधीयते कण्ठे मध्यो मूर्ध्नि तारो द्विगुणश्चोत्तरोत्तरः

अन्वय-व्यवहारे-व्यवहार मे, त्वसौ- तो यह, त्रेधा-तीन प्रकार, हृदि-हृदय में, मन्द्रोऽभिधीयते-मंदर माना जाता है, कण्ठे मध्यो-कंठ के मध्य मे, मूर्ध्नि-मूर्धा में, तारो- तार, द्विगुणश्चो-दो गुना, उत्तरोत्तरः- एक दूसरे से

भावार्थ- व्यवहार मे यह तीन प्रकार के नाद मंद्र, मध्य व तार माने जाते है जो मुख्यत: हृदय, कंठ, व ऊरधा से उच्चरित व उत्पन्न होते है जिनका क्रम क्रमश: दोगुनी गति मे होता जाता है।

सूक्ष्मस्वरो हीनसूक्ष्मस्तद्गातुः श्रुतिगोचरः।

तारः श्रुतिकठोरत्वात्याज्य एव न संशयः ॥20 ॥

पदच्छेदः- सूक्ष्मस्वरो हीनसूक्ष्म स्तद्गातुः श्रुति गोचरःतारः श्रुतिकठोरत्वा त्याज्य एव न संशयः

अन्वय- सूक्ष्मस्वरो- सूक्ष्मस्वरो, हीनसूक्ष्म-हीनसूक्ष्म, स्तद्गातुः- उसे गाने के लिए, श्रुतिगोचरः-श्रुति गोचर, तार:श्रुतिकठोरत्वात-तार श्रुति सुनने मे कठोर, त्याज्य-छोड़ देना चाहिए, एव न संशयः- संशय नहीं है।

भावार्थ- अति सूक्ष्म नाद को सुना नहीं जा सकता क्योकि यह देह से उत्पन्न बारह चक्रो मे से अनाहद चक्र से उत्पन्न होता है। तथा तार के स्वर को सुनने मे कठोरता का भास होता है। अत: यह सूक्ष्म हीन श्रुति से गोचर माना जाता है उसे ही सूनना चाहिए तथा अन्य को छोड़ देना चाहिए इसमे कोई संदेह नहीं है।

अन्यथा विंशतिर्भेदाः श्रवणाः श्रुतयो मताः ।

हृद्युदानादिसंयुक्ता नादा द्वाविंशतिर्मताः ॥21॥

पदच्छेदः- अन्यथा विंशतिर्भेदाः श्रवणाः श्रुतयो मताः हृदी उदानादिसंयुक्ता नादा द्वाविंशतिर्मताः

अन्वय- अन्यथा-अन्य, विंशतिर्भेदाः-बीस प्रकार के भेद, श्रवणाः-सुनने योग्य, श्रुतयो श्रुतियों से युक्त वेद, मताः-मत, हृदी-हृदय में, उदानादिसंयुक्ता-पाँच वायु मे से उदा नादी से युक्त, नादा- नाद , द्वाविंशतिर्मताः- बाईस प्रकार के मान जाते है।

भावार्थ- वेदों के अनुसार बीस प्रकार के नाद सुनने के योग्य माने जाते है, हृदय से उत्पन्न पाँचवायु आदि से युक्त बाईस प्रकार के नाद माने गए है।

अथ गायकलक्षणम् ।

वाङ्गाधुर्योच्यते ज्ञेयं धातुरित्यभिधीयते ।

वाचं गेयं च कुरुते यः स वाग्गेयकारकः ॥22॥

पदच्छेदः- वाङ्गाधुर्यो उच्यते ज्ञेयं धातु रित्यभिधीयते वाचं गेयं च कुरुते यः स वाग्गेय कारकः

अन्वय- वाङ्गाधुर्यो- साहित्य का जानकार, उच्यते- कहा जाता है, ज्ञेयं-गायन योग्य धातु- स्वर रचना का जानकार, रित्यभिधीयते-ऐसे नाम, वाचं- वाणी के द्वारा स्वर व शब्दो को बोलने वाला, गेयं च- गायन करने वाला, कुरुते यः-जो करता है, स वाग्गेयकारकः-वह वाग्गेयकार होता है।

भावार्थ- साहित्य को जानने वाला अर्थात धातु व मातु का जानकार जिसको स्वर ज्ञान हो जिसकी वाणी मधुर हो वह ही उत्तम वाग्गेयकार होता है।

शब्दानुशासनज्ञानमभिधानप्रवीणता ।

छन्दःप्रभेदवेदित्वमलङ्कारेषु कौशलम् ॥23॥

पदच्छेदः- शब्दानुशासनज्ञान अभिधानप्रवीणता छन्दःप्रभेदवेदित्व अलङ्कारेषु कौशलम्

अन्वय- शब्दानुशासनज्ञान-शब्दों के व्याकरण का ज्ञान, अभिधानप्रवीणता-प्राचीन ग्रन्थों का ज्ञान, छन्दःप्रभेदवेदित्व-सभी प्रकार से छंदों का ज्ञान, अलङ्कारेषु कौशलम्-साहित्य शास्त्रों मे वर्णित सभी अलंकारों का ज्ञान

भावार्थ- जिसको शब्दों के व्याकरण का ज्ञान हो, प्राचीन ग्रन्थों का ज्ञान रखता हो, सभी प्रकार से छंदों का ज्ञान व उनके प्रयोग को जानने वाला तथा साहित्य शास्त्रों मे वर्णित सभी अलंकारों का ज्ञान प्राप्त हो।

रसभाषापरिज्ञानं गीतं स्थितिविचिन्वति (?)।

अशेषभाषाविज्ञानं कलाशास्त्रेषु कौशलम् ॥24॥

पदच्छेदः- रसभाषापरिज्ञानं गीतं स्थितिविचिन्वति अशेषभाषाविज्ञानं कलाशास्त्रेषु कौशलम्

अन्वय- रसभाषापरिज्ञानं-रस भाव व भाषा का अच्छा ज्ञान, गीतं स्थितिविचिन्वति-विभिन्न देशों के रीति रिवाज का ज्ञान, अशेषभाषाविज्ञानं-देश की सभी भाषा का ज्ञान, कलाशास्त्रेषु कौशलम्-संगीत कला के सभी विधाओं शास्त्र का ज्ञान

भावार्थ- जिसको रस भाव व भाषा का अच्छा ज्ञान हो व शास्त्रों मे वर्णित श्रृंगारिक भावों का उत्तम ज्ञान हो, विभिन्न देशों के रीति रिवाज का ज्ञान प्राप्त हो, देश की सभी भाषा का ज्ञान हो तथा जो संगीत कला के सभी विधाओं के शास्त्र का ज्ञान रखता हो।

तूर्यत्रितयचातुर्य हृद्यशारीरशालिता।

लयतालकलाज्ञानं विवेकोऽनेककाकुषु ॥25॥

पदच्छेदः- तूर्यत्रितयचातुर्य हृद्यशारीरशालिता लयतालकलाज्ञानं विवेकोऽनेककाकुषु

अन्वय-तूर्यत्रितयचातुर्य-गीत वाद्य व नृत्य का सम्पूर्ण ज्ञान, हृद्यशारीरशालिता-अच्छे शरीर वाला, लयतालकलाज्ञानं- लय ताल और कला का अच्छा ज्ञान, विवेकोऽनेककाकुषु-विवेक के साथ काकु का ज्ञान रखने वाला

भावार्थ- गीत, वाद्य व नृत्य सभी विधाओं का उत्तम ज्ञान रखने वाला, अच्छे शरीर अर्थात विकार रहित शरीर वाला हो जिसको देख कर श्रोताओं के हृदय मे उत्तम विचार उत्पन्न हो, लय, ताल और कला का उत्तम ज्ञान रखने वाला तथा विवेक के साथ काकुके प्रयोग का ज्ञान रखने वाला ।

प्रभूतप्रतिभोत्थानं रम्यं सुभगगेयता।

देशीरागेष्वभिज्ञानं वाक्पटुत्वं समाजयः ॥26॥

पदच्छेदः- प्रभूतप्रतिभोत्थानं रम्यं सुभगगेयता देशीरागेष्वभिज्ञानं वाक्पटुत्वं समाजयः

अन्वय- प्रभूतप्रतिभोत्थानं- प्रखर बुद्धि वाला, रम्यं सुभगगेयता- सुख प्रदान करने वाला, देशीरागेष्वभिज्ञानं देशी राग का उत्तम ज्ञान, वाक्पटुत्वं समाजयः- बोलने मे निपूर्ण व सामंजस्य बनाए रखने वाला

भावार्थ-जो प्रखर बुद्धि वाला हो, जिसका भाव सुख प्रदान करने वाला हो, जिसको देशी राग का उत्तम ज्ञान प्राप्त हो तथा जो सभा मे अपनी वाक् पटुता (चतुरता के साथ व्याख्यान) व बोलने मे निपूर्ण व भाषा विचार से सामंजस्य बनाए रखने वाला हो।

रोषद्वेषपरित्यागी (गः १) साधुत्वमुचितज्ञता।
अनुद्धतोक्तिसंबद्धों नूनधातुविनिर्मकः ॥27॥

पदच्छेदः- रोषद्वेषपरित्यागी (गः १) साधुत्वमुचितज्ञता अनुद्धतोक्तिसंबद्धों नूनधातुविनिर्मकः

अन्वय- रोषद्वेषपरित्यागी-रोष व दोष रहित गायन, साधुत्वमुचितज्ञता-सरसता, मधुर स्वभाव, सामय व्यवहार, अनुद्धतोक्तिसंबद्धो-स्वतंत्र रचना करने का ज्ञाता, नूनधातुविनिर्मकः- नवीन रचना करने वाला

भावार्थ- रोष व दोष रहित गायन करने वाला गायक जिसको उचित व अनुचित का ज्ञान हो, जो सरसता, मधुर स्वभाव, साम्य व्यवहार करने वाला, को स्वतंत्र रचना करने का ज्ञान व शक्ति रखता हो तथा जो नवीन रचना करने का ज्ञाता हो।

परचित्तपरिज्ञानं प्रबन्धेषु प्रगल्भता ।
द्रुतगीतविनिर्माणं पदान्तरविदग्धता ॥28॥

पदच्छेदः- परचित्तपरिज्ञानं प्रबन्धेषु प्रगल्भता द्रुतगीतविनिर्माणं पदान्तरविदग्धता

अन्वय-परचित्तपरिज्ञानं-दूसरे के भाव को जानने वाला, प्रबन्धेषु प्रगल्भता-प्रबंधों का ज्ञान द्रुतगीतविनिर्माणं- नवीन रचनाओं का शीघ्र निर्माण, पदान्तरविदग्धता-भिन्न भिन्न गीतों की छाया की अनुकरण की छमता

भावार्थ- जो दूसरे के मन व भाव को जानने व समझने की शक्ति रखता हो, प्रबंधों का ज्ञान, नवीन कविताओं व रचनाओं का शीघ्र निर्माण करने वाला, भिन्न भिन्न गीतों की छाया व शैली के अनुकरण की छमता रखने वाला हो।

त्रिस्थानगमकप्रौढो विविधालप्सिनैपुणः (?)।
अवधानगुणैरेमिः परो वाग्गेयकारकः ॥29॥

पदच्छेदः- त्रिस्थानगमकप्रौढो विविधालप्सिनैपुणः अवधानगुणैरेमिः परो वाग्गेयकारकः

अन्वय- त्रिस्थानगमकप्रौढो- तीनों सप्तक मे गमक लेने वाला, विविधालप्सिनैपुणः-विविध आलप्ति मे निपूर्ण अवधानगुणैरेमिः-चित्त मे एकाग्रता परो वाग्गेयकारकः-उत्तम वाग्गेयकार

भावार्थ- जिसको तीनों सप्तक (मंद्र, मध्य,तार)मे गमक लेने का ज्ञान व अभ्यास हो , विविध आलप्ति रागलाप्ति, रूपका लाप्ति मे निपूर्ण हो ,तथा जिसके चित्त मे एकाग्रता हो वह एक उत्तम वाग्गेयकार कहला सकता है।

विदधानोऽधिकं चैवे मातृमन्दसुमध्यमः ।

धातृमातृपदप्रौढः प्रबन्धेष्वपि मध्यमः ॥30॥

पदच्छेदः विदधानोऽधिकं चैवे मातृमन्दसुमध्यमः धातृमातृ पदप्रौढः प्रबन्धेष्वपि मध्यमः

अन्वय- विदधानोऽधिकं- स्वर रचना एवं धातु मे प्रवीण हो, चैवे-और, मातृमन्दसुमध्यमः- मातु मे मंद बुद्धि हो, धातृमातृपदप्रौढ-जो धातु व मातु का ज्ञान रखता हो, प्रबन्धेष्वपि मध्यमः-प्रबंध मे कुशल न हो

भावार्थ- जो धातु व स्वर रचना मे प्रवीण हो और पद्य रचना मातु मे मन्दबुद्धि हो उस मध्यम श्रेणी का वाग्गेयकार कहलता है परंतु जो स्वर रचना व पद्य रचना का अच्छा ज्ञान रखने वाला हो परंतु प्रबंध गायन मे कुशल न हो वह भी मध्यम श्रेणी का वाग्गेयकार कहलता है।

रम्यमातुविनिर्माता अधमो मन्दधातुकृत् ।

वरो यस्तु' कविवर्णकविर्मध्यम उच्यते ॥31॥

पदच्छेदः- रम्यमातुविनिर्माता अधमो मन्दधातुकृत् वरो यस्तु' कविवर्णकविर्मध्यम उच्यते

अन्वय- रम्यमातुविनिर्माता- मातु का ज्ञान न हो, अधमो- अधम, मन्दधातुकृत् वरो यस्तु'- जसको धातु का मन्द ज्ञान हो , कविवर्णकवि- केवल शब्द का ज्ञान हो, र्मध्यम उच्यते- मध्यम कहा जाता है।

भावार्थ- जिसको केवल शब्द का ज्ञान हो किन्तु मातु व धातु अर्थात पद्य रचना व स्वर रचना का ज्ञान न हो व अधम श्रेणी का वाग्गेयकार कहलता है।

कूटकारोऽन्यकारस्तु माधुकारः प्रकीर्तितः ।

मार्ग देश्यं च यो वेत्ति स गन्धर्वोऽभिधीयते ॥32॥

पदच्छेदः-कूटकारोऽन्यकारस्तु माधुकारः प्रकीर्तितः मार्ग देश्यं च यो वेत्ति स गन्धर्वोऽभिधीयते

अन्वय- कूटकारो-कूटकार,अन्यकारस्तु-अन्यकार,माधुकारः-मधुकार, प्रकीर्तितः-कहा जाता है, मार्ग- मार्ग, देश्यं-देशी, च यो वेत्ति-जो जनता है, स गन्धर्वो- वह गंधर्व, अभिधीयते- माना जाता है।

भावार्थ- कूटकार,अन्यकार, माधुकार तथा मार्गी व देशी संगीत को जानने वाला गंधर्व माना जाता था।

यो वेत्ति केवलं मार्ग स्वरादिः स निगद्यते ।

हृद्यशब्दः सुशारीरो ग्रहमोक्षविचक्षणः ॥33॥

पदच्छेदः- यो वेत्ति केवलं मार्ग स्वरादिः स निगद्यते हृद्यशब्दः सुशारीरो ग्रहमोक्षविचक्षणः

अन्वय- यो वेत्ति केवलं मार्ग स्वरादिः- जिसको केवल मार्ग आदि स्वर का ज्ञान हो, स निगद्यते- उसे कहा जाता है, हृद्यशब्दः-जिसका स्वर शब्द मधुर हो, सुशारीरो- सुंदर शरीर व जिसकी वाणी मे स्वर की तासीर हो, ग्रहमोक्षविचक्षणः- जिसको ग्रह न्यास स्वर को जानने वाला हो।

भावार्थ- - जिसको केवल मार्ग आदि स्वर का ज्ञान हो, जिसका स्वर शब्द मधुर हो सुंदर शरीर व जिसकी वाणी मे स्वर की तासीर हो तथा जिसको ग्रह स्वर न्यास स्वरों का ज्ञान रखने वाला हो।

रागरागाङ्गभाषाङ्गक्रियाङ्गोपाङ्गकोविदः ।

प्रबन्धगाननिष्णातो विविधालसितत्त्ववित् ॥34॥

पदच्छेदः- रागरागाङ्गभाषाङ्गक्रियाङ्गोपाङ्गकोविदः प्रबन्धगाननिष्णातो विविधालसितत्त्ववित् ॥

अन्वय-रागरागाङ्ग-राग रागांग, भाषाङ्ग क्रियाङ्गोपाङ्ग भाषांग, क्रियांग, उपांग, कोविदः-इत्यादि का विधिवत ज्ञान रखता हो, प्रबन्धगाननिष्णातो- प्रबंध गान मे प्रवीण , विविधालसितत्त्ववित्- भिन्न भिन्न आलप्ति का ज्ञाता

भावार्थ- राग रागांग, भाषांग, क्रियांग, उपांग इत्यादि का विधिवत जानकार हो, प्रबंध गान मे प्रवीण हो, तथा जो भिन्न भिन्न आलप्तियों के प्रयोग का ज्ञान रखता हो।

सर्वस्थानादिगमकेष्वनायासलसद्गतिः ।

आयत्तकण्ठस्तालज्ञः सावधानो जितश्रमः ॥35॥

पदच्छेदः- सर्वस्थानादिगमकेष्वनायासलसद्गतिः आयत्तकण्ठस्तालज्ञः सावधानो जितश्रमः

अन्वय-सर्वस्थानादिगमकेष्वनायासलसद्गतिः-जो सभी स्तरों मे गमक सहजता से ले सकता हो, आयत्तकण्ठ-खुला हुआ कंठ, तालज्ञः- ताल का ज्ञान रखने वाला , सावधानो- सावधानी पूर्वक गायन करने वाला ,जितश्रमः- श्रम को जीतने वाला

भावार्थ- जो सभी स्थानों मे गमक सहजता से ले सकता हो तथा तीनों सप्तक (मंद्र, मध्य,तार)मे गमक के प्रयोग मे दक्ष हो, जिसका खुला हुआ गला (कंठ) हो, जो ताल का ज्ञान रखने वाला हो, जो सावधानी पूर्वक व एकाग्रचित्त हो कर गायन करने वाला हो तथा को श्रम को जीतने वाला हो अर्थात जिसके गायन मे अधिक परिश्रम का आभास न हो।

शुद्धस्थानलयाभिज्ञः सर्वकाकुविशेषवित् ।

अपारस्थायिसञ्चारः सर्वदोषविवर्जितः ॥36॥

पदच्छेदः-शुद्धस्थानलयाभिज्ञः सर्वकाकुविशेषवित् अपारस्थायिसञ्चारः सर्वदोषविवर्जितः

अन्वय- शुद्धस्थानलयाभिज्ञः- शुद्ध छायालग और संकीर्ण रागो को जानने वाला, सर्वकाकुविशेषवित्- संगीत शास्त्र मे वर्णित छ: प्रकार के काकु का ज्ञान रखने वाला, अपारस्थायिसञ्चारः-असंख्य स्थाय का ज्ञान रखने वाला, सर्वदोषविवर्जितः-जो सब प्रकार के दोषों से रहित हो।

भावार्थ- जिसको शुद्ध, छायालग और संकीर्ण रागो के भेद का ज्ञान हो तथा स्वरों के सिद्धांतो के प्रयोग मे दक्ष हो, संगीत शास्त्र मे वर्णित सभी छ: प्रकार के काकु के प्रयोग का ज्ञान रखने वाला हो, जो राग के गायन मे असंख्य स्थाय का ज्ञान रखने वाला हो तथा जो सब प्रकार के दोषों से रहित जिसमे कोई दोष ना हो।

क्रियापरोचितालापः सुस्वरों धारणान्वितः ।

स्फूर्जनिश्चजनो हारीरहकृद्वचनोदरः (?) ॥37॥

पदच्छेदः- क्रियापरोचितालापः सुस्वरों धारणान्वितः स्फूर्जनिश्चजनो हारीरहकृद्वचनोदरः

अन्वय-क्रियापरोचितालापः-क्रिया के अनुसार चित्त को एकाग्र करते हुए आलाप करने वाला, सुस्वरों- अच्छा सुघड़ सुंदर दिखने वाला, धारणान्वितः-जो धारणावान हो, स्फूर्जनिश्चजनो-गंभीर आवाज मे गायन करने वाला, हारीरहकृद्वचनोदरः-श्रोताओं के मन को मोह लेने वाला।

भावार्थ- जो गायक क्रिया के अनुसार चित्त को एकाग्र करते हुए आलाप करने वाला हो, जो अच्छा सुघड़ सुंदर दिखने वाला हो, जो धारणावान हो, जो गंभीर आवाज मे गायन करने वाला तथा अपने गायन के द्वारा श्रोताओं का मन मोह लेने वाला हो।

सुसम्प्रदायो गीतज्ञैर्गीयते गायनाग्रणीः

इत्युत्तमस्तु विज्ञेयो गीतज्ञः प्रतिपादितः ॥38॥

पदच्छेदः- सुसम्प्रदायो गीतज्ञैर्गीयते गायनाग्रणीः इत्युत्तमस्तु विज्ञेयो गीतज्ञः प्रतिपादितः

अन्वय- सुसम्प्रदायो-उच्च श्रेणी की गुरु परंपरा, गीतज्ञैर्गीयते- गीत का ज्ञान रखने वाला, गायनाग्रणीः-गायन मे आगे रहने वाला हो, इत्युत्तमस्तु-उत्तम हो, विज्ञेयो- जानना चाहिये, गीतज्ञः- गीत का जानकार, प्रतिपादितः-प्रतिपादन करने वाला।

भावार्थ- उच्च श्रेणी की गायन परंपरा से उत्तम शिक्षा प्राप्त करने वाला तथा जो गायन मे सदैव आगे रहने वाला हो तथा जो सदैव ही अपने संप्रदाय व घराने का प्रतिपादन करने वाला हो।

गुणैः कतिपयैींनो निर्दोषो मध्यमोत्तमः (मतः ?)।

महामाहेश्वरेणोक्तः सदोषो गायकाधमः ॥39॥

पदच्छेदः-गुणैः कतिपयैींनो निर्दोषो मध्यमोत्तमः (मतः ?)महामाहेश्वरेणोक्तः सदोषो गायकाधमः

अन्वय-गुणैः-गुणो से, कतिपयै-कुछ, हीनो-हीन, निर्दोषो-निर्दोष, मध्यमोत्तमः- मध्यम उत्तम, महामाहेश्वरेण-महा महेश्वर के द्वारा, उक्तः- कहा गया है, सदोषो- दोषो से युक्त, गायकाधमः-गायक अधम होता है।

भावार्थ- जो कुछ गुणो से हीन हो, वह निर्दोष मध्यमोत्तम गायक कहा जाता है, तथा महा महेश्वर के द्वारा ऐसा कहा गया है की दोषो से युक्त गायक तो अधम ही होता है।

शिक्षाकारोऽनुकारश्च रसिको रञ्जकस्तथा।

भावकश्चेति विज्ञेया गायकाः पञ्चधा जगुः (?) ॥40॥

पदच्छेदः-शिक्षाकारोऽनुकारश्च रसिको रञ्जकस्तथा भावकश्चेति विज्ञेया गायकाः पञ्चधा जगुः

अन्वय-शिक्षाकारोशिक्षाकार, अनुकारश्च-अनुकार, रसिको-रसिक, रञ्जकस्तथा- रंजक्क, भावकश्चेति-भावक, विज्ञेया-जानना चाहिए, गायकाः-गायक, पञ्चधा-पाँच प्रकार का, जगुः-जाने

भावार्थ-गायक पाँच प्रकार के होते है पहला जो शिक्षाकार होता है दूसरा जो अनुकार (जो देखा-देखी कार्य करने वाला हो) तीसरा जो संगीत रसिक हो, चौथा जो रञ्ज्क हो (प्रसन्न और आनंद मे रहने वाला) पाँचवाँ जो भावक(भावो को समझने वाला) हो।

व्यक्तं पूर्ण प्रसन्नं च सुकुमारमलङ्कृतम् ।

समं सुरक्तं श्लक्ष्णं च निकृष्टं मधुरं तथा ॥41॥

पदच्छेदः-व्यक्तं पूर्ण प्रसन्नं च सुकुमारमलङ्कृतम् समं सुरक्तं श्लक्ष्णं च निकृष्टं मधुरं तथा

अन्वय-व्यक्तं-व्यक्त, पूर्णम् -पूर्ण, प्रसन्नं च-प्रसन्न, सुकुमारम- सुकुमार, अलङ्कृतम्-अलंकृत, समं-सम सुरक्तं-सुरक्त, श्लक्ष्णं-श्लक्षण, च- और, निकृष्टं-निकृष्ट, मधुरं तथा- तथा मधुर

भावार्थ-व्यक्त पूर्ण गीत प्रसन्नता, सुकुमार, अलंकृत, सम, सुरक्त, श्लक्षण, मधुर तथा निकृष्ट होता है।

दिश्यते स्युर्गुणानं ते (?) तत्र वक्ता (व्यक्तः) स्फुटस्वर।

प्रकृतिः श्रुतयश्चोक्तं छन्दोरागपदैः स्वरै ॥42॥

पदच्छेदः-दिश्यते स्युर्गुणानं ते तत्र वक्ता (व्यक्तः) स्फुटस्वरः प्रकृतिः श्रुतय श्चोक्तं छन्दो राग पदैः स्वरै

अन्वय-दिश्यते-दिशा से युक्त, स्युर्गुणानं-गुण से युक्त, ते तत्र- वे वहाँ, वक्ता (व्यक्तः)-व्यक्त, स्फुटस्वरः- स्फुटस्वर, प्रकृतिः-प्रकृति, श्रुतयश्चोक्तं-श्रुति से युक्त, छन्दोरागपदैः-छंद राग व पद से युक्त, स्वरै-स्वर

भावार्थ- वे जो स्वर प्रकृति की दिशाओं से युक्त, गुण से युक्त, श्रुति से युक्त छंद राग व पद से युक्त होते है स्फुटस्वर कहलाते है।

सुसम्पूर्ण च पूर्णाङ्गं प्रसन्नं प्रकटार्थकम् ।

सुकुमारं कण्ठभवं त्रिस्थानोक्तमलङ्कृतम् ॥43॥

पदच्छेदः-सुसम्पूर्ण च पूर्णाङ्गं प्रसन्नं प्रकटार्थकम् सुकुमारं कण्ठभवं त्रिस्थानोक्तम अलङ्कृतम्

अन्वय-सुसम्पूर्ण च- सम्पूर्ण, पूर्णाङ्गं- पूर्ण अंग, प्रसन्नं-प्रसन्न, प्रकटार्थकम्-अर्थ प्रकट करने वाला, सुकुमारं-सुकुमार, कण्ठभवं- कंठ से उत्पन्न, त्रिस्थान-तीन स्थानों, उक्तम-कहा गया है, अलङ्कृतम्-अलंकृत

भावार्थ- सम्पूर्ण, पूर्णअंग, प्रसन्न, सुकुमार कंठ से तीनों सप्तक के स्थानों से उत्पन्न अलंकृत अर्थ प्रकट करने वाला है।

स्वरवर्णलयस्थानं स्वय(सम ?)मित्युच्यते बुधैः।

सुरक्तं वल्लकीवंशकण्ठोत्थान्येकतागुणम् (?) ॥44॥

पदच्छेदः-स्वरवर्णलयस्थानं स्वय(सम) मित्युच्यते बुधैः सुरक्तं वल्लकी वंशकण्ठो उत्थान्येकता गुणम्

अन्वय- स्वरवर्णलयस्थानं-स्वर वर्ण व लय स्थान, स्वय(सम)-समान (सम), इति उच्यते-ऐसा कहा जाता है, बुधैः-विद्वानों के द्वारा, सुरक्तं-सुरक्त,वल्लकी-वीणा, वंशकण्ठो-वंशी रूपी कंठ, उत्थान्येकता-उत्थान एकता, गुणम्- गुण

भावार्थ- सुरक्त वल्लकी अर्थात वीणा तथा वंशी रूपी कंठ उत्थान एकता के गुणो से युक्त स्वर वर्ण व लय स्थान को विद्वानों द्वारा सम कहा गया है।

नीचोचधृतिमध्यादौ श्लक्ष्णता लक्ष्णउ(मु)च्यते ।

उच्चैरुचारणादुक्तं निकृष्टं भरतादिभिः ॥45॥

पदच्छेदः-नीच उच्च धृति मध्यादौ श्लक्ष्णता लक्ष्णम् उच्यते उच्चै उरुचारणा दुक्तं निकृष्टं भरतादिभिः

अन्वय- नीचोच्च-नीच उच्च, धृति-धारण, मध्यादौ-मध्य व आदि मे, श्लक्ष्णता लक्षण सहित, लक्ष्णम्-लक्षण, उच्यते-कहा जाता है, उच्चै-ऊंचे, उरुचारणा-उच्चारण,दुक्तं-कहा गया, निकृष्टं-अधम या नीच, भरतादिभिः-भरत आदि के द्वारा

भावार्थ- नीच ऊच से धारण मध्य आदि का लक्षण सहित उच्चारण द्वारा गया हुआ गीत भरत आदि मुनियों द्वारा अधम कहा गया है।

मधुरं धुर्यलावण्यं पूर्ण जनमनोहरम्।

दृष्टं लोके न शास्त्रेण श्रुतिकालविरोधि च ॥46॥

पदच्छेदः-मधुरं धुर्यलावण्यं पूर्णम् जनमनोहरम् दृष्टं लोके न शास्त्रेण श्रुति कालविरोधि च

अन्वय-मधुरं-मधुरता, धुर्य-उत्तरदायित्व सँभालनेवाला, लावण्यं- सलोनापन, पूर्णम्-पूर्ण, जनमनोहरम्-जन को मनोहर लगने वाला, दृष्टं-दिखता है, लोके-संसार मे, न शास्त्रेण-शास्त्र से नहीं, श्रुतिकालविरोधि च- श्रुति व काल का विरोधी

भावार्थ-मधुरता के साथ उत्तरदायित्व सँभालनेवाला सलोनापन से पूर्ण व जन को मनोहर लगने वाला संसार मे श्रुति व काल का विरोध शास्त्र से नहीं दिखता है

द्येनैरुक्तं (?) कलाबाह्यं गतश्रममधोदकम् ।

ग्राम्यं संदिग्धमित्येवं दशधानी तु दुष्टता ॥47॥

पदच्छेदः-द्येनैरुक्तं कलाबाह्यं गतश्रममधोदकम् ग्राम्यं संदिग्ध मित्येवं दशधानी तु दुष्टता

अन्वय-द्येनैरुक्तं-द्येनै द्वारा कहा गया, कलाबाह्यं-कला से बाहर, गतश्रममधोदकम्-श्रम के पश्चात थकान, ग्राम्यं- ग्राम, संदिग्ध- संदेहयुक्त, मित्येवं-यह, दशधानी तु- दश प्रकार की, दुष्टता- दुर्जन होने की अवस्था

भावार्थ- द्येनै द्वारा कहा गया है, की कला से बाहर मेहनत के पश्चात अधोमुखी ही जाना यह दश दुर्जन होने की अवस्थाये है।

इति गीतदोषाः।

एवं सङ्गीतशास्त्रज्ञैः कथिता लोकविश्रुताः ।

षड्ज ऋषभगान्धारौ मध्यमः पञ्चमस्तथा ॥48॥

पदच्छेदः- एवं सङ्गीत शास्त्रज्ञैः कथिता लोकविश्रुताः षड्ज ऋषभ गान्धारौ मध्यमः पञ्चम स्तथा

अन्वय-एवं-इस प्रकार, सङ्गीतशास्त्रज्ञैः- संगीत शास्त्र के जानकार, कथिता- कहा गया है, लोकविश्रुताः लोको मे सुना गया है, षड्ज ऋषभ- षडज और ऋषभ, गान्धारौ-गांधार, मध्यमः-मध्यम, पञ्चमस्तथा-और पंचम

भावार्थ-इस प्रकार संगीत के जानकारों के द्वारा षडज ऋषभ गांधार मध्यमव पंचम स्वरों से युक्त गीत का वर्णन किया गया है जो लोगो द्वारा सुना जाता है।

धैवतश्च निषादश्च स्वराः सप्त प्रकीर्तिताः।

षड्जादिस्वरसंमिश्रं गानं च परिकीर्तितम् ॥49॥

पदच्छेदः-धैवतश्च निषादश्च स्वरा: सप्त प्रकीर्तिताः षड्जादि स्वरसंमिश्रं गानं च परिकीर्तितम्

अन्वय-धैवतश्च-धैवत, निषादश्च- निषाद, स्वरा:-स्वर, सप्त- सात, प्रकीर्तिताः-कहे गए है, षड्जादि- षडज आदि स्वर, स्वरसंमिश्रं-स्वर से युक्त, गानं च परिकीर्तितम्-गान कहा गया है।

भावार्थ-धैवत व निषाद आदि को मिला कर सात प्रकार के स्वर माने जाते है तथा षडज आदि समिश्रित को गान कहा जाता है।

आलापा द्विविधा ज्ञेयाः स्वरसंयोजने तथा ।
रागालप्तिरूपलप्ती द्वयं च परिकीर्तितम् ॥50॥

पदच्छेदः- आलापा द्विविधा ज्ञेयाः स्वरसंयोजने तथा रागालप्ति रूपलप्ती द्वयं च परिकीर्तितम्

अन्वय-आलापा-आलाप, द्विविधा-दो प्रकार का, ज्ञेयाः-जानना चाहिए, स्वरसंयोजने तथा- स्वर संयोजन मे, रागालप्ति- रागालप्ति, रूपकालप्ति- रूपकालप्ति, द्वयं-दोनों, च परिकीर्तितम्-कह गए है।

भावार्थ- स्वरों के संयोजन होने के कारण आलाप के दो प्रकार रागालप्ति और रूपकालप्ति माने गए है।

रागालप्तिस्तननादि रूपको गीतमुच्यते ।
स्वरे रागाः प्रगीयन्ते शुद्धसालङ्गसंज्ञिकम् ॥51॥

पदच्छेदः-रागालप्ति स्तननादि रूपको गीतमुच्यते स्वरे रागाः प्रगीयन्ते शुद्ध सालङ्ग संज्ञिकम्

अन्वय-रागालप्ति- रागालप्ति, स्तननादि- स्तननादि, रूपको-रूपक, गीतमुच्यते- गीत कहे जाते है, स्वरे-स्वर मे, रागाः-राग, प्रगीयन्ते-गाए जाते है, शुद्धसालङ्ग-शुद्ध सालङ्ग, संज्ञिकम्- शुद्ध सालङ्ग

भावार्थ- रागालप्ति मे स्तननादि को रूपकमे गीत कहा जाता है। स्वरों मे गाए गये गीतों को शुद्ध सालङ्ग की संज्ञा से युक्त माना जाता है।

यथाद्युपक्रमेणैव रागः शुद्ध उदाहृतः।
उपक्रम्य यथा रागो मेलनं सममिश्रकम् ॥52॥

पदच्छेदः-यथा अद्य उपक्रमेणैव रागः शुद्ध उदाहृतः उपक्रम्य यथा रागो मेलनं सममिश्रकम्

अन्वय-यथा-जैसे, अद्य-आज, उपक्रमेणैव-उपक्रम से, रागः-राग, शुद्ध-शुद्ध, उदाहृतः-कहा गया है, उपक्रम्य-उपक्रम, यथा रागो-जैसा राग, मेलनं-मेल, सममिश्रकम्-मिश्रित

भावार्थ- इस प्रकार के उपक्रम से गाए गए राग को शुद्ध कहा जाता है,तथा रागों का मेल होने पर उसे मिश्रित राग कह जाता है।

पुनस्तन्मार्गगमकं रागरङ्गः प्रकीर्तितः ।

सङ्कीर्णरागमिश्राणां रागः सङ्कीर्ण उच्यते ॥53॥

पदच्छेदः- पुनस्तन्मार्गगमकं रागरङ्गः प्रकीर्तितः सङ्कीर्ण राग मिश्राणां रागः सङ्कीर्ण उच्यते

अन्वय-पुनस्तन्मार्गगमकं-स्वर की पुन: संगति, रागरङ्गः-रागांग, प्रकीर्तितः-कहा जाता है, सङ्कीर्णराग- संकीर्ण राग, मिश्राणां रागः- मिश्रराग, सङ्कीर्ण-संकीर्ण, उच्यते- कहा जाता है।

भावार्थ- स्वर की पुन: संगति के साथ जब शुद्ध रूप से राग को गया जाता है तो वह रागांग कहा जाता है (रागांग का अर्थ है राग का अंग अर्थात राग में प्रयुक्त ऐसी विशेष स्वरों की संगति जिनके द्वारा राग को स्पष्ट रूप से पहचाना जा सकता है, जब रागों की वही स्वरावली अन्य रागों में प्रयुक्त होती हुई दिखायी देती है तो उसे ही उस राग का रागांग कहा जाता है।) तथा मिश्र राग को संकीर्ण राग भी कहा जाता है।

षाडवौडवसंपूर्णरागाः स्युस्त्रिविधास्तथा ।

एकस्वरविहीनस्तु षाडवः परिकीर्तितः ॥54॥

पदच्छेदः- षाडवौ औडव संपूर्ण रागाः स्युस्त्रिविधास्तथा एक स्वर विहीनस्तु षाडवः परिकीर्तितः

अन्वय- षाडवौ-षाडव, औडव-औडव, संपूर्ण रागाः-सम्पूर्ण राग, स्युस्त्रिविधास्तथा-तीन प्रकार है, एकस्वरविहीनस्तु- एक स्वर से विहीन, षाडवः-षाडव, परिकीर्तितः-कहा जाता है।

भावार्थ- षाडव, औडव, सम्पूर्ण राग की तीन प्रकार होते है तथा सम्पूर्ण अर्थात सात स्वर से एक स्वर हीन षाडव जाति राग कहलाता है।

पञ्चवरसमायुक्त औडवः परिकीर्तितः ।

सप्तस्वरसमायुक्तः सम्पूर्ण इति कथ्यते ॥55॥

पदच्छेदः- पञ्चस्वर समायुक्त औडवः परिकीर्तितः सप्तस्वरसमायुक्तः सम्पूर्ण इति कथ्यते

अन्वय- पञ्चस्वर-पाँच स्वर, समायुक्त-से युक्त, औडवः-औडव, परिकीर्तितः-कहा जाता है, सप्तस्वर-सात स्वर, समायुक्तः- से युक्त, सम्पूर्ण- सम्पूर्ण , इति-ऐसा, कथ्यते- कहा जाता है।

भावार्थ-पाँच स्वरों से युक्त राग को औडव कहा जाता है तथा सात स्वर से युक्त राग को सम्पूर्ण कहा जाता है।

एवं विवक्ष्यामि समस्तरागान्

गायेत धीमानधिकप्रयत्नः ।

चित्रेण वाकं (?) रभसा खरेण

द्वयेन वा दोषविवर्जितः स्यात् ॥56॥

पदच्छेदः-एवं विवक्ष्यामि समस्तरागान् गायेत धीमानधिकप्रयत्नः चित्रेण वाकं रभसा स्वरेण द्वयेन वा दोषविवर्जितः स्यात्

अन्वय-एवं-इस प्रकार,विवक्ष्यामि-बता रहा हूँ, समस्तरागान्-समस्त रागों को, गायेत-गाए, धीमानधिकप्रयत्नः- बुद्धिमान अधिक प्रयत्नशील, चित्रेण-चित्र से, वाकं-वाणी को, रभसा-प्रबल, स्वरेण-स्वर से, द्वयेनवा- दोनों से, दोषविवर्जितः- दोष मुक्त, स्यात्- हो

भावार्थ-देवर्षि नारद जी द्वारा इस श्लोक मे बताया गया है की समस्त रागों को बुद्धिमान अधिक प्रयत्नशील गायक को अपनी वाणी के प्रबल भाव से चित्र व स्वर के माध्यम से दोषरहित गीत का गायन करना चाहिए।

षाडवौडवसम्पूर्ण रागा द्वात्रिंशसंमिताः ।

अनन्ताः सन्ति सन्दर्भा नाना देश्यास्तथैव च ॥57॥

पदच्छेदः- षाडवौ औडव सम्पूर्ण रागा द्वात्रिंशसंमिताः अनन्ताः सन्ति सन्दर्भा नाना देश्या स्तथैव च

अन्वय- षाडवौ- षाडव, औडव- औडव, सम्पूर्णरागा- सम्पूर्ण राग, द्वात्रिंशत्-बत्तीस, संमिताः-सम्मत ,अनन्ताः- अन्नत, सन्ति- हैं, सन्दर्भा-संदर्भ, नाना-अनेक प्रकार, देश्यास्तथैव च-अलग अलग स्थान

भावार्थ- षाडव, औडव तथा सम्पूर्ण राग बत्तीस प्रकार के माने जाते है जिनके अलग अलग स्थान पर अनेक प्रकार के संदर्भ है।

मन्द्रमध्यमतारादिस्स्वरैर्गायेत गायकः ।

पूर्णाः पञ्चशता (?) रागाः षाडवा द्विशतास्तथा ॥58॥

पदच्छेदः- मन्द्र मध्यम तारादि स्वरै र्गायेत गायकः पूर्णाः पञ्चशता (?) रागाः षाडवा द्विशतास्तथा

अन्वय- मन्द्र-मंद्र सप्तक, मध्यम-मध्य सप्तक, तारादि-तार सप्तक, स्स्वरै-स्वर से,र्गायेत-गाना चाहिए, गायकः- गायक, पूर्णाः-पूर्ण, पञ्चशता-पाँच सौ, रागाः-राग, षाडवा- षडाव, द्विशतास्तथा- दो सौ

भावार्थ- मंद्र सप्तक, मध्य सप्तक, तार सप्तक मे गीत को गायक द्वारा गाना चाहिए जो पूर्ण रूप से पाँच सौ से भी अधिक प्रकार के होते है। षाडव राग के दो सौ से भी अधिक प्रकार माने गए है।

औडवाः शतसङ्ख्याश्च तत ऊर्ध्वं यथाक्रमम् ।

एवं विज्ञाय भगवान्नारदो मुनिरब्रवीत् ॥59॥

पदच्छेदः- औडवाः शतसङ्ख्याश्च तत ऊर्ध्वं यथाक्रमम् एवं विज्ञाय भगवान्नारदो मुनिरब्रवीत्

अन्वय- औडवाः-औडव, शतसङ्ख्याश्च-सौ संख्या मे, तत-उस, ऊर्ध्वं- ऊपर की ओर गया हुआ, यथाक्रमम्-क्रमानुसार, एवं-और, विज्ञाय-जानकार, भगवान्नारदो- भगवान नारद, मुनिरब्रवीत्-मुनि बोले

भावार्थ- नारद मुनि द्वारा बताया गया है, की औडव रागों की संख्या सौ से भी अधिक है तथा इसका गायन ऊर्ध्वं मुखी अर्थात ऊपर की ओर किया जाता है।

इतिश्री नारदकृतौ सङ्गीतमकरन्दे

चतुर्थ पादः संगीताध्याय समाप्तः ।

इतिश्री महर्षि नारद द्वारा सङ्गीत मकरन्द संगीताध्याय चतुर्थ पाद समाप्त होता है।

*****

अथ नृत्याध्यायो निरूप्यते ।

नृत्याध्याय का मंगलपूर्ण निरूपण

अनाहतमयीरूपं योगिध्येयं मनोहरम् ।

तद्रूपं च नमस्कृत्य नृत्याध्यायं करोम्यहम् ॥1॥

पदच्छेदः-अनाहत मयीरूपं योगि ध्येयं मनोहरम् तद्रूपं च नमस्कृत्य नृत्याध्यायं करोम्यहम्

अनव्य-अनाहत-अनाहत, मयीरूपं-रूप मय, योगिध्येयं-योगियों द्वारा अध्येय, मनोहरम्-मनोहर, तद्रूपं च-वह रूप, नमस्कृत्य-नमस्कार करके, नृत्याध्यायं-नृत्यध्याय को, करोम्यहम्-मैं आरंभ कर रहा हूँ।

भावार्थ- अनाहत नाद जो की योगियों के द्वारा अध्येय है उसके मनोहर रूप प्रभु को नमस्कार करके मैं नृत्यध्याय का आरंभ कर रहा हूँ।

आदौ नाट्यशालालक्षणमाह ।

षडशीतिहस्तमात्रचतुरस्रसमन्विता।

चतुर्विंशतिकस्तम्भनानाचित्रसमन्विता ॥2॥

पदच्छेदः षडशीति हस्तमात्र चतुरस्र समन्विता चतुर्विंशतिक स्तम्भ नानाचित्र समन्विता

अनव्य षडशीति-अड़सठ, हस्तमात्र- हाथ जितना, चतुरस्र-चतुरस्त्र, समन्विता-युक्त, चतुर्विंशतिक-चौबीस, स्तम्भ-स्तम्भ (खम्बे), नानाचित्र-अनेक प्रकार के चित्र, समन्विता-से युक्त है।

भावार्थ-चतुरस्त्र नामक नाट्यगार मे चौबीस स्तम्भ होते है तथा वह अड़सठ हस्त माते जितना लंबा होता था। जिसका वर्णन नाट्यशास्त्र मे प्राप्त होता है जिसमे चतुरस्त्र प्रेक्षागार चौसठ हाथ का होता था।

नानाविकारसम्पन्नप्राकारा चित्रशोभिता ।

चतुरशीतिबन्धाश्च लेखनीया मनोहराः ॥3॥

पदच्छेदः नानाविकार सम्पन्न प्राकारा चित्र शोभिता चतुर शीति बन्धा श्च लेखनीया मनोहराः

अनव्य नानाविकार-अनेक विकार, सम्पन्नप्राकारा-युक्त चहारदीवारी, चित्रशोभिता-चित्र से शोभित, चतुरशीति-चौरासी, बन्धाश्च-बन्ध, लेखनीया- लिखने चाहिए, मनोहराः-मनोहर

भावार्थ- अनेक चित्रों से सुशोभित चहारदीवारी चौरासी बन्ध से लिखित होने चाहिए अर्थात उसमे चौरासी मनोहर चित्र व लेख होने चाहिए।

रत्नैरनेकैर्विविधैः पटवस्त्रैश्च चामरैः ।

पताकतोरणैर्युक्ता चतुर्दारादिसंयुता ॥4॥

पदच्छेदः रत्नै रनेकै र्विविधैः पटवस्त्रैश्च चामरैः पताक तोरणैर्युक्ता चतुर्दारादिसंयुता

अनव्य रत्नै-रत्न, अनेकै-अनेकों से, र्विविधैः-अनेक, पटवस्त्रैश्च-वस्त्रों से, चामरैः-विशेष प्रकार का वर्णवृत्त जिसके प्रत्येक स्तर में रगण, जगण, रगण, जगण और रगण इत्यादि होते हैं, पताक-पताका, तोरणैर्युक्ता-तोरण से युक्त अर्थात बहिर्द्वार को सजाने के लिए उपयोग मे लायी जानेवाली पताकाएँ, चतुर्दारादिसंयुता-चारों द्वार संयुक्त होते है।

भावार्थ-अनेक रत्नों व वस्त्रों से युक्त विशेष प्रकार का वर्णवृत्त जिसके प्रत्येक स्तर में रगण, जगण, रगण, जगण और रगण इत्यादि होते हैं तथा तोरण से युक्त बहिर्द्वार को सजाने के लिए उपयोग मे लायी जानेवाली पताकाएँ चारो द्वारों पर होनी चाहिए।

मध्ये तु वेदिका रम्या चतुर्विंशतिहस्तका ।

कार्या सर्वगुणोपेता नानापरिमलान्विता ॥5॥

पदच्छेदः- मध्ये तु वेदिका रम्या चतुर्विंशति हस्तका कार्या सर्व गुणोपेता नाना परिम लान्विता

अनव्य-मध्ये तु- मध्य मे तो, वेदिका-छोटी वेदी, रम्या-रमणीय या आकर्षक, चतुर्विंशति-चौबीस, हस्तका-हाथ की, कार्या- करनी चाहिए, सर्वगुणोपेता- सर्व गुण सम्पन्न, नानापरिमलान्विता-अनेक प्रकार की शुद्धियों से युक्त

भावार्थ-प्रेक्षागार के मध्य मे अनेक शुद्धियों से युक्त चौबीस हाथ लंबी वेदिका का निर्माण करना चाहिए

अनेन विधिना कार्या नाट्यशाला मनोहरा।

तल्लक्षणं न हि कृतं राज्ञां दोषमवामुयात् ॥6॥

पदच्छेदः-अनेन विधिना कार्या नाट्य शाला मनोहरा तल्लक्षणं न हि कृतं राज्ञां दोषमवामुयात्

अनव्य-अनेन-इस तरह की, विधिना-विधि से, कार्या- करनी चाहिए, नाट्यशाला-नाट्यशाला, मनोहरा-मनोहर, तल्लक्षणं-वह लक्षण, न हि- ना ही, कृतं-किया गया, राज्ञां-राजाओं का, दोषम्- दोष, अवामुयात्-प्राप्त करें

भावार्थ- इस प्रकार से बनाई गयी नाट्यशाला से राजा को दोष नहीं लगता। अत: ऐसी ही मनोहर नाट्यशाला का निर्माण करना चाहिए।

तस्यां मनोहरं रम्यं सिंहासनमनयंकम् ।

तदग्रे फलपुष्पाणि स्थापयित्वा विराजितम् ॥7॥

पदच्छेदः-तस्यां मनोहरं रम्यं सिंहासन मनयंकम् तदग्रे फलपुष्पाणि स्थापयित्वा विराजितम्

अनव्य- तस्यां-उसमे, मनोहरं-मनोहर, रम्यं-रमणीय व आकर्षक, सिंहासन-सिंहासन, अनर्यकम्-अर्द्धआदि, तदग्रे-उसके आगे, फलपुष्पाणि-फल व पुष्पों को, स्थापयित्वा-स्थापित, विराजितम्-विराजित

भावार्थ-उस मनोहर व आकर्षण प्रेक्षागार मे पुष्प के अर्ध्यों से युक्त सिंहासन को स्थापित करना चाहिए।

अथ सभालक्षणम्

सभा लक्षणों का मंगलपूर्ण आरंभ

विद्वत्कविभटगायकसहास्यहासकज्योतिषवैद्यपौराणिकाः।

एभिर्नवभिर्युक्ता या सभा राजसभेति तैरुक्ता ॥8॥

पदच्छेदः विद्वत्कविभटगायकसहास्यहासकज्योतिषवैद्यपौराणिकाः एभिर्नवभिर्युक्ता या सभा राजसभेति तैरुक्ता

अनव्य- विद्वत-विद्वान, कविभटगायक- कवि, भट(योद्धा), गायक, सहास्य-हास्य से युक्त ,हासक- -विदूषक ज्योतिष- ग्रह, नक्षत्रों के शुभाशुभ फल को बताने वाला शास्त्रज्ञ ,वैद्यपौराणिकाः-वैद्य व पौराणिक, एभिर्नवभिर्युक्ता-इन नौ से युक्त, या सभा- जो सभा, राजसभेति-राज सभा यह, तैरुक्ता-उनसे कहा गया है।

भावार्थ-विद्वान, कवि, योद्धा, गायक विदूषक,ज्योतिषी,वैद्य,पौराणिक गुरु इन नौ रत्नों से युक्त सभा राज सभा कहलाती है।

विद्वांसः कवयो भट्टा गायकाः परिहासकाः ।

इतिहासपुराणज्ञाः सभासप्ताङ्गलक्षणम् ॥9॥

पदच्छेदः-विद्वांसः कवयो भट्टा गायकाः परिहासकाः इतिहासपुराणज्ञाः सभासप्ताङ्गलक्षणम्

अनव्य- विद्वांसः-विद्वान, कवयो-कवि, भट्टा-योद्धा, गायकाः-गायक, परिहासकाः-हसी करने वाला, इतिहासपुराणज्ञाः इतिहास व पुराण के ज्ञाता, सभासप्ता- सात सभाएं, अङ्गलक्षणम्-अंग का लक्षण

भावार्थ- विद्वान, कवि, योद्धा, गायक, हसी करने वाला, इतिहास व पुराण के ज्ञाता यह सात अंग से युक्त सभा वास्तविक सभा कहलाती है।

विद्वलक्षणम्।

सभाजयो वादविचारखण्डनाः समस्तशास्त्रार्थविचारवक्षकाः।

कृतानुरागा जनरञ्जने रताः। अमी बुधाः साधुसभाविभूषणाः ॥10॥

पदच्छेदः सभाजयो वादविचार खण्डनाः समस्तशास्त्रार्थ विचारवक्षकाः कृतानुरागा जनरञ्जने रताः अमी बुधाः साधुसभा विभूषणाः

अनव्य- सभाजयो-सभाजय, वादविचार- शास्त्रार्थ, खण्डनाः- खंडन, समस्तशास्त्रार्थ- समस्त चर्चा या प्रश्नोत्तर, विचारवक्षकाः- विचार शील, कृतानुरागा- कृत अनुराग, जनरञ्जने- जन रंजञ्न, रताः- लगे हुए, अमी-ये, बुधाः-विद्वान, साधुसभा-साधू सभा, विभूषणाः-विभूषित

भावार्थ- शास्त्रज्ञों मे निपूर्ण, विचारशील, वाद विचार मे दक्ष,अनुराग से युक्त, लोकाराधन मे तत्पर, वाद विवाद मे निपूर्ण विद्वानों से युक्त सभा को साधूसभा कहा जाता है।

अथ कविलक्षणम् ।

शुचिर्दक्षः शान्तः सुजनविनतः सूनृततरः कलावेदी विद्वानतिमृदापदः काव्यचतुरः।

रसज्ञो दैवज्ञः सरसहृदयः सत्कुलभवः शुभाकारश्छन्दोगुणगणविवेकी स च कविः ॥11॥

पदच्छेदः-शुचिर्दक्षः शान्तः सुजनविनतः सूनृततरः कलावेदी विद्वान अतिमृदापदः काव्यचतुरः रसज्ञो दैवज्ञः सरसहृदयः सत्कुलभवः शुभाकार छन्दोगुण गणविवेकी स च कविः

अनव्य- शुचिर्दक्षः शान्तः-शुद्ध, पवित्र, चरित्रवान, दक्षा, शांत, सुजनविनतः सूनृततरः-सज्जन, विनयशील, सत्यवादी, कलावेदीविद्वान-कलाकार, विद्वान, अतिमृदापदः-कोमल, काव्यचतुरः- काव्य मे चतुर, रसज्ञो- काव्य रस का ज्ञाता, दैवज्ञः- ईश्वरीय बातों को जाननेवाला, सरसहृदयः-कोमलचित्त, सत्कुलभवः-अच्छे कुल मे उत्पन्न, शुभाकार- शुभाकार, छन्दोगुण-छंद व गुण का ज्ञाता, गणविवेकी स च कविः-विवेकी कवि होता है।

भावार्थ- शुद्ध, पवित्र, शांत सज्जन, विनयशील,विद्वान,सत्यवादी, कलाकार, काव्य मे चुतुर, कोमल पद का ज्ञाता, काव्य रस का ज्ञाता, ईश्वरीय बातों को जाननेवाला, कोमलचित्त, अच्छे कुल मे उत्पन्न, छंद व गुण का ज्ञाता,यणआदि का ज्ञाता ये सभी अच्छे कवि के लक्षण है।

भटलक्षणम् ।

अनेकभाषासु विशेषबुद्धयो नृपालवंशावलिकीर्तनक्षमाः ।

प्रबन्धविद्यापठने प्रवीणा महीशयोग्या मगधा महीतले ॥12॥

पदच्छेदः-अनेकभाषासु विशेषबुद्धयो नृपालवंशावलि कीर्तनक्षमाः प्रबन्धविद्यापठने प्रवीणा महीशयोग्या मगधा महीतले

अनव्य- अनेकभाषासु-अनेक भाषाओं का ज्ञाता, विशेषबुद्धयो-विशेष बुद्धि से युक्त, नृपालवंशावलि-राजाओं की वंशावली, कीर्तनक्षमाः-गाने के समक्ष, प्रबन्धविद्यापठने-प्रबंध काव्य के पठन मे, प्रवीणा- निपूर्ण ,महीशयोग्या- रा के योग्य, मगधा-भट, महीतले-धरती पर

भावार्थ- अनेक भाषाओं का ज्ञाता, राजाओं की वंशावली को जानने वाला, कीर्तन मे दक्ष,प्रबंध विद्या मे निपूर्ण, राजा के योग्य भट धरती पर मुश्किल से उपलब्ध होता है।

अथ गायकलक्षणम् ।

षाडवौडवसम्पूर्णगायने जनरञ्जकाः !

काकुवर्जितशारीरा गायका राजवल्लभाः ॥13॥

पदच्छेदः षाडवौडव सम्पूर्णगायने जनरञ्जकाः काकुवर्जित शारीरा गायका राजवल्लभाः

अनव्य- षाडवौडव-षड्व व औडव, सम्पूर्णगायने-सम्पूर्ण के गायन मे, जनरञ्जकाः-लोगो का मनोरंजन करने वाला, काकुवर्जित-काकू को छोड़कर, शारीरा- शरीर, गायका-गायक, राजवल्लभाः-राजाओं के प्रिय

भावार्थ- षाडव औडाव व सम्पूर्ण जाति के गायन मे निपूर्ण, काकु से वर्जित गायन कर के लोक का मनोरंजन करने वाले तथा सुशरीर गायक राजाओं को प्रिय होते है।

अथ परिहासकलक्षणम् ।

क्रियाङ्गभाषाङ्गसमस्तवञ्चना लसत्प्रसङ्गात्मिकवक्रयुक्तयः ।

प्रस्तावहास्योचितवाग्विलासा बुधैः प्रशस्ताः परिहासका (के) गुणाः ॥14॥

पदच्छेदः क्रियाङ्ग भाषाङ्ग समस्तवञ्चना लसत् प्रसङ्गात्मिक वक्रयुक्तयः प्रस्तावहास्योचित वाग् विलासा बुधैः प्रशस्ताः परिहासका (के) गुणाः

अनव्य- क्रियाङ्ग-क्रिया के अंग, भाषाङ्ग-भाषाओं के अंग, समस्तवञ्चना-सभी वाचनाओं से, लसत्-सुशोभित, प्रसङ्गात्मिक-अपने प्रसंग, वक्रयुक्तयः-टेढ़ी युक्तियाँ, प्रस्तावहास्योचित-प्रसंग व हास्य के अनुसार, वाग् विलासा- वाणी का विकास, बुधैः-विद्वानों द्वारा, प्रशस्ताः-प्रवीण, परिहासका (के) गुणाः-परिहासक (ज़ोरों की हँसी करने वाला या हसी मज़ाक करने वाला) के गुण है।

भावार्थ- क्रिया के अंग, भाषाओं के अंग, सभी वाचनाओं से युक्त प्रसंग के अनुसार वक्र उक्ति कहने वाला, वाणी विलास (आनंद, प्रसन्नता, हर्ष) मे निपूर्ण यह सब परिहासक के लक्षण है।

इतिहासज्ञलक्षणम् ।

पुराणैरवशिष्टाद्यैः व्याख्यानकथने क्षमाः (?) ।

इतिहासविदः साक्षागीतवाद्यविचक्षणाः ॥15॥

पदच्छेदः पुराणै अवशिष्टाद्यैः व्याख्यानकथने क्षमाः इतिहासविदः साक्षात गीतवाद्यविचक्षणाः

अनव्य- पुराणै-पुराणों से, अवशिष्टाद्यैः-अवशिष्ट आदि से, व्याख्यानकथने-व्याख्यान कथन मे, क्षमाः-निपूर्ण, इतिहासविद-इतिहास का जानकार, साक्षात-प्रत्यक्ष, गीतवाद्यविचक्षणाः-गीत वाद्य के लक्षण आदि मे निपूर्ण

भावार्थ- इतिहासकार स्वयं पुराणों व इतिहास का जानकार होता है,जिसके व्याख्यान व कथन मे निपुणता प्रत्यक्ष रूप मे होती है, तथा जिसको गीत वाद्यों आदि का पूर्ण ज्ञान होता है।

अथ ज्योतिषलक्षणम् ।

प्रतिप्रयाणान्बहुजातकादीन ज्ञेयः सुसिद्धान्तविचारदक्षकः।
ग्रहोपरागादिषु शुद्धलक्षणः स पण्डितो देवगुरोः समानः ॥16॥

पदच्छेदः- प्रतिप्रयाणान् बहुजातकादीन ज्ञेयः सुसिद्धान्त विचारदक्षकःग्रहोपरागादिषु शुद्धलक्षणः स पण्डितो देवगुरोः समानः

अनव्य- प्रतिप्रयाणान्-हर प्रयाण को, बहुजातकादीन-बहुजनक आदि को, ज्ञेयः-जानना चाहिए, सुसिद्धान्त-अच्छे सिद्धान्त, विचारदक्षकः-विचारों से दक्ष, ग्रहोपरागादिषु-ग्रह व उपराग आदि मे, शुद्धलक्षणः-शुद्ध लक्षण, स पण्डितो-वह विद्वानों, देवगुरोः-देव गुरु, समानः-के समान होता है।

भावार्थ- हर समय जातक आदि के सिद्धांत का ज्ञाता, विचार निपूर्ण ग्रहों के लक्षणों का ज्ञाता पंडित देव गुरु के समान होता है।

अथ वैद्यलक्षणम् ।

पाण्डुश्वासकफातिसारविषजाः कर्मज्वरा भूतजाः
प्रत्योद्रेककफोद्भवा हिमभवा वातानशीतिः क्रमात् (?)।
तिस्रो वैद्यकसंहितासु निपुणः शास्त्रेषु बोधात्मवान्
दृष्टस्पृष्टविचित्ररोगहरणः सद्वैद्यधन्वन्तरिः ॥17॥

पदच्छेदः- पाण्डु श्वास कफ अतिसार विषजाः कर्मज्वरा भूतजाः प्रत्यो उद्रेक कफोद्भवा हिमभवा वातानशीतिः क्रमात् तिस्रो वैद्यक संहितासु निपुणः शास्त्रेषु बोधात्मवान् दृष्ट स्पृष्टविचित्र रोगहरणः सद्वैद्य धन्वन्तरिः

अनव्य- पाण्डुश्वास-पीला (हल्के पीले रंग का), श्वास (साँस), कफ अतिसार- कफ व आँव का रोग, विषजाः-विष से उत्पन्न, कर्मज्वरा भूतजाः-भूत, प्रत्योउद्रेक-हर वेग, कफोद्भवा-कफ से उत्पन्न, हिमभवा-बर्फ से उत्पन्न, वातानशीतिः-अस्सी वायु, क्रमात्-क्रम से, तिस्रो-तीन, वैद्यक संहितासु-

वैद्यक संहिताओं मे, निपुणः-निपूर्ण, शास्त्रेषु-शास्त्रों मे, बोधात्मवान्-जानकार, दृष्ट स्पृष्टविचित्र-देखे गए व स्पर्श किए गए विचित्र, रोगहरणःरूग को हरने वाला, सद्वैद्य-सह वैद्य, धन्वन्तरिः-धन्वन्तरि ।

भावार्थ- रोगो मे पांडुरोग, श्वास रोग, विष, कर्मज्वार, भूत से उत्पन्न, काफ़, ठंड आदि वात-पित्त-कफ़ इन तीनों प्रकार से होने वाले रोगो के हर्ता, देखकर व स्पर्श कर के ही रोग की जानकारी प्राप्त कर लेने वाला वैद्य धन्वन्तरी होता है।

अथ पुराणिकलक्षणम् ।

आलापोक्तिषु चातुर्य श्रुतिज्ञः सर्वशास्त्रवित् ।

पौराणिकः पुराणेषु कुशलः कथितो बुधैः ॥18॥

पदच्छेदः- आलाप उक्तिषु चातुर्य श्रुतिज्ञः सर्वशास्त्र वित् पौराणिकः पुराणेषु कुशलः कथितो बुधैः

अनव्य- आलाप उक्तिष-आलाप की उयक्तियों में, चातुर्य-चतुराई, श्रुतिज्ञः-श्रुति के जनकार,(वेदों के ज्ञाता) सर्वशास्त्र वित्-सभी शास्त्रों के जानकार, पौराणिकः-पौराणिक, पुराणेषु-पुरानों मे, कुशलः-निपूर्ण, कथितो-कहा गया, बुधैः- विद्वानों के द्वारा

भावार्थ- वेदों के ज्ञाता, सभी शास्त्रों का ज्ञाता, चतुर, विद्वान ,पुराणों के ज्ञाता तथा इस ज्ञान को उक्तियों मे ही बता देने वाला कुशल पौराणिक कहलाता है।

अथ सभापतिलक्षणम् ।

अनेकशृङ्गारविचित्ररूपः सर्वज्ञचातुर्यरसान्वितोऽसौ।

सङ्गीतसाहित्यकलानुरक्तो निर्मत्सरो वाक्सुगुणैरुपेतः ॥19॥

पदच्छेदः- अनेकशृङ्गार विचित्ररूपः सर्वज्ञ चातुर्य रसान्वित असौ सङ्गीत साहित्य कलानुरक्तो निर्मत्सरो वाक सुगुणै रुपेतः

अनव्य- अनेकशृङ्गार-अनेक शृंगार मे, विचित्ररूपः-विचित्र वेश धारी (कौतूहल उत्पन्न करने वाला), सर्वज्ञ-सबको जानने वाला, चातुर्य-चतुर, रसान्वित असौ-रस से युक्त यह, सङ्गीत साहित्य-संगीत का साहित्य, कलानुरक्तो-व कला मे अनुरक्त, निर्मत्सरो-मत्सर रहित, वाक सुगुणै रुपेतः-अच्छी वाणी व गुणों से युक्त

भावार्थ-सभापति अनेक शृंगार मे विचित्र वेशधारी, सबको जानने वाले, चतुर, रस से युक्त, संगीत साहित्य व कला के अनुरक्त अभिमान रहित व अच्छी वाणी के गुणों से युक्त होने चाहिए ।

तद्वामपार्श्वेऽपि पुराणभट्टाः तद्दक्षिणेऽमात्यपुरोहिताश्च ।

तत्पृष्ठभागेऽपि च कोषरक्षकः समीपविद्वत्कविबान्धवैर्युतः ॥20॥

पदच्छेदः-तत् वाम पार्श्वेऽपि पुराण भट्टाः तद्द दक्षिणे अमात्य पुरोहिताश्च तत् पृष्ठभागे अपि च कोषरक्षकः समीपविद्वत् कवि बान्धवै र्युतः

अनव्य- तत् वाम पार्श्वेऽपि-उसके बाएँ और नजदीक ही, पुराण भट्टाः-पुराण भाट, तद्द दक्षिणे-उसके दाहिने में, अमात्य पुरोहिताश्च-अमात्य व पुरोहित, तत् पृष्ठभागेअपि -उसके पृष्ठ भाग में भी, च कोषरक्षकः-और कोषरक्षक, समीपविद्वत्- समीप्स्थ विद्वान, कवि- कवि, बान्धवै र्युतः- बंधुओं से युक्त

भावार्थ- सभापति के बाएँ भाट दक्षिण मे अमात्य व पुरोहित,पृष्ठ भाग मे कोश रक्षक होना चाहिए तथा वीएच कवि व बंधुओं से युक्त भी होनी चाहिये ।

ततः सुविद्याबहुलक्षणान्वितः कालप्रवीणो बहुजातकादिमत् (?)।
ततो भिषग्दैवविदौ समीपे संस्थापयेद्दक्षिणकोविदैः क्रमात् ॥21॥

पदच्छेदः- ततः सुविद्या बहु लक्षणान्वितः काल प्रवीणो बहु जातकादिमत् ततो भिषग्दैव विदौ समीपे संस्थापयेत् द्दक्षिणकोविदैः क्रमात्

अनव्य- ततः सुविद्या-व्हा अच्छी विद्या, बहु लक्षणान्वितः-बहुलक्षणों से युक्त, काल प्रवीणो-कला मे प्रवीण, बहु जातकादिमत्-बहु जातक की तरहा, ततो-फिर, भिषग्दैव विदौ समीपे-भैषज और भाज्य के समीप, संस्थापयेत्-स्तहपीत करें, द्दक्षिणकोविदैः- दक्षिण के जानकार, क्रमात्-क्रम से

भावार्थ-दक्षिण पक्ष के जानकारों को विद्या युक्त, कला मे प्रवीण व नक्षत्रों के जानकारों को वैश्य व भाष्यज्ञाताओं के समीप स्थापित करना चाहिये।

महीशवामे वरमन्त्रिमण्डलं संस्थापयेत्सैन्यपति क्रमाच ।
पार्श्वोंभयोईन्दिभरप्रवीणा शृङ्गारगानज्ञवरान्कवींश्च ॥22॥

पदच्छेदः- महीशवामे वरमन्त्रिमण्डलं संस्थापयेत् सैन्यपति क्रमाच पार्श्वोंभयो वन्दिभरप्रवीणा शृङ्गार गान ज्ञ वरान् कवींश्च

अनव्य- महीशवामे-राजाओं के समीप, वरमन्त्रिमण्डलं-श्रेष्ठ मंत्रियों का मण्डल, संस्थापयेत्-स्थापित करें, सैन्यपति क्रमात च–सेना पति को क्रम से, पार्श्वोंभयो-आस पास दोनों तरफ से, वन्दिभरप्रवीणा-वंदना करने वाले भाट, निपूर्ण, शृङ्गार गान ज्ञ -शृंगार युक्त गान, वरान्- श्रेष्ठ, कवींश्च- कवि गण

भावार्थ- राजा के वाम भाग में श्रेष्ठ मंत्रियों की मंडली, सेनापति, भाट। शृंगार गान युक्त कवियों को हमेशा स्थित रहना चाहिये।

विलासिनोऽन्तःपुरतो विसारिणः स्वकङ्कणैः कूजितकिङ्किणीरवैः ।
अतिखरूपा बहुवल्गुभाषिणः स चामराः पार्श्वंगता विरज्जिताः ॥23॥

पदच्छेदः-विलासिनो अन्तःपुरतो विसारिणः स्वकङ्कणैः कूजित किङ्किणीरवैः अतिस्वरूपा बहुवल्गुभाषिणः स चामराः पाश्वंगता विरज्जिताः

अनव्य- विलासिनो- विलासी, अन्तःपुरतो-अंत: पुर से, विसारिणः-फैले हुये, स्वकङ्कणैः-अपने कंगनों से, कूजित-कूजते हुए, किङ्किणीरवैः-किङ्किणी (करधनी) की आवाज से, अतिस्वरूपा-अत्यधिक रूपवान, बहुवल्गुभाषिणः-बहुत अच्छा भाषण देने वाले, स चामराः मोरछल, पाश्वंगता-पीछे-पीछे चलने वाले, विरज्जिताः-रज्जित

भावार्थ-अंत: पुर में विलासी, फैले हुए, अपने कंगनों की आवाज व करधनी की धुन से सुशोभित गुप्त बात को संकेत के माध्यम से कह देने वाला चामरों को राजा के समीप होना चाहिए।

डोलचामरकराग्रवर्तिनो वरविवेककविवाद्यकारकाः (?)।

सर्वशस्तदनुरक्षकादयः पार्श्ववर्तिननिरीक्षणोक्तयः (?) ॥24॥

पदच्छेदः-डोलचामर कराग्रवर्तिनो वरविवेककवि वाद्यकारकाः सर्वश तत् अदनुरक्षकाय आदयः पार्श्ववर्तिन निरीक्षणोक्तयः

अनव्य-डोलचामर-डोल व चामर(मोरछल मोरपंखों का बना हुआ चँवर जो झूलने के काम आता है), कराग्रवर्तिनो-हाथ मे आगे रखने वाला, वरविवेककवि-विवेक शील कवि, वाद्यकारकाः-वाद्य बजने वाला, सर्वश-सब ओर से, तत् अदनुरक्षकाय-उसकी रक्षा के लिए, आदयः-आदि, पार्श्ववर्तिन-पार्श्ववर्ती (पास रहने वाला),निरीक्षणोक्तयः-निरीक्षण उक्तियाँ

भावार्थ-

(अथ) नटविशेषः।

चतुर्धाभिनयाभिज्ञो नटो भाषाविवेकवित् ।

नर्तनः सूरिभिः प्रोक्तो मार्गनृत्यकृतश्रमः॥25॥

पदच्छेदः- चतुर्धा अभिनय अभिज्ञो नटो भाषा विवेकवित् नर्तनः सूरिभिः प्रोक्तो मार्गनृत्य कृतश्रमः

अनव्य- चतुर्धा अभिनय-चार प्रकार का अभिनय, अभिज्ञो-जानने वाला, नटो-नट नाट्य करने वाला, भाषा विवेकवित्-भाषाओं का जानकार, नर्तनः-नृत्य करने वाला, सूरिभिः-विद्वानों के द्वारा, प्रोक्तो-कहा गया है, मार्गनृत्य-मार्ग का नृत्य, कृतश्रमः-मेहनत करने वाला

भावार्थ- अभिनय चार प्रकार का होता है। नृत्य के अंतर्गत मार्गनृत्य भी आता है, ऐसे नृत्य के जान कार व नट को हमेशा अपने कार्य के लिए परिश्रम करते रहना पड़ता है।

अनुभावविभावजानता रसभावादिकरञ्जकश्रियः।

नटभावविवेकबन्धनो रचिताकालविभेदेशिकः ॥26॥

पदच्छेदः-अनुभाव विभाव जानता रस भावादि रञ्जकश्रियः नटभाव विवेक बन्धनो रचिता काल विभेद देशिकः

अनव्य-अनुभाव विभाव जानता-अनुभाव विभाव के ज्ञाता, रस भावादि-रस व भाव, रञ्जकश्रियः-युक्त कांति, नटभाव-नट का भाव, विवेक बन्धनो-विवेक का बंधन, रचिता काल-रचित काल, विभेद-भद रहित, देशिकः-देशी

भावार्थ- अनुभाव, विभाव, रस भवादी का जानकार, तत्काल कविता रच देने वाला देशी आदि का ज्ञान नट होना चाहिए

अथ घर्धरिकः।

बिभ्रन्मुण्डशिखाविलिप्तविभवो भस्माङ्गःशारीरको

विभ्रद्धघरिकाश्च पेशलकलातालमवीणस्तथा ।

पञ्चाङ्गे कुशलो (ल.) सभापति .....

घर्घर्याः पटुदीर्घकाललगमास्तालज्ञकैर्वर्णिताः ॥27॥

पदच्छेदः- बिभ्रन् मुण्ड शिखा विलिप्त विभवो भस्माङ्ग शारीरको विभ्रद्ध घरिकाश्च पेशल कलाताल प्रवीणस्तथा पञ्चाङ्गे कुशलो सभापति घर्घर्याः पटु दीर्घकाल लगमास्तालज्ञै र्वर्णिताः

अनव्य- बिभ्रन्-धारण करता हुआ, मुण्ड शिखा-मुंडित व शिखा युक्त, विलिप्त विभवो-वैभव से लिप्त, भस्माङ्ग शारीरको-भस्म अंगों वाला, विभ्रद्ध-धारण करता हुआ, घरिकाश्च-घर्घर शब्द, पेशल कलाताल- मनोमुग्धकारी कला व ताल से, प्रवीणस्तथा- तथा प्रवीण, पञ्चाङ्गे कुशलो-पंचांग मे कुशल, सभापति -सभा पति को, घर्घर्याः-घर्घरी, पटु-प्रवीण, दीर्घकाल-लंबे समय तक, लगमास्तालज्ञै-लघु गुरु मध्यम ताल का ज्ञाता, वर्णिताः-वर्णित किए गए है।

भावार्थ- मुंड पर शिखा को धारण करने वाला, शरीर पर भस्म लगाने वाला, घर्घरिका व मनोमुग्धकारी कला व ताल मे नीपूर्ण, लघु, गुरु, मध्यम ताल का ज्ञान रखने वाला नट राजसभा मे सभापति के समक्ष होना चाहिए।

अथ पात्रलक्षणम्।

समेलनैः सर्वकलासुशोभित रनेकवस्त्राभरणैरलङ्कृतैः ।

उपाङ्गतालाङ्गमृदङ्गचातुरैः समेत्य पात्रा जवनीतटेस्थिताः॥28॥

पदच्छेदः-समेलनैः सर्व कलासुशोभित अनेकवस्त्रा अभरणै अलङ्कृतैः उपाङ्ग तालाङ्ग मृदङ्ग चातुरैः समेत्य पात्रा जवनीतटे स्थिताः

अनव्य-समेलनैःमेल से, सर्व कलासुशोभित-सभी कलाओं से सुशोभित, अनेकवस्त्रा-अनेक वस्त्र, अभरणै-आभूषणों से, अलङ्कृतैः-अलंकृत या सजा हुआ, उपाङ्ग तालाङ्ग-उपाङ्ग- तालङ्ग, मृदङ्ग-मृदंग, चातुरैः चतुरता से, समेत्य-प्राप्त करके, पात्रा-पात्र, जवनीतटे-यवनिका(पर्दे के पीछे से), स्थिताःस्थित हों

भावार्थ- अनेक वस्त्रों व गहनों से सुशोभित, ताल व सुर के साथ मृदंग का ज्ञान रखने वाला पात्र यवनिका के निकट स्थित हों

सा चित्रिणी शहिनिहस्तिनी क्रमात् सा पद्मिनी रूपविलाससंभ्रमाः।
आबालतारुण्यविदग्धयौवना बिम्बाधरा शोभितचन्द्रिकाननाः ॥29॥

पदच्छेदः-सा चित्रिणी शहिनिहस्तिनी क्रमात् सा पद्मिनी रूप विलास संभ्रमाः आबालता तारुण्य विदग्ध यौवना बिम्बाधरा शोभित चन्द्रिकाननाः

अनव्य- सा चित्रिणी- वह चित्रिणी, शहिनिहस्तिनी-हाथ मे शंख लिए हुए, क्रमात्-क्रम से, सा पद्मिनी-वह कमल का पौधा, रूपविलाससंभ्रमाः-रूपविलास से भ्रमित, आबालतातारुण्य-बचपन से तरुण अवस्था, विदग्धयौवना-विदग्ध (तपा हुआ) यौवन सम्पन्न, बिम्बाधरा-बिम्ब युक्त (बिम्ब फल की भांति)अधर (होठ) वाली, शोभितचन्द्रिकाननाः-चंद्र जैसे मुख वाली

भावार्थ-जिसका चित्रण इस प्रकार से किया गया है, वह नटी जो हाथ मे शंख लिए हो, जिसका रूप कमल की पंखुड़ी के समान हो तथा जो बचपन से तरुण अवस्था तक के क्रम मे विदग्ध यौवन से सम्पन्न सुंदर अधर(होठ) वाली हो तथा जिनके कमल नयन हो व चन्द्र के समान शीतल मुख वाली हो।

पीनोन्नतोत्तुङ्गकुचाभिशोभिताः सकञ्चुका रत्नविचित्रभूषणाः।
तम्यरूपाः कुचकुम्भशोभिता विचित्रहारा मणिमौक्तिकैर्युताः ॥30॥

पदच्छेदः-पीनो न्नतोत्तुङ्ग कुचाभि शोभिताः सकञ्चुका रत्न विचित्र भूषणाः तम्य रूपाः कुच कुम्भ शोभिता विचित्र हारा मणि मौक्तिकैर्युताः

अनव्य-पीनोन्नतोत्तुङ्गकुचाभिशोभिताः- जिसका वक्षस्थल सुंदर हो (स्त्री के शरीर का वह भाग जो पेट और गरगन के बीच मे होता है) सकञ्चुका-अंग वस्त्र, रत्नविचित्रभूषणाः विचित्र रत्न से विभूषित, तम्यरूपाः रमणीय रूप वाली हो, कुचकुम्भशोभिता-कुम्भ के जैसा सुंदर वक्ष स्थल हो, विचित्रहारा-विचित्र भांति के हार, मणिमौक्तिकैर्युताः-मणि व मोती से युक्त माला

भावार्थ-यहा पर नटी के शरीर के सुंदरता की चर्चा करते हुए ग्रंथकार द्वारा यह कहा गया है, कि वह स्त्री जिसका वक्षस्थल (स्त्री के शरीर का वह भाग जो पेट और गरदन के बीच मे होता है) सुंदर हो

जिसका रूप रमणीय हो जिसके अंग वस्त्र विचित्र आभूषण व विभिन्न तरहा के हार धारण करती हो जिसमे मणि व मोती युक्त हो ।

सपादहस्ताजमुखाजरेखाः सलक्षणा युक्तकपोलरम्याः।

कुचौ विशालौ मृदुवेणिभेदाः पुष्पाण्यलङ्कृत्य मनोहराणि ॥31॥

पदच्छेदः- सपादहस्ता जमुखाज रेखाः सलक्षणा युक्तक पोलरम्याः कुचौ विशालौ मृदु वेणि भेदाः पुष्पाण्य लङ्कृत्य मनोहराणि

अनव्य-सपादहस्ताज मुखाजरेखाः हाथ पैर मुख कमल रेखा जैसा हो, सलक्षणा- के लक्षण, युक्तकपोलरम्याः-कोमल कोपल रम्या से युक्त, कुचौ-कुच, विशालौ-विशाल, मृदुवेणिभेदाः सुंदर वेणि (चोटी) भेद से, पुष्पाण्यलङ्कृत्य-पुष्प लावण्य से अलंकृत, मनोहराणि-मनोहारी मन को हर लेने वाली

भावार्थ-हाथ पैर तथा मुख की रेखाएँ कमल बद्ध रेखाओं से युक्त हो तथा ऐसी लक्षणवाती सुंदर मुख वाली जिसका वक्ष स्थल विशाल व सुशोभित हो तथा जो रम्य कोपल अर्थात कली की भांति प्रतीत होती हो जिसकी वेणि (चोटी) कोमल हो तथा उस वेणि मे पुष्प लावण्य से अलंकृत करी गयी हो जिसका रूप मनोहारी अर्थात मन को हर लेने वाला हो।

लजान्विता मृदुवचो बहुनृत्यगीता लावण्यहंसगमना बहुलास्ययुक्ताः ।

गन्धवेशास्त्रनिपुणा रमणाश्च रम्भा तिलोत्तमा और्वशिमेनका मताः (?) ॥32॥

पदच्छेदः- लजान्विता मृदुवचो बहु नृत्य गीता लावण्य हंस गमना बहु लास्य युक्ताः गन्धवे शास्त्र निपुणा रमणाश्च रम्भा-तिलोत्तमा और्वशिमेनका मताः

अनव्य-लजान्विता-लज्जा से युक्त, मृदुवचो मधुर वाणी हो, बहु नृत्य-नृत्य की ज्ञाता, गीता लावण्य-गीत से निपूर्ण, हंसगमना-हंस की भांति चाल हो, बहु लास्य युक्ताः-विभिन्न लास्य (नाट्य)से युक्त, गन्धवे शास्त्र निपुणा-गायन गंधर्व शास्त्र मे निपूर्ण, रमणाश्च-रमण करने वाली हो, रम्भातिलोत्तमा-रम्भा, तिलोत्तमा अप्सरा की तरहा, और्वशिमेनका मताः -उर्वशी व मेनिका की भांति रूप वान हो

भावार्थ- वह नटी जो लज्जा से युक्त हो जिसकी मधुर वाणी हो जो नृत्य की ज्ञाता हो जो गायन मे निपूर्ण हो, जिसकी चाल हंस की भांति हो, जो विभिन्न लास्य (नाट्य)से युक्त गायन गंधर्व शास्त्र मे निपूर्ण हो, जो रमण करने वाली हो तथा जो रूप मे रम्भा, तिलोत्तमा, उर्वशी व मेनिका इत्यादि अप्सराओं की भांति रूप वान हो ।

राज्यर्पिता दृष्टिरमोघयौवना विद्याकलारागसुगर्वरक्षकाः ।

पुष्पाञ्जलिं दापयितुं समारभे द्रङ्गप्रदेशं प्रति लजितागताः ॥33॥

पदच्छेदः-राज्यर्पिता दृष्टि: अमोघयौवना विद्याकलाराग सुगर्वरङ्गकाः पुष्पाञ्जलिं दापयितुं समारभेत् रङ्ग प्रदेशं प्रति लजितागताः

अनव्य-राज्यर्पिता-राजा को अर्पित, दृष्टिः-दृष्टि, अमोघयौवना-जो लाभ,यश आदि की दृष्टि से ठीक हो या सही उपयोग में हो ऐसे यौवन वाली, विद्याकलाराग-विद्या कला व राग से पूर्ण, सुगर्वरङ्गकाः-गर्व से युक्त, पुष्पाञ्जलिं-फूलो की अंजुली, दापयितुं-देने के लिए, समारभेत्-शुरू करें, रङ्ग प्रदेशं प्रति-नाट्य रंगमंच की ओर, लजितागताः-लज्जा के साथ आती हुयी।

भावार्थ-नाट्य रंग मंच की ओर लज्जा के साथ जाती हुई नटी जो सुयौवन वाली है जो गर्व के साथ फूलों की अंजलि देने के लिए विद्या व राग से युक्त भावों के साथ फूल राजा को अर्पित करें ।

अङ्गेनालम्बयेद्गीतं हस्तेनार्थ प्रदर्शयेत् ।
नेत्राभ्यां भावयेद्भावं पादाभ्यां तालनिर्णयः॥34॥

पदच्छेदः-अङ्गेन आलम्बयेत् द्गीतं हस्तेन अर्थ प्रदर्शयेत् नेत्राभ्यां भावयेत् द्भावं पादाभ्यां तालनिर्णयः

अनव्य- अङ्गेन-अंग से, आलम्बयेत् द्गीतं -गीत गाया जाये, हस्तेन अर्थ- हाथ से अर्थ, प्रदर्शयेत्-दिखाया जाये, नेत्राभ्यांभावयेत्- नेत्रों से, दिखाया जाए, उद्भावं-भाव से, पादाभ्यां-पैरों से ,तालनिर्णयः-ताल का निर्णय

भावार्थ-शरीर के अंगो से गीत तथा हाथों से अर्थों का प्रदर्शन करना चाहिए। नेत्रों से भाव तथा पैरों से ताल का निर्णय व निर्धारण करना चाहिए।

एवं भावमनो धृत्वा पुष्पाञ्जलिपुरःसरम् ।
महीन्द्रस्य समीपाने रङ्गपीठे समर्पयेत् ॥35॥

पदच्छेदः- एवं भावमनो धृत्वा पुष्पाञ्जलि पुरःसरम् महीन्द्रस्य समीपाने रङ्गपीठे समर्पयेत्

अनव्य- एवं भावमनो-ऐसे मन के भाव को, धृत्वा-धरण करके, पुष्पाञ्जलि-फूलो की अंजुली, पुरःसरम्-सबसे आगे, महीन्द्रस्य समीपाने-राजा के समीप आगे, रङ्गपीठेसमर्पयेत्-रंग पीठ मे समर्पित करें।

भावार्थ- इस मन व भाव से पुष्पांजलि राजा को सबसे पहले रंगपेठ मे समर्पित करें।

हस्तपात्रेऽर्पितकुचौ कटौ विप्रणिताकृती।
नेत्रजाति समेत्यैवं नीराजनकृता नृपम् (?) ॥36॥

पदच्छेदः- हस्तपात्रे अर्पितकुचौ कटौ विप्रणिताकृती नेत्रजाति समेत्य एवं नीराजनकृता नृपम्

अनव्य- हस्तपात्रे-हस्त रूपी पात्र मे, अर्पितकुचौ-अर्पित स्तन युगल, कटौ-कमर से, विप्रणिताकृती-झुकी हुए आकृति, नेत्रजाति-नेत्रो को, समेत्य- साथ लेकर, एवं-और, नीराजनकृता- दुर्गुण एवं दोष रहित, नृपम्-राजा को।

भावार्थ- झुकी हुए कमर तथा हाथों मे घृत स्तनयुगल वाली आकृति के साथ नेत्रों से इधर उधर देखे

अथ पुष्पाञ्जलिः।

ब्रह्मा तालधरो हरिश्च पटही वीणाकरी भारती

वंशज्ञौ शशिभास्करौ श्रुतिधराः सिद्धाप्सराः किन्नराः ।

पदच्छेदः ब्रह्मा तालधरो हरिश्च पटही वीणाकरा भारती वंशज्ञौ शशि भास्करौ श्रुतिधराः सिद्धाप्सर किन्नराः

अन्वय-ब्रह्मा-ब्रहम देव,तालधरो-ताल को धरण करने वाले,हरिश्च-और विष्णु,पटही-स्थैय प्रदान करने वाले (अर्थात पटह: अवनद्ध वाद्य),वीणाकरा-वीणा और श्रुति को हाथ में धरण करने वाली, भारती-सरस्वती,वंशज्ञौ शशिभास्करौ-सूर्य और चंद्रमा वंश के जानकार, श्रुतिधराः-श्रुति को धरण करने वाली,सिद्धा-सिद्ध,अप्सर- अप्सराएँ ,किन्नराः-किन्नर

भावार्थ-ब्रह्मा ताल को धारण करने वाले, विष्णु स्थिरता प्रदान करने वाले, वीणा को धारण करने वाली माँ सरस्वती, दिन व रात के स्वामी सूर्य व चंद्रमा वंश को जानने वाली तथा श्रुतियों को धारण करने वाली स्वर्ग की सिद्धअप्सराएँ व किन्नर सभी अपने संगीत रूपी ज्ञान से अवनद्ध वाद्य पटही मे ताल दीजिये ।

नन्दीभृङ्गिरिटादिमर्दलधराः सङ्गीतको नारदः

शम्भोर्चत्तकरस्य मङ्गलतनो व्यं सदा पातु नः ॥37॥

पदच्छेदः-नन्दी भृङ्गिरिटादि मर्दल धराः सङ्गीतको नारदः शम्भोर्चत करस्य मङ्गल तनो ट्यं सदा पातु नः

अनव्य-नन्दीभृङ्गिरिटादिमर्दलधराः-नंदी व भृङ्गिरिटाआदि, मर्दलधराःधरती का मर्दल, सङ्गीतको-संगीतकार, नारदः-नारदमुनि, शम्भोर्चतकरस्य- शंकर नृत्य करने वाले मङ्गलतनोट्यं-मंगलकरने वाले,सदा-हमेशापातु-पवित्र करे, नः-हमे

भावार्थ-धरती का मर्दल कने वाले नंदी व भृङ्गिरिटा आदि, संगीतज्ञ नारद जी मंगल कारी नटराज शंकर भगवान हमेशा हमे पवित्र करे तथा रक्षा करें ।

लक्ष्मीस्ते सदने सदा निवसतां चित च चिन्तामणिः

स्वर्धेनुस्तव गोकुले सुरतरुश्चारामभूमौ तव ।

वाणी ते वदने दया नयनयोर्दानं करे तेऽन्वहं
विष्णुश्चेतसि ते मतिश्च सुकृते कीर्तिश्च लोकत्रये ॥38॥

पदच्छेदः- लक्ष्मीस्ते सदने सदा निवसतां चित च चिन्तामणिः स्वर्धेनुस्तव गोकुले सुरतरुश्चारामभूमौ तव वाणी ते वदने दया नयनयोर्दानं करे तेऽन्वहं विष्णुश्चेतसि ते मतिश्च सुकृते कीर्तिश्च लोकत्रये

अनव्य- लक्ष्मीस्ते-वह लक्ष्मी, सदनेसदा-घर मे सदैव, निवसतां-निवास करती है, चित च-और चित्त मे, चिन्तामणिः-चिंतामणि(सभी कामनाओं को पूर्ण करने की सामर्थ्य रखनेवाली शक्ति),स्वर्धेनुस्तव-अपनी गायों के साथ, गोकुले- गोकुल मे, सुरतरु- गोकुल मे, आरामभूमौ-आराम भूमि, तव-तुम्हारे, वाणी-वचन, ते वदने-मुख, दया-करुणा, नयनयोर्दानं करे तेऽन्वहं विष्णुश्चेतसि ते मतिश्च सुकृते कीर्तिश्च लोकत्रये

भावार्थ-वह लक्ष्मी जो घर मे सदैव निवास करती है और चित्त मे चिंतामणि(सभी कामनाओं को पूर्ण करने की सामर्थ्य रखनेवाली शक्ति) अपनी गायों के साथ गोकुल मे गोकुल मे आराम भूमि, तुम्हारे वचन मुख करुणा।

इन्दु कैरविणीव कोकपटरीवाम्भोजिनीबान्धवं
मेघं चातकमण्डलीव मधुपश्रेणीव पद्माकरम् ।
माकन्दं पिकसुन्दरीच रमणीवात्मेश्वरं प्रोषितं
चैतोवृत्तिरियं मम क्षितिपते त्वां द्रष्टुप्लुत्कण्ठते ॥39॥

पदच्छेदः-इन्दु कैरविणीव कोकपटरीव अम्भोजिनी इव बान्धवं मेघं चातकमण्डलीव मधुप श्रेणीव पद्माकरम् माकन्दं पिकसुन्दरी च रमणीव आत्मेश्वरं प्रोषितं चैतोवृत्तिरियं मम क्षितिपते त्वां द्रष्टुम् प्लुत्कण्ठते

अनव्य- इन्दु कैरविणीव-चाँद कैर(काँटेदार झाड़ी जिसमें पत्तियाँ नहीं होतीं) की वीणा सम्मत

कोकपटरीव-कोक पटरी के समान, अम्भोजिनी इव-कमलिनी के समान, बान्धवं- सगे संबंधी, मेघं-बादल, चातकमण्डलीव-चातकमंडली के समान, मधुप-भ्रमण, श्रेणीव-कतार के समान, पद्माकरम्-पद्माकार माकन्दं- माकन्द, पिकसुन्दरी-सुंदर कोयल के समान, च रमणीव-रमणी के समान, आत्मेश्वरं-अपने ईश्वर को, प्रोषितं-भेजा गया, चैतोवृत्तिरियं मम- मेरे मन की वृति, क्षितिपते-पृथ्वी के पालक, त्वां-तुम्हें, द्रष्टुम्-देखने के लिए, प्लुत्कण्ठते-उत्कंठित

भावार्थ- जैसे कमलिनी चाँद को देखकर, चातक मेघ को देखकर, भवरा पुष्प को देखकर, कोयल वसंत को देखकर, हर्षित होते है वैसे ही हे पृथ्वी के पालक प्रभु तुम्हें देखने के लिए मेरा मन रमणी के समान उत्कंठित है।

इति पूर्वपुष्पाञ्जलिः।

अथ पञ्चतालोत्पत्तिनिरूपणमाह ।

सदाशिवमुखोद्भूतास्तालाः पञ्चविधाः स्मृताः ।

सद्योजातमुखात्पूर्वमृग्वेदाद्भवस्तथा ॥40॥

पदच्छेदः सदा शिव मुखो द्भूता स्तालाः पञ्चविधाः स्मृताः सद्योजात मुखात्पूर्वमृग्वेदाद्भवस्तथा

अनव्य-सदाशिवमुख-सदाशिव के मुख से उद्भूतास्तालाः-उत्पन्न ताल, पञ्चविधाः स्मृताः -पाँच प्रकार की मानी गयी है, सद्योजात- जिसका अभी कुछ ही समय पहले जन्म हुआ हो अर्थात एकदम से उत्पन्न, मुखात्-मुख से, पूर्व-पहले, ऋग्वेदा-ऋग्वेद से, उद्भवस्तथा-जन्म हुआ हो।

भावार्थ-सदाशिव सदा का अर्थ शास्वत और शिव का अर्थ शुद्धतम इस शब्द का प्रयोग शिव जी के लिए किया जाता है जिसका अर्थ सर्वोच्च शक्ति है, सदाशिव के रूप में शिव पांच मुख रूप मे हैं और साथ ही शिव दस हाथों के साथ हैं, सदाशिव शुद्धता और पूर्णता से सर्वोच्च युक्त की स्थिति है, सदाशिव के पांच मुख (पञ्चभूत (पंचतत्व या पंचमहाभूत) भारतीय दर्शन में सभी पदार्थों के मूल माने गए हैं। अम्बर, वायु, अग्नि, जल तथा पृथ्वी-यह पंचमहाभूत माने गए हैं जिनसे सृष्टि का निर्माण हुआ है) को प्रदर्शित करते हैं। शिव ही आदि शक्ति, आदि योगी हैं इसलिए वे सदाशिव हैं। सदा शिव के मुख से पाँच प्रकार की तालों का उद्भव माना गया है। सद्योजात ऋग्वेद के पूर्व से चच्चत्पुट ताल जननी चाहिए।

तस्माचच्चत्पुटो ज्ञेयः कान्तिोंक्षीरवर्णकः।

ब्रह्मजातिसमाख्यातो गोपुच्छ इति संज्ञकः ॥41॥

पदच्छेदः- तस्माचच्चत्पुटो ज्ञेयः कान्तिोंक्षीरवर्णक ब्रह्मजातिसमाख्यातो गोपुच्छ इति संज्ञकः

अनव्य- तस्मात-उससे, चच्चत्पुटो-चच्चत्पुट ताल ज्ञेयः- जानना चाहिए,कान्तिोंक्षीरवर्णक-दूध देने वाली गाय की कांति सा, ब्रह्मजाति-ब्राह्मण जाति, समाख्यातो-मे आख्यात, गोपुच्छ-गाय की पुंछ के समान, इति संज्ञकः के जैसी संज्ञा।

भावार्थ- चच्चत्पुट नामक ताल को ब्राह्मण जाति का माना जाता है तथा इसकी आभा गाय केदूध के समान है, तथा इसकी यति गौपुच्छा (गाय की पुंछ के समान आकार वाली)है।

वामदेवे दक्षिणे च मुखे याजुषसम्भवम्

तस्माचाञ्चपुटाख्यं (?) हि ताल क्षत्रियजातिकः ॥42॥

पदच्छेदः वामदेवे दक्षिणे च मुखे याजुषसम्भवम् तस्माचाञ्चपुटाख्यं (?) हि ताल क्षत्रियजातिकः

अनव्य- वामदेवे दक्षिणेच- वामदेव के दक्षिण मे, मुखे याजुषसम्भवम्- मुख से यजुर्वेद, तस्माचाञ्चपुटाख्यं-उससे चाञ्चपुट, हि ताल-ताल का, क्षत्रियजातिकः-क्षत्रिय जाति का

भावार्थ- वामदेव के दक्षिण मुख से तथा यजुर्वेद से चाञ्चपुट नाम के ताल की उत्पत्ति मानी जाती है जिसे क्षत्रिय जाति की ताल माना जाता है।

पिपीलिका इति ज्ञेया वर्णकुङ्कुमकेसरी।

दक्षिणे यजुषामाहुर्नारदेन प्रकीर्तितः॥43॥

पदच्छेदः पिपीलिका इति ज्ञेया वर्ण कुङ्कुम केसरी दक्षिणे यजुषामाहुर्नारदेन प्रकीर्तितः

अनव्य- पिपीलिका इति ज्ञेया- चींटी की भांति का आकार, वर्णकुङ्कुमकेसरी-दक्षिण दिशा के लिए पीला, केसरी और लाल रंग उपयुक्त माना जाता है, दक्षिणे- दक्षिण दिशा, यजुषामाहुर्नारदेन- यजुर्वेद को नारद के द्वारा कहा गया है, प्रकीर्तितः- कहा गया है।

भावार्थ- पिपीलिका के आकार व दक्षिण दिशा की आभा पीला, लाल, केसरी यह सब यजुर्वेद से उत्पन्न होते है ऐसा नारद का मत है।

अघोरे पश्चिमे संज्ञे मुखे जातो ह्यथर्वणः ।

षट्टितापुत्रकस्तालस्तस्मादुद्भवयिष्यते (?) ॥44॥

पदच्छेदः अघोरे पश्चिमे संज्ञे मुखे जातो ह्यथर्वणः षट्टितापुत्रकस्तालस्तस्मादुद्भवयिष्यते

अनव्य- अघोरे-शिव का भयानक रूप, पश्चिमे-पश्चिम दिशा, संज्ञे- की संज्ञा देते है, मुखे जातो -मुख से उत्पन्न, ह्यथर्वणः-निश्चय ही अर्थव, षट्टितापुत्रकस्तालस्तस्मात्- षट्टितापुत्रक ताल, उदद्भवयिष्यते- उद्भव होता है।

भावार्थ- पश्चिम मुख (सूर्य के अस्त होने की दिशा) तथा अर्थवेद से उत्पन्न ताल षट्पितापुत्रक है।

वैश्यजातिरिति प्रोक्तः कनकाम इति स्मृतः ।

मुरजा इति नामाख्यं नारदेन प्रशंसितम् ॥45॥

पदच्छेदः-वैश्यजातिरिति प्रोक्तः कनकाम इति स्मृतः मुरजा इति नामाख्यं नारदेन प्रशंसितम्

अनव्य- वैश्यजातिरिति प्रोक्तः-वैश्य जाति ऐसा कहा गया है, कनकाम इति स्मृतः-कनकाभ (सोने सी चमकवाला) ऐसा याद किया जाता है, मुरजा इति-मुरज जैसा, नामाख्यं- नाम से, नारदेन- नारद के द्वारा, प्रशंसितम्-प्रसंशित

भावार्थ- इस ताल की जाति वैश्य मानी जाती है तथा इसकी आभा (चमक) सोने की भांति है नारद द्वारा इसका नाम मुरज प्रशंसित (रखा गया) किया गया है।

तत्पुरुषेत्युत्तरे च मुखे सामवेदोद्भवं तथा।

सम्पद्वेष्टिकतालोऽयं तस्मात्सम्भवमुच्यते (?) ॥46॥

पदच्छेदः-तत्पुरुषेत्युत्तरे च मुखे सामवेदोद्भवं तथा सम्पद्वेष्टिकतालोऽयं तस्मात्सम्भवमुच्यते

अनव्य- तत्पुरुषेत्युत्तरे-तत्पुरुष ऐसा उत्तर मे, च मुखे-और मुख मे, सामवेदोद्भवं तथा-सामवेद से उद्भव, सम्पद्वेष्टिकतालोऽयं- सम्पद्वेष्टिक ताल, तस्मात्सम्भवमुच्यते- उससे संभव कहा जाता है।

भावार्थ- सदाशिव तत्पुरुष नाम के उत्तर मुख से तथा सामवेद से उत्पन्न होने वाला ताल सम्पद्वेष्टिकहै।

गान्धर्वमिति संज्ञं च मणिवर्णप्रशंसितम्।

रिगमा इति संज्ञं तु ऋषिभिः प्रतिपादितम् ॥47॥

पदच्छेदः- गान्धर्वमिति संज्ञं च मणिवर्णप्रशंसितम् रिगमा इति संज्ञं तु ऋषिभिः प्रतिपादितम्

अनव्य-गान्धर्वमिति संज्ञं च -गन्धर्व इस संज्ञक, मणिवर्णप्रशंसितम्-मणिवर्ण से प्रसंशित, रिगमा इति संज्ञं- रिगमा इस संज्ञा को, तु ऋषिभिः प्रतिपादितम्- ऋषियों के द्वारा बताया गया है।

भावार्थ- इस ताल का नाम या जाति गन्धर्व है यह रत्न के समान चमक वाली ताल है । ऋषियों के द्वारा इसकी संज्ञा रिगमा(ऋषभ-गांधार-मध्यम) कही गयी है।

ईशानोर्ध्वमुखे जातः शास्त्रागमसमन्वितः ।

तस्मादुद्भव उद्धट्टस्तालोऽयं नामतः क्रमात् ॥48॥

पदच्छेदः-ईशानोर्ध्वमुखे जातः शास्त्रागमसमन्वितः तस्मादुद्भव उद्धहस्तालोऽयं नामतः क्रमात्

अनव्य- ईशानोर्ध्वमुखे जातः-ईशान दिशा में ऊपर मुख्य से उत्पन्न, शास्त्रागमसमन्वितः-शास्त्र व आगम से समन्वित, तस्मादुद्भव-उससे उद्भव, उद्धहस्तालोऽयं-यह ताल, नामतः क्रमात्-नाम के क्रम से

भावार्थ- वेदों व शास्त्रों से समन्वित ईशान दिशा जो ऊर्ध्वमुखी है जिससे उद्धट्ट ताल उत्पन्न होती है।

नानाजातिनीलवर्णो यतिः समयतिः क्रमात् ।

रुद्रपञ्चमुखेश्यश्च तालाः पञ्चविधा मताः ॥49॥

पदच्छेदः- नानाजातिनीलवर्णो यतिः समयतिः क्रमात् रुद्रपञ्चमुखेश्यश्च तालाः पञ्चविधा मताः

अनव्य- नानाजातिनीलवर्णो- विभिन्न प्रकार की व नील वर्ण, यतिः समयतिः- विराम के समान, क्रमात्-क्रम से, रुद्रपञ्चमुखेश्यश्च-पञ्चमुखी रुद्र, तालाः पञ्चविधा मताः-ताल पञ्च प्रकार की है।

भावार्थ-उद्धट्ट ताल विभिन्न प्रकार जातियों वाली है अत: इसकी कोई विशेष जाति नहीं है। इसका नील वर्ण है, यति समयति है, इस प्रकार सदा शिव रुद्र के पाँच मुख जो अलग अलग दिशाओं को संबोधित करते हुए पाँच मुखो से उत्पन्न पाँच ताल कही गयी है।

ब्रह्महा च सुरापानी स्वर्णस्तेयी च तल्पगः ।

तत्संयोगी पञ्चमश्च येऽतिपातकिनः स्मृताः॥50॥

पदच्छेदः- ब्रह्महा च सुरा पानी स्वर्णस्तेयी च तल्पगःतत्संयोगी पञ्चमश्च येऽतिपातकिनः स्मृताः

अनव्य- ब्रह्महा-ब्राह्मण की हत्या करने वाला, च-और, सुरापानी- सूरा (मदिरा) पान करने वाला, स्वर्णस्तेयी-स्वर्ण की चोरी करने वाला, च तल्पगः-गुरु पत्नी का गमन करने वाला, तत्संयोगी-पापों मे साथ देने वाला, पञ्चमश्च-चारों संसर्ग कर्मो मे साथ देने वाला पांचवा व्यक्ति, येऽतिपातकिनः- महापापी कलाएगा, स्मृताः अक्षयम है।

भावार्थ- ब्रह्महत्या (ब्रह्म हत्या का तात्पर्य है कि सामाजिक, आर्थिक, मानसिक व शारीरिक रूप से पहुचाया हुआ आघात ब्रह्म हत्या के समान ही कहलाया जाएगा), सूरा (मदिरा) पान करने वाला, चोरी करने वाला, गुरूपत्नी का गमन करने वाला तथा इन सभी चार महा पापों मे संसर्ग या पापों मे साथ देने वाला व्यक्ति पंचवा महापापी कलाएगा जो कि अक्षयम है।

तद्दोषपरिहारार्थं प्रायश्चित्तमुदीरितम् ।

गणैनन्दीश्वराद्यैश्च ऋषिभिर्नारदादिभिः ॥51॥

पदच्छेदः तद्दोष परिहारार्थं प्रायश्चित्तम उदीरितम् गणैनन्दीश्वराद्यैश्च ऋषिभिर्नारदादिभिः

अनव्य- तद्दोष परिहारार्थं-उस दोष के निराकरण के लिए, प्रायश्चित्तम उदीरितम् -प्रयशचित दिया गया है, गणैनन्दीश्वराद्यैश्च-गण नंदीऔर ईश्वर आदि, ऋषिभिर्नारदादिभिः-नारद आदि ऋषियों के द्वारा

भावार्थ- उस दोष के परिहार के लिए प्रायश्चितका विधान होता है, जो नंदी- गणों ऋषियों व नरदादि के द्वारा बताया गया है।

आदितालादितालानामेकोत्तरशतं क्रमात् ।

शृण्वतां पातकहरं राज्ञां ऋतुफलं लभेत् (?) ॥52॥

पदच्छेदः-आदि तालादि तालानाम् एकोत्तरशतं क्रमात् शृण्वतां पातकहरं राज्ञां ऋतुफलं लभेत्

अनव्य- आदि तालादि तालानाम्-आदि तालों के नाम, एकोत्तरशतं क्रमात्- एक सौ एक तालों के नाम क्रम से, शृण्वतां-सुनने से, पातकहरं-पातक को हरने वाला, राज्ञां-राजाओं का, ऋतुफलं-ऋतु के फल लभेत्- को प्राप्त करने वाला।

भावार्थ- एक सौ एक तालों के नाम जिनका वर्णन नारद द्वारा किया गया है उनको सुनने मात्र से पापों का नाश हो जाता है। और राजा को ऋतु फल की प्राप्ति होती है।

राज्याभिवृद्धिसन्तानं रणे शत्रुविनाशनम् ।

सौभाग्यारोग्यमतुलं कामशास्त्रविवर्धनम् ॥53॥

पदच्छेदः- राज्याभिवृद्धि सन्तानं रणे शत्रु विनाशनम् सौभाग्य आरोग्य अतुलं काम शास्त्र विवर्धनम्

अनव्य- राज्याभिवृद्धिसन्तानं-राज्य की वृद्धि तथा सन्तान की, रणे-युद्ध भूमि, शत्रुविनाशनम्-शत्रु का विनाश करने वाला, सौभाग्य आरोग्य- सौभाग्य व आरोग्य, अतुलम्- अत्यधिक,कामशास्त्रविवर्धनम्- काम शस्त्र को बढ़ाने वाला।

भावार्थ- इन तालों को सुनने मात्र से राज्य मे उन्नति, सन्तान की वृद्धि, युद्ध भूमि मे शत्रु का विनाश, सौभाग्य, आरोग्य व अत्यधिक काम शास्त्र की वृद्धि होती है।

लास्याङ्गे संपरिज्ञानं कलावेदिनमुत्तमम् (?)।

सर्वसङ्गीतसुभगं नृपाणां कीर्तिवर्धनम् ॥54॥

पदच्छेदः- लास्याङ्गे संपरिज्ञानं कलावेदिनमुत्तमम् सर्वसङ्गीतसुभगं नृपाणां कीर्तिवर्धनम्

अनव्य- लास्याङ्गे संपरिज्ञानं-लास्य के अंग का पूर्ण ज्ञान, कलावेदिनमुत्तमम्-सर्वोतम कलाकार, सर्वसङ्गीतसुभगं-सभी प्रकार के संगीत को जानने वाला, नृपाणां- राजा ,कीर्तिवर्धनम्- की किर्ति को बढ़ाने वाला

भावार्थ-लास्य का ज्ञान, कला के जानकार के लिए सर्वोत्तम होता है, तथा संगीत की पूरी समझ राजाओं की किर्ति को बढ़ाने वाली होती है।

इति श्रीनारदकृतौ सङ्गीतमकरन्दे नृत्ताध्याये नाट्यशालासभासभापतिपात्रपुष्पांज्जलि पञ्चतालोत्पत्तिनिरूपणं नाम प्रथमः पादः ।

इस प्रकार नारद कृत संगीत मकरंद के नृत्याध्याय प्रथम पाद के अंतर्गत वर्णित नाट्यशाला सभा सभापति पुष्पांजलि पञ्चताल उत्पत्ति, नाम का निरूपण के साथ अध्याय की समाप्ति के साथ पूर्ण होता है।

*****

नृत्याध्याये द्वितीयः पादः।

सदाशिवो हरिब्रह्मा भरतः कश्यपो मुनिः।

मतङ्गो यश्च दुर्गा च शक्तिशार्दूलकोहलाः ॥1॥

पदच्छेदः सदाशिवो हरि ब्रह्मा भरतः कश्यपो मुनिः मतङ्गो यश्च दुर्गा च शक्ति शार्दूल कोहलाः

अनव्य- सदाशिवो-सदाशिव बहुधा मुखलिंग के रूप में द्रष्टव्य है, जिनकी मुख संख्या एक से पांच है यह पाँच मुख, ईशान, तत्पुरुष, वामदेव, अघोरा और सत्योजता के रूप में जाने जाते हैं, यह पाँच मुख चारों दिशाओं की ओर और निष्कल परशिव से ऊपर की ओर निकलते है, हरि- हिन्दुओं के भगवान जो सृष्टि का पालन करते है, ब्रह्मा- ईश्वर शिवपुराण के अनुसार ब्रह्म ही सत्य है वही अविकारी परमेश्वर है, भरतः-नाट्य शास्त्र के रचना कार, कश्यपो मुनिः कश्यप मुनि, मतङ्गो-मतंग मुनि, यश्च दुर्गा-दुर्गा, च शक्ति -शक्ति,शार्दूल कोहलाः-शार्दूल और कोहल

भावार्थ-सदाशिव बहुधा मुखलिंग के रूप में द्रष्टव्य है, जिनकी मुख संख्या एक से पांच है यह पाँच मुख, ईशान, तत्पुरुष, वामदेव, अघोरा और सत्योजता के रूप में जाने जाते हैं, यह पाँच मुख चारों दिशाओं की ओर और निष्कल परशिव से ऊपर की ओर निकलते है, हिन्दुओं के भगवान जो सृष्टि का पालन करते है, शिवपुराण के अनुसार ब्रह्म ही सत्य है वही अविकारी परमेश्वर है, नाट्य शास्त्र के रचना कार भरतमुनि कश्यप मुनि, मतंग मुनि, दुर्गा, शार्दूल और कोहल इत्यादि सब ही को नमस्कार है।

हनूमांस्तुम्बुरुश्चैव अङ्गदश्चैव नारदः ।

एते साहित्यसर्वज्ञा बुधास्तालान्प्रचक्रमुः ॥2॥

पदच्छेदः हनूमांस्तुम्बुरुश्चैव अङ्गदश्चैव नारदः एते साहित्यसर्वज्ञा बुधास्तालान्प्रचक्रमुः

अनव्य हनूमांस्तुम्बुरुश्चैव- हनुमान और तम्बुरु, अङ्गदश्चैव नारदः-अंगद और नारद, एते साहित्यसर्वज्ञा-सभी साहित्य के जानकार, बुधास्तालान-तालों के ज्ञाता, प्रचक्रमुः-कहे गए है।

भावार्थ- हनुमान और तम्बुरु, अंगद और नारद, यह सभी साहित्य के जानकार तालों के ज्ञाता कहे गए है।

एकोत्तरशतताला उच्यन्ते ।

चश्चत्पुटश्चाचुपुटः षपितापुत्रकस्तथा।

सम्पद्वेष्टिक उद्घ आदितालश्च दर्पणः ॥3॥

पदच्छेदः- चच्चत्पुट श्चाचुपुटः षट्पितापुत्रक स्तथा सम्पद्वेष्टिक उद्घ आदिताल श्च दर्पणः

भावार्थ-चच्चत्पुट, चाचपुट, षट्पितापुत्रक, सम्पद्वेष्टिक, उद्धट्ट, आदिताल, दर्पण

चर्चरी सिंहलीलश्च कन्दर्पः सिंहविक्रमः।

श्रीरङ्गो रतिलीलश्च रङ्गतालः परिक्रमः॥4॥

पदच्छेदः- चर्चरी सिंहलील श्च कन्दर्पः सिंहविक्रमः श्रीरङ्गो रतिलील श्च रङ्गतालः परिक्रमः

भावार्थ-चर्चरी, सिंहलील, कन्दर्प, सिंहविक्रम, श्रीरंग, रतिलील, रंगताल, परिक्रम

हंसलीलो वर्णभिन्नो राजचूडामणिस्तथा।

प्रत्यङ्गो गजलीलश्च त्रिभिन्नो वीरविक्रमः ॥5॥

पदच्छेदः- हंसलीलो वर्णभिन्नो राजचूडामणि स्तथा प्रत्यङ्गो गजलील श्च त्रिभिन्नो वीरविक्रमः

भावार्थ- हंसलील, वर्णभित्र, राजचूड़ामणि, प्रत्यंग, गजलील, त्रिभिन्न, वीरविक्रम

रङ्गड्यूतो राजतालः सिंहविक्रीडितस्तथा ।

वनमाली वर्णतालस्ततो रङ्गप्रदीपकः ॥6॥

पदच्छेदः-रङ्गड्यूतो राजतालः सिंहविक्रीडित स्तथा वनमाली वर्णताल स्ततो रङ्गप्रदीपकः

भावार्थ-रंगद्योतेन, राजताल, सिंहविक्रीडित, वनमाली, वर्णताल, रङ्गप्रदीप

हंसनादः सिंहनादो मल्लिकामोदस नकः ।

भवेच्छरभलीलश्च रङ्गाभरण एव च ॥ 7॥

पदच्छेदः-हंसनादः सिंहनादो मल्लिकामोदस नकः भवेच्छ रभलील श्च रङ्गाभरण एव च

भावार्थ-हंसनाद, सिंहनाद, मल्लिकामोद, शरभलील, रंगाभरण

ततस्तुरङ्गवि(ब)ल्ली स्यात्ततस्तु सिंहनन्दनः ।

जयश्री विजयानन्दः प्रतितालो द्वितीयकः ॥8॥

पदच्छेदः- तत स्तुरङ्गवि(व)ल्ली स्यात्त तस्तु सिंहनन्दनः जयश्री विजयानन्दः प्रतितालो द्वितीयकः

भावार्थ-तुरंगलील, सिंहनन्दन, जयश्री, विजयनन्द, प्रतिताल, द्वितीयक

मकरन्दः कीर्तितालो विजयो जयमङ्गलः ।

राजविद्याधरो मण्ठो जयतालः कुडुक्कः ॥9॥

पदच्छेदः-मकरन्दः कीर्तितालो विजयो जयमङ्गलः राजविद्याधरो मण्ठो जयतालः कुडुक्कः

भावार्थ- मकरन्द, कीर्तिताल, विजय, जयमङ्गल, राजविद्याधर, मण्ठ, जयताल, कुडुक्क

ततो निःसारिणी क्रीडा मल्लतालश्च दीपकः।

अनङ्गलीलो विषमो नान्दीतालो मुकुन्दकः ॥10॥

पदच्छेदः- ततो निःसारिणी क्रीडा मल्लताल श्च दीपकःअनङ्गलीलो विषमो नान्दीतालो मुकुन्दकः

भावार्थ- निःसारिणी, क्रीडा, मल्लताल, दीपक, अङ्गलील, विषम, नान्दीताल, मुकुन्दक

एकतालश्च कङ्कालश्चतुस्तालश्च दोम्बुलिः ।

अभङ्गो रायभङ्कालस्तथैव लघुशेखरः ॥11॥

पदच्छेदः-एकताल श्च कङ्काल श्च तुस्ताल श्च दोम्बुलिःअभङ्गो रायभङ्काल स्तथैव लघुशेखरः

भावार्थ- एकताल,कङ्काल, दोम्बुलि,अभङ्गो, रायभङ्काल, लघुशेखर

प्रतापशेखरश्चान्यो जगझम्पश्चतुर्मुखः।

झम्पश्च प्रतिमण्ठश्च तथा तालस्तृतीयकः ॥12॥

पदच्छेदः-प्रतापशेखर श्चान्यो जगझम्प श्चतुर्मुखः झम्प श्च प्रतिमण्ठ श्च तथा तालस्तृतीयकः

भावार्थ- प्रतापशेखर, जगझम्प चतुर्मुख, झम्प, प्रतिमण्ठ तथा तृतीय

तस्मादुपरि विज्ञेयो वसन्तललितो रतिः।

करुणाख्यायितश्चैव षट्तालो वर्धनस्तथा ॥13॥

पदच्छेदः-तस्मादुपरि विज्ञेयो वसन्त ललितो रतिः करुणा ख्यायित श्चैव षट्तालो वर्धनस्तथा

भावार्थ- वसन्त, ललित, रति, करुणा, षट्ताल, वर्धन

ततो वर्णयतिश्चैव रायनारायणस्तथा ।

मदनश्चैव विज्ञेयः पार्वतीलोचनस्तथा ॥14॥

पदच्छेदः-ततो वर्ण यति श्चैव रायनारायण स्तथा मदन श्चैव विज्ञेयः पार्वतीलोच नस्तथा

भावार्थ-वर्ण, यति, रायनारायण, मदन, विज्ञेय, पार्वतीलोच

ततो गारुगितालः स्यात्ततः श्रीनन्दनो जयः।

लीलाविलोकितश्चान्यो ललितप्रियमेव च ॥15॥

पदच्छेदः-ततो गारुगि तालः स्यात्ततः श्रीनन्दनो जयःललितप्रिय मेव च

भावार्थ- गारुगि ताल, श्रीनन्दन, जय, ललितप्रिय

जनको बद्धलक्ष्मीशो रागवर्धनसंज्ञकः ।

उत्सवश्चेति तालानामेकेनाभ्यधिकं शतम् ॥16॥

पदच्छेदः-जनको बद्धलक्ष्मीशो रागवर्धन संज्ञकः उत्सव श्चेति ताला नामेकेना भ्यधिकं शतम्

भावार्थ- जनक, बद्धलक्ष्मी, रागवर्धन, उत्सव

तल्लक्षणं हि वक्ष्येऽहं मुनिनारद इत्यसौ।

नारद मुनि द्वारा तालों के लक्षण

अथताललक्षणमाह ।

ताले चच्चत्पुटे ज्ञेयं गुरुद्वन्द्वं लघुप्लुतम् ॥17॥

पदच्छेदः- ताले चच्चत्पुटे ज्ञेयं गुरु द्वन्द्वं लघु प्लुतम् (ऽऽ।ऽ̀)

भावार्थ- ताल चच्चत्पुट मे क्रमशः दो लघु (ऽऽ) एक गुरु (।) व एक प्लुत (ऽ̀) होता है।

गुरुर्लघुर्गुरुश्चैव भवेचाचपुटाभिधे।

पदच्छेदः गुरुर्लघु र्गुरु श्चैव भवे चाचपुटाभिधे (ऽ।।ऽ)

भावार्थ- ताल च्चाचपुट मे क्रमशः एक गुरु (ऽ), दो लघु (।।) व एक गुरु (ऽ) होता है।

पलगा गलपाश्चैव षट्पितापुत्रकस्तथा ॥18॥

पदच्छेदः- पलगा गलपाश्चैव षट्पितापुत्रक स्तथा (ऽ̀।ऽऽ।ऽ̀)

भावार्थ-ताल षट्पितापुत्रक मे क्रमशः एक प्लुत (ऽ̀), एक लघु (।), दो गुरु (ऽऽ), एक लघु (।), व एक प्लुत (ऽ̀) होता है।

मगणः स्यात्प्लुतायन्तं (:) संपद्वेष्ट्याख्यसंज्ञके।

पदच्छेदः- मगणः स्यात प्लुतायन्तं संपद्वेष्ट्या ख्यसंज्ञके (ऽ̀ऽऽऽऽ̀)

भावार्थ- ताल संपद्वेष्टाक मे क्रमशः एक प्लुत(ऽ̀), तीन गुरु (ऽऽऽ) व एक प्लुत (ऽ̀), होता है।

उद्ध(द्ध)हो मगणस्त्वेक आदितोऽतिलघुः स्मृतः ॥19॥

पदच्छेदः- उद्ध(द्ध)हो मगण स्त्वेक आदि तोऽति लघुः स्मृतः

भावार्थ- ताल उद्धट्ट मे एक मगण अर्थात (ऽऽऽ) होते है। आदि ताल मे एक लघु (।) होता है।

दर्पणः स्याद्रुतद्वन्द्वं गुरुश्चैव प्रकीर्तितः ।

पदच्छेदः- दर्पणः स्याद द्रुत द्वन्द्वं गुरु श्चैव प्रकीर्तितः (००ऽ)

भावार्थ- ताल दर्पण मे क्रमशः दो द्रुत (००)व एक गुरु (।) होता है।

अष्टगुर्वक्रचर्चर्या विरामं च द्रुतौ लघुः ॥20॥

पदच्छेदः-अष्ट गुर्व क्रचर्चर्या विरामंच द्रुतौ लघुः (००।◡,००।◡,००।◡,००।◡,००।◡,००।◡,००।◡,००।◡)

भावार्थ- ताल चर्चरी मे क्रमशः दो द्रुत (००) एक विराम इस क्रम को आठ बार रखा गया है।

सिंहलीले विधातव्यं लघ्वाद्यन्तं द्रुतत्रयम् ।

पदच्छेदः- सिंहलीले विधातव्यं लघ्वाद्यन्तं द्रुत त्रयम् (।०००।)

भावार्थ- सिंहलील ताल मे क्रमश: आरंभ मे एक लघु (।) अंत मे एक लघु (।) और बीच मे तीन द्रुत (०००) होते है।

द्रुतद्वयं-कारश्च कंदर्प परिकीर्तितः ॥21॥

पदच्छेदः- द्रुत द्वयं-कारश्च कंदर्प परिकीर्तितः (००।ऽऽ)

भावार्थ-कंदर्प ताल मे क्रमश: दो द्रुत (००), एक यगण अर्थात एक लघु (।), दो गुरु (ऽऽ) होते है।

सिंहविक्रमतालस्तु मगणो लपलो गपौ।

पदच्छेदः- सिंहविक्रम तालस्तु मगणो लपलो गपौ। (ऽऽऽ।ऽ।ऽऽ)

भावार्थ- सिंहविक्रम ताल मे क्रमश: एक मगण अर्थात तीन गुरु (ऽऽऽ), फिर एक लघु,एक (।) एक प्लुत (ऽ), एक लघु(।), एक गुरु(ऽ), एक प्लुत(ऽ) होता है।

श्रीरङ्गसंज्ञके ताले सगणो लगपो मतः ॥22॥

पदच्छेदः- श्रीरङ्ग संज्ञके ताले सगणो लगपो मतः(।।ऽ।ऽऽ)

भावार्थ-श्रीरंग ताल मे क्रमश: एक सगण अर्थात दो लघु (।।), एक गुरु(ऽ),फिर एक लघु (।), एक गुरु(ऽ),एक प्लुत (ऽ) होता है।

रतिलीले विधातव्यं लध्वोर्मध्ये गुरुद्वयम्।

पदच्छेदः- रतिलीले विधा तव्यं लध्वो र्मध्ये गुरु द्वयम् (।ऽऽ।)

भावार्थ- रतिलील ताल मे क्रमश: एक लघु (।), मध्य मे दो गुरु (ऽऽ)फिर एक लघु (।) होते है।

चत्वारो रङ्गताले स्याद्रुतौ(ता)गुरुस्ततः परम् ॥23॥

पदच्छेदः- चत्वारो रङ्गताले स्याद्रुतौ (ता) गुरुस्ततः परम् (००००ऽ)

भावार्थ-रंगताल मे क्रमश: चार द्रुत (००००) और एक गुरु (ऽ) होता है।

परिक्रमे द्रुतद्वन्द्वं यगणस्तदनन्तरम्

पदच्छेदः- परिक्रमे द्रुत द्वन्द्वं यगण स्तदनन्तरम् (००।ऽऽ)

भावार्थ- परिकम ताल मे क्रमश: दो द्रुत (००), फिर यगण अर्थात एक लघु, दो गुरु (।ऽऽ) होते है।

प्रत्यङ्गसंज्ञके ताले मगणः स्याल्लघुद्वयम् ॥24॥

पदच्छेदः- प्रत्यङ्ग संज्ञके ताले मगणः स्याल लघु द्वयम् (००।ऽऽ)

भावार्थ- प्रत्यंग ताल मे क्रमश: एक मगण अर्थात तीन लघु (ऽऽऽ), दो लघु (ऽऽ) होते है।

लचतुष्कं विरामान्त्यं गजलीले प्रकीर्तितम्

पदच्छेदः- ल चतुष्कं विरामान्त्यं गजलीले प्रकीर्तितम् (।।।।⌣)

भावार्थ- गजलील ताल ताल मे क्रमश: चार लघु (।।।।), और अंत मे एक विराम (⌣) होता है।

लघुर्गुरुः प्लुतश्चैव त्रिभिन्ने परिकीर्तितः ॥25॥

पदच्छेदः- लघु र्गुरुः प्लुत श्चैव त्रिभिन्ने परिकीर्तितः

भावार्थ-त्रिभिन्न ताल मे क्रमश: एक लघु (।), एक गुरु(ऽ), व एक प्लुत (ऽ) होता है।

वीरविक्रमताले तु लौ द्रुतौ च गुरुस्तथा ।

पदच्छेदः- वीरविक्रम ताले तु लौ द्रुतौ च गुरुस्तथा (।००ऽ)

भावार्थ- वीरविक्रम ताल मे क्रमश: एक लघु (।), दो द्रुत (००) और एक गुरु (ऽ)होता है।

सविरामं लघुद्वन्द्वं ताले स्याद्धंसलीलके ॥26॥

पदच्छेदः- सविरामं लघु द्वन्द्वं ताले स्याध हंसलीलके (।।⌣)

भावार्थ- हंसलील ताल मे क्रमश: दो लघु (।।), एक विराम (।) होता है।

वर्णभिन्नाभिधे ताले द्रुतद्वन्द्वं लघुर्गुरुः ।

पदच्छेदः-वर्णभिन्ना भिधे ताले द्रुत द्वन्द्वं लघु र्गुरुः (००।ऽ)

भावार्थ- वर्णभिन्ना ताल मे क्रमश: दो द्रुत (००), एक लघु (।), और एक गुरु (ऽ) होता है।

राजचूडामणौ ताले द्रुतौ लश्च द्रुतौ लगः ॥27॥

पदच्छेदः- राजचूडामणौ ताले द्रुतौ लश्च द्रुतौ लगः (००।।।००ऽ।)

भावार्थ- राजचूडामणि ताल मे क्रमश: दो द्रुत (००), तीन लघु (।।।), दो द्रुत (००), एक गुरु (ऽ) और एक लघु (।), होता है।

रङ्गद्योतेन तालेन भगणो लप्लुतावपि।

पदच्छेदः- रङ्गद्योतेन तालेन भगणो ल प्लुता वपि (।।ऽऽऽ)

भावार्थ- रङ्गद्योतन ताल मे क्रमश: दो लघु (।।), दो गुरु (ऽऽ) व एक प्लुत (ऽ) होता है।

गपौ द्रुतौ गलो(लः)पश्च राजताले प्रकीर्तितः ॥28॥

पदच्छेदः- ग पौ द्रुतौ ग लो (लः)पश्च राजताले प्रकीर्तितः (ऽऽ००ऽ।ऽ)

भावार्थ- राजताल ताल मे क्रमश: एक गुरु (ऽ), एक प्लुत (ऽ), दो द्रुत (००), एक गुरु (ऽ), एक लघु (।), और एक प्लुत (ऽ) होता है।

द्विला पो गगलो(लः)पञ्चसिंहविक्रीडिते लपौ।

पदच्छेदः- द्विला पो गगलो (लः)पञ्चसिंहविक्रीडिते लपौ (।।ऽऽ।ऽऽ।ऽ)

भावार्थ-सिंहविक्रीडित ताल मे क्रमश: दो लघु (।।), एक प्लुत (ऽ), एक गुरु (ऽ), एक लघु (।), एक गुरु (ऽ), एक प्लुत (ऽ), एक लघु (।),एक प्लुत (ऽ) होता है।

द्वौ द्रुतौ लो द्रुतौ चैव वनमाली गुरुस्तथा ॥29॥

पदच्छेदः- द्वौ द्रुतौ लो द्रुतौ चैव वनमाली गुरु स्तथा (०००।००ऽ)

भावार्थ- वनमाली ताल मे क्रमश: चार द्रुत (००००), एक लघु (।), दो द्रुत (००), एक गुरु (ऽ) होता है।

गुरुर्लघुद्रुतौ गुश्च वर्णः स्याचतुरस्रके।

पदच्छेदः- गुरु र्लघु द्रुतौ गुश्च वर्णः स्या चतुरस्रके (ऽऽ।००ऽ)

भावार्थ-चतुरस्त्र ताल मे क्रमश: दो गुरु (ऽऽ) एक लघु (।), दो द्रुत (००), एक प्लुत (ऽ) होता है।

लघुद्रुतौ लघू गश्च तिस्रवर्णः प्रकीर्तितः ॥30॥

पदच्छेदः- लघु द्रुतौ लघू गश्च तिस्रवर्णः प्रकीर्तितः (।००।ऽ)

भावार्थ-तिस्रवर्ण ताल मे क्रमश: एक लघु (।), दो द्रुत (००), एक लघु (।), एक गुरु (ऽ) होता है।

प्रतितूर्यविरामान्त्यं मिश्राख्यो द्वादशद्रुताः।

प्लुतो गुरुद्रुतद्वन्द्वं गद्वयं लो गुरुस्तथा ॥ 31॥

पदच्छेदः- प्रतितूर्य विरामान्त्यं मिश्राख्यो द्वादश द्रुताः प्लुतो गुरुद्रुतद्वन्द्वं गद्वयं लो गुरुस्तथा (०००‿०००‿०००‿ऽऽ००ऽऽ।ऽ)

भावार्थ- मिश्रवर्ण ताल मे क्रमश: प्रत्येक चार द्रुत (००००) के बाद एक विराम (‿)को तीन बार लिया जाता है तत्पश्चात एक प्लुत (ऽ), एक गुरु (ऽ), दो द्रुत (००), दो गुरु (ऽऽ) एक लघु (।), एक गुरु (ऽ) होता है।

रङ्गप्रदीपताले स्यात्तगणाद्गप्लुतो यदि।

पदच्छेदः-रङ्गप्रदीप ताले स्यात् तगणा द्ग प्लुतो यदि (ऽऽ।ऽऽ)

भावार्थ- रङ्गप्रदीप ताल मे क्रमश: दो गुरु (ऽऽ), एक लघु (।), एक गुरु (ऽ), एक प्लुत (ऽ) होता है।

गप्लुतौ द्रुतयुग्मं च हंसनादे प्रकीर्तितः (तम्) ॥32॥

पदच्छेदः-गप्लुतौ द्रुत युग्मं च हंसनादे प्रकीर्तितः (ऽऽ००)

भावार्थ- हंसनाद ताल मे क्रमश: एक गुरु (ऽ), एक प्लुत (ऽ), दो द्रुत (००) होता है।

यगणो लगुरुश्चैव सिंहनादो निरूपितः ।

पदच्छेदः- यगणो ल गुरुश्चैव सिंहनादो निरूपितः (।ऽऽ।ऽ)

भावार्थ- सिंहनाद ताल मे क्रमश: एक लघु (।), दो गुरु (ऽऽ), एक लघु (।), एक गुरु (ऽ) होता है।

ताले स्यान्मल्लिकामोदे गद्वयं लचतुष्टयम् ॥33॥

पदच्छेदः- ताले स्यान्मल्लिकामोदे गद्वयं लचतुष्टयम् (ऽऽ।।।।)

भावार्थ-मल्लिकामोद ताल मे क्रमशः दो गुरु (ऽऽ), चार लघु (।।।।) होते है।

लघुद्रुतचतुष्कं स्याल्लघुः शरभलीलके ।

पदच्छेदः- लघु द्रुत चतुष्कं स्याल् लघुः शरभलीलके (।०००।)

भावार्थ- शरभलील ताल मे क्रमशः एक लघु (।), चार द्रुत (०००) एक लघु (।) होता है।

तगणो लो प्लुतौ गश्च रङ्गाभरणसंज्ञके ॥34॥

पदच्छेदः- तगणो लो प्लुतौ गश्च रङ्गाभरण संज्ञके (ऽऽ।।ऽऽ)

भावार्थ- रङ्गाभरण ताल मे क्रमशः दो गुरु (ऽऽ), दो लघु (।।), एक प्लुत (ऽ), एक गुरु (ऽ) होता है।

तुरङ्गलीलताले स्याद्रुतद्वन्द्वं लघुस्तथा।

पदच्छेदः- तुरङ्गलील ताले स्या द्रुत द्वन्द्वं लघु स्तथा (००।)

भावार्थ- तुरङ्गलील ताल मे क्रमशः दो द्रुत (००), एक लघु (।) होता है।

तपा लगद्रुतौ गालपलपालश्च लद्वयम् ॥35॥

निषद्वं (निःशब्द) लचतुष्कं स्यात्ताले स्यात्सिहनन्दने।

पदच्छेदः- त पालग द्रुतौ गा ल प ल पा ल श्च ल द्वयम् निषद्वं (निःशब्द) ल चतुष्कं स्यात्ताले स्यात्सिहनन्दने। (ऽऽ।ऽ।ऽ००ऽ।ऽ।ऽ।।। निशब्द।।।।)

भावार्थ-सिंहनन्दन ताल मे क्रमशः दो गुरु (ऽऽ), एक लघु (।), एक प्लुत (ऽ), एक लघु (।), एक गुरु (ऽ), दो द्रुत (००), एक गुरु (ऽ), एक लघु (।), एक प्लुत (ऽ), एक लघु (।), एक प्लुत (ऽ), तीन लघु (।।।) निशब्द चार लघु (।।।।) होते है।

रगणो लगुरुश्चैव जयश्रीरिति गण्यते ॥36॥

पदच्छेदः-रगणो लगुरुश्चैव जयश्रीरिति गण्यते (ऽ।ऽ।ऽ)

भावार्थ-जयश्री ताल मे क्रमशः एक गुरु (ऽ), एक लघु (।), एक गुरु (ऽ), एक लघु (।), एक गुरु (ऽ) होता है।

भवेयुर्विजयानन्दे लद्वयं गुरवस्त्रयः।

पदच्छेदः- भवेयुर्विजयानन्दे लद्वयं गुरवस्त्रयः (।।ऽऽऽ)

भावार्थ-विजयनन्दन ताल मे क्रमशः दो लघु (।।), तीन गुरु (ऽऽऽ) होते है।

ललितौ प्रतिताले स्याद्रतौ लश्च द्वितीयके ॥37॥

पदच्छेदः- ललितौ प्रतिताले स्याद्रतौ लश्च द्वितीयके (।००)

भावार्थ- प्रतिताल मे क्रमशः एक लघु (।), दो द्रुत (००) होते है।

मकरन्दे द्रुतद्वन्द्वं लघुनयमतो गुरुः ।

पदच्छेदः- मकरन्दे द्रुतद्वन्द्वं लघुनयमतो गुरुः (००।।।ऽ)

भावार्थ-मकरंद ताल मे क्रमश: दो द्रुत (००), तीन लघु (।।।) एक गुरु (ऽ) होता है।

लगी पगौ लपी गश्च कीर्तिताले प्रकीर्तितः ॥38॥

पदच्छेदः- लगौ पगौ लपौ गश्च कीर्तिताले प्रकीर्तितः (ऽ।ऽऽ।ऽ)

भावार्थ- कीर्तिताल मे क्रमश: एक गुरु (ऽ), एक लघु (।), एक प्लुत (ऽ), एक गुरु (ऽ), एक लघु (।), एक प्लुत (ऽ) होता है।

प्लुतो गश्च प्लुतो गश्च ताले विजयसंज्ञके।

पदच्छेदः- प्लुतो ग श्च प्लुतो ग श्च ताले विजयसंज्ञके (ऽऽऽऽ)

भावार्थ- विजय ताल मे क्रमश: एक प्लुत (ऽ), एक गुरु (ऽ), एक प्लुत (ऽ), एक गुरु (ऽ) होता है।

सकारश्च सकारश्च जयमङ्गलनाम च ॥39॥

पदच्छेदः-सकार श्च सकार श्च जयमङ्गलनाम च **(**।।ऽ।।ऽ**)**

भावार्थ-जयमङ्गल ताल मे क्रमश: दो लघु (।।), एक गुरु (ऽ), दो लघु (।।), एक गुरु (ऽ) होता है।

लघुवक्रो द्रुतौ ताले राजविद्याधराभिधे ।

पदच्छेदः- लघु वक्रो द्रुतौ ताले राजविद्याधराभिधे (।ऽ००)

भावार्थ-राजविद्याधर ताल मे क्रमश: एक लघु (।), एक गुरु (ऽ), दो द्रुत (००) होते है।

सकारो मण्ठताले स्यात्कल्पितं चचतुष्टयम् (?) ॥40॥

भारो रोधो गुरुद्वन्द्वं निःशब्दं मठतालके

अथवा नगणो जश्च लघुश्चैव प्रकीर्तितः॥41॥

पदच्छेदः- सकारो मण्ठताले स्यात्कल्पितं चचतुष्टयम् भारो रोधो गुरुद्वन्द्वं निःशब्दं मठतालके (।।ऽऽऽ)

भावार्थ- मण्ठताल ताल मे क्रमश: दो लघु (।।), एक गुरु (ऽ), दो गुरु (ऽऽ) होते है। अथवा एक नगण अर्थात तीन लघु (ऽऽऽ), हो सकते है।

जगणो लो द्रुतौ पश्च जयताले निरूपितः ।

पदच्छेदः- जगणो लो द्रुतौ पश्च जयताले निरूपितः (।ऽ।।००)

भावार्थ- जयताल मे क्रमश: एक लघु (।), एक गुरु (ऽ), दो लघु (।।), दो द्रुत (००) होते है।

द्रुतद्वयं लघुद्वन्द्वं भवेत्ताले कुडकके ॥42॥

पदच्छेदः- द्रुत द्वयं लघु द्वन्द्वं भवेत्ताले कुडक्कके (००।।)

भावार्थ- कुडक्क ताल मे क्रमश: दो द्रुत (००), दो लघु (।।), होते है।

लघुद्वन्द्वं विरामान्त्यं ताले निःसारके भवेत् ।

पदच्छेदः- लघु द्वन्द्वं विरामान्त्यं ताले निःसारके भवेत् (।।⏑)

भावार्थ- निःसारके ताल मे क्रमश: दो लघु (।।), एक विराम (⏑) होता है।

द्रुतद्वन्द्वं विरामान्त्यं क्रीडाताले प्रकल्पितम् ॥43॥

पदच्छेदः- द्रुत द्वन्द्वं विरामान्त्यं क्रीडाताले प्रकल्पितम् (००⏑)

भावार्थ- क्रीडा ताल मे क्रमश: दो द्रुत (००), एक विराम (⏑) होता है।

चन्दनिःसारुगीताले प्लुतमेवाभिधीयते।

सकारो गुरुलश्चैव त्रिभङ्गिरभिधीयते ॥44॥

पदच्छेदः-चन्दनिःसारुगी ताले प्लुत मेवा भिधीयते सकारो गुरु ल श्चैव त्रिभङ्गिर भिधीयते (।।ऽऽ।)

भावार्थ- त्रिभंगी ताल मे क्रमश: दो लघु (।।), दो गुरु (ऽऽ), एक लघु (।) होता है।

कोकिलप्रियताले स्याक्रमाद्गुरुलघुप्लुताः ।

पदच्छेदः- कोकिलप्रिय ताले स्या क्रमा द्व गुरु लघु प्लुताः (ऽ।ऽ)

भावार्थ- कोकिलप्रिय ताल मे क्रमश: एक गुरु (ऽ), एक लघु (।), एक प्लुत (ऽ) होता है।

ताले निःसारुके ज्ञेयो लघुश्चैव विधीयते (?) ॥45॥

श्रीकीर्तिसंज्ञके ताले गुरुद्वन्द्वं लघुद्वयम् ।

पदच्छेदः- ताले निःसारुके ज्ञेयो लघुश्चैव विधीयते श्रीकीर्ति संज्ञके ताले गुरु द्वन्द्वं लघु द्वयम् (ऽऽ।।)

भावार्थ-श्रीकीर्ति ताल मे क्रमश: दो गुरु (ऽऽ), दो लघु (।।) होते है।

भकारो बिन्दवो गुर्वोमध्ये स्याद्विन्दुमालिके ॥46॥

पदच्छेदः-भकारो बिन्दवो गुर्वो मध्ये स्याद्विन्दुमालिके (ऽ।।ऽ०)

भावार्थ-बिन्दुमलिका ताल मे क्रमश: एक गुरु (ऽ), दो लघु (।।), एक गुरु (ऽ),एक द्रुत (०) होता है।

समताले लघुद्वन्द्वं विरामान्त्यं द्रुतत्रयम् ।

पदच्छेदः-समताले लघु द्वन्द्वं विरामान्त्यं द्रुत त्रयम् (।।०००⏑)

भावार्थ- समताल मे क्रमश: दो लघु (।।), तीन द्रुत (०००) एक विराम (⏑) होता है।

तौ द्रुतौ च प्लुतस्यान्ते ताले स्यान्नन्दनाभिधे ॥47॥

पदच्छेदः-तौ द्रुतौ च प्लुत स्यान्ते ताले स्या न्नन्दन भिधे (००ऽ)

भावार्थ- न्नन्दन ताल मे क्रमश: दो द्रुत (००), एक प्लुत (ऽ) होता है।

किञ्चिद्गुरुर्द्वयोर्मध्ये बिन्दुयुग्मं प्रचक्षते ।

उद्वीक्षणे लघुद्वन्द्वं गुरुरेकस्ततः परम् ॥48॥

पदच्छेदः- किञ्चिद्ग गुरु र्द्वयो र्मध्ये बिन्दु युग्मं प्रचक्षते उद्वीक्षणे लघु द्वन्द्वं गुरु रेकस्ततः परम् (।।ऽ)

भावार्थ- उद्वीक्षणे ताल मे क्रमशः दो लघु (।।), एक गुरु (ऽ) होता है।

मट्टिकायां विधातव्यं गुरुबिन्दुः प्लुतः क्रमात् ।

विरामादि व्योमयुग्मं लद्वयं च द्विमटिका ॥49॥

पदच्छेदः- मट्टिकायां विधातव्यं गुरुबिन्दुः प्लुतः क्रमात् विरामादि व्योमयुग्मं लद्वयं च द्विमटिका (ऽ०ऽ)

भावार्थ-मट्टिका ताल मे क्रमशः एक गुरु (ऽ) एक द्रुत (०), एक प्लुत (ऽ) होता है।

डिकीकारङ्गणं तस्यास्तस्याः सायोजने तथा ।

कौ बिन्दू लश्च बिन्दू च विज्ञेया वर्णमण्टिका ॥50॥

पदच्छेदः- डिङ्कीकारङ्गणं तस्यास्तस्याः सायोजने तथा कौ बिन्दू लश्च बिन्दू च विज्ञेया वर्णमण्टिका (०।०)

भावार्थ- वर्णमण्टिका ताल मे क्रमशः एक द्रुत (०), एक लघु (।), एक द्रुत (०) होता है।

लद्वयं बिन्दुयुग्मं च गुरुश्चैवाभिनन्दके।।

पदच्छेदः- ल द्वयं बिन्दु युग्मं च गुरु श्चैव अभिनन्दके (।।००ऽ)

भावार्थ-अभिनन्दन ताल मे क्रमशः दो लघु (।।), दो द्रुत (००), एक गुरु (ऽ) होता है।

विधातव्यान्तरक्रीडा विरामान्यं द्रुतद्वयम् (?) ॥51॥

पदच्छेदः- विधातव्या अन्तरक्रीडा विरामान्यं द्रुत द्वयम् (००‿)

भावार्थ- अन्तरक्रीडा ताल मे क्रमशः दो द्रुत (००), एक विराम (‿) होता है।

समल्लताले द्विलघु विरामान्त्यं द्रुतद्वयम् ।

पदच्छेदः- समल्लताले द्वि लघु विरामान्त्यं द्रुत द्वयम् (।।००‿)

भावार्थ-मल्ल ताल मे क्रमशः दो लघु (।।), दो द्रुत (००), एक विराम (‿) होता है।

द्रुतद्वन्द्वं लघुद्वन्द्वं गुरुद्वन्द्वं च दीपके ॥52॥

पदच्छेदः- द्रुत द्वन्द्वं लघु द्वन्द्वं गुरु द्वन्द्वं च दीपके

भावार्थ- दीपक ताल मे क्रमशः दो द्रुत (००), दो लघु (।।), दो गुरु (ऽऽ) होते है।

लघुप्लुतो सकारश्च स्यादनङ्गेऽभिधीयते ।

पदच्छेदः-लघु प्लुतो सकार श्च स्याद अनङ्गेऽ भिधीयते (। ऽ।।ऽ)

भावार्थ-अनंग ताल मे क्रमश: एक लघु (।), एक प्लुत (ऽ), दो लघु (।।), एक लघु (।) होता है।

वेदद्रुतौ विरामान्तौ द्वौ पदौ विषमद्रुतः ॥53॥

पदच्छेदः- वेद द्रुतौ विरामान्तौ द्वौ पदौ विषम द्रुतः (००००‿००००‿)

भावार्थ- विषम ताल मे क्रमश: चार द्रुत (००००), एक विराम(‿), चार द्रुत (००००), एक विराम (‿) होता है।

नान्दीताले समुद्दिष्टा लघुबिन्दुर्लघुर्गुरुः ।

पदच्छेदः- नान्दीताले समुद्दिष्टा लघु बिन्दु र्लघु र्गुरुः (।०।ऽ)

भावार्थ- नन्दीताल मे क्रमश: एक लघु (।), एक द्रुत बिन्दु (०), एक लघु (।), एक गुरु (ऽ) होता है।

मुकुन्दसंज्ञिके ताले लघुबिन्दुर्लघुर्गुरुः ॥54॥

अन्ये मुकुन्दलघ्वादिषड्विन्दु लचतुष्टयम्

पदच्छेदः- मुकुन्द संज्ञिके ताले लघु बिन्दु र्लघु र्गुरुः (।०।ऽ) अन्ये मुकुन्द लघ्वा दिषड्विन्दु ल चतुष्टयम् (।०००००।।।।)

भावार्थ-मुकुन्द ताल के दो मत यहाँ प्रस्तुत किए गए है मुकुन्द ताल मे क्रमश: एक लघु (।), एक द्रुत बिन्दु (०), एक लघु (।), एक गुरु (ऽ) होता है। दूसरे मत के अनुसार मुकुन्द ताल मे क्रमश: एक लघु (।),छ: द्रुत (०००००),चार लघु (।।।।) होते है।

लघुद्वन्द्वं साकारेण कुडकः परिकीर्तितः ॥55॥

पदच्छेदः- लघु द्वन्द्वं साकारेण कुडक्क: परिकीर्तितः (।।।।ऽ)

भावार्थ- कुडक्क ताल मे क्रमश: चार लघु (।।।।), एक गुरु (ऽ) होता है।

एकेनैव द्रुतेन स्यादेकतालेतिसंज्ञितः।

पदच्छेदः- एकेनैव द्रुतेन स्याद एकताले तिसंज्ञितः।

भावार्थ- एकताल मे एक द्रुत (०) ही होता है।

चतुर्विधान्यकङ्कालः पूर्वखण्डसमागमः ॥56॥

पूर्णलघुचतुष्टेनगुरुणालघुनाक्रमात् ।

पदच्छेदः- चतुर्विधान्य कङ्कालः पूर्व खण्ड समागमः पूर्ण लघु चतुष्टेन गुरुणा लघुना क्रमात् (।।।।ऽ।)

भावार्थ- कङ्कालः ताल के चार प्रकार है पूर्ण कङ्कालः मे क्रमश: चार लघु (।।।।), एक गुरु (ऽ) एक लघु (।) होता है।

द्रुतद्वन्द्वंलघुःखण्डे गुरुद्वन्लघुःसमे ॥57॥

पदच्छेदः- द्रुत द्वन्द्वं लघुः खण्डे (००।)गुरु द्वन्द्वं लघुः समे (ऽऽ।)

भावार्थ-खंड कङ्कालः ताल मे क्रमश: दो द्रुत (००), एक लघु (।) होता है। सम कङ्कालः ताल मे क्रमश: दो गुरु (ऽऽ), एक लघु (।) होता है।

एकोगुरुर्लघुद्वन्द्वंकङ्कालेविषमेभवेत् ।

पदच्छेदः- एको गुरु र्लघु द्वन्द्वं कङ्काले विषमे भवेत् (।ऽऽ)

भावार्थ-विषम कङ्कालः ताल मे क्रमश: एक लघु (।), दो गुरु (ऽऽ) होते है।

चतुस्तालेगुरुःपूर्वंततोबिन्दुत्रयंभवेत् ॥58॥

पदच्छेदः- चतुस्ताले गुरुः पूर्वं ततो बिन्दु त्रयं भवेत् (ऽ०००)

भावार्थ- चतुरस्त्र ताल मे क्रमश: एक गुरु (ऽ) तीन द्रुत (०००) होते है।

विरामान्त्यं लघुद्वन्द्वं दोम्बुली तिप्रकीर्तितः।

पदच्छेदः-विरामान्त्यं लघु द्वन्द्वं दोम्बुलीति प्रकीर्तितः (।।‿)

भावार्थ-दोम्बुली ताल मे क्रमश: दो लघु (।।), एक विराम(‿) होता है।

लघुमेव परं त्वन्ये कालबन्धनकाभिधे ॥59॥

अभङ्गःकालकर्तव्यं गुरुरेकं लघुप्लुतम् ।

पदच्छेदः- लघु मेव परंत्वन्ये कालबन्धन काभिधे अभङ्ग काल कर्तव्यं गुरु एकं लघु प्लुतम् (ऽ।ऽ)

भावार्थ- अभङ्ग ताल मे क्रमश: एक गुरु (ऽ), एकलघु (।), एक प्लुत (ऽ) होता है।

रगणो बिन्दुयुग्मेन रायभङ्गाल इष्यते ॥60॥

पदच्छेदः- रगणो बिन्दु युग्मेन रायभङ्गाल इष्यते (ऽ।ऽ००)

भावार्थ- रायभङ्गाल ताल मे क्रमश: एक गुरु (ऽ), एकलघु (।), एक गुरु (ऽ), दो द्रुत (००) होते है।

एकेन सविरामेण लघुना लघुशेखरः।

पदच्छेदः-एकेन सविरामेण लघुना लघु शेखरः (।‿)

भावार्थ- लघु शेखर ताल मे क्रमश: एकलघु (।), एक विराम(‿) होता है।

प्रतापशेखरेऽत्यङ्गःविरामान्तंद्रुतद्वयम् ॥61॥

पदच्छेदः- प्रतापशेखरे ऽत्यङ्ग विरामान्तं द्रुत द्वयम् (००‿)

भावार्थ-प्रतापशेखर ताल मे क्रमश: दो द्रुत (००), एक विराम(‿) होता है।

झगझम्पेगुरुस्त्वेकोविरामान्त्यंद्रुतत्रयम् ।

पदच्छेदः- झगझम्पे गुरुस्त्वे कोविरामान्त्यं द्रुत त्रयम् (ऽ०००‿)

भावार्थ- झगझम्प ताल मे क्रमश: एक गुरु (S), तीन द्रुत (००), एक विराम(‿) होता है।

चतुर्मुखाभिधेतालेजगणोरन्तरप्लुतम् (?) ॥62॥

पदच्छेदः- चतुर्मुखा भिधे ताले जगणोरन्तर प्लुतम् (।S।ऽ)

भावार्थ- चतुर्मुख ताल मे क्रमश: एकलघु (।), एक गुरु (S), एकलघु (।), एक प्लुत (ऽ) होता है।

व्योमद्वयंविरामान्यंलघुझम्पेविधीयते ।

पदच्छेदः- व्योम द्वयं विरामान्यं लघु झम्पे विधीयते (००।‿)

भावार्थ- झम्प ताल मे क्रमश: दो द्रुत (००), एकलघु (।), एक विराम(‿) होता है।

जगणोमगणोवापिप्रतिमण्ठेबुधैःस्मृतः ॥63॥

पदच्छेदः- जगणो मगणो वापि प्रतिमण्ठे बुधैः स्मृतः (।S।SSS)

भावार्थ- प्रतिमण्ठ ताल मे क्रमश: एकलघु (।), एक गुरु (S), एकलघु (।), तीन गुरु (SSS) होते

तालरयमेवान्यैझल्लकःपरिकीर्तितः।

तृतीयतालेबिन्दुःस्याद्विरामान्त्यंद्रुतद्वयम् ॥64॥

पदच्छेदः- ताल रयमेवान्यै झल्लकःपरिकीर्तितः तृतीयताले बिन्दुःस्या द्विरामान्त्यं द्रुत द्वयम् (००‿)

भावार्थ- तृतीयताल मे क्रमश: दो द्रुत (००), एक विराम(‿) होता है।

वसन्ततालेकर्तव्याद्रुतद्वन्द्वलघुर्गुरुः ।

पदच्छेदः- वसन्ततालेकर्तव्या द्रुत द्वन्द्व लघु र्गुरुः (००।S)

भावार्थ- वसन्त ताल मे क्रमश: दो द्रुत (००), एकलघु (।), एक गुरु (S) होता है।

तालेललितसंज्ञे च द्रुतद्वन्द्वंलघुर्गुरुः ॥65॥

पदच्छेदः- ताले ललित संज्ञे च द्रुत द्वन्द्वं लघु र्गुरुः (००।S)

भावार्थ- ललित ताल मे क्रमश: दो द्रुत (००), एकलघु (।), एक गुरु (S) होता है।

रतितालेलघुःकार्यःसतस्त्वेकोगुरुःस्मृतः ।

पदच्छेदः- रतिताले लघुःकार्यः सतस्त्वेको गुरुःस्मृतः (।S)

भावार्थ- रतिताल मे क्रमश: एकलघु (।), एक गुरु (S) होता है।

तालेकरणइत्याख्येज्ञेयंबिन्दुचतुष्टयम् ॥66॥

पदच्छेदः- तालेकरणइत्याख्येज्ञेयंबिन्दुचतुष्टयम् (००००)

भावार्थ- करण ताल मे क्रमश: चार द्रुत (००००) होते है।

षट्तालसंज्ञकेतालेबिन्दुषट्निरन्तरम् ।

पदच्छेदः- षट्ताल संज्ञके ताले बिन्दु षट् निरन्तरम् (०००००)

भावार्थ- षट्ताल ताल मे क्रमश: छ: द्रुत (०००००) होते है

वर्धनेबिन्दुयुगलंततःकार्योगुरुःस्मृतः॥67॥

पदच्छेदः-वर्धने बिन्दु युगलं ततःकार्यो गुरुःस्मृतः (००ऽ)

भावार्थ- वर्धन ताल मे क्रमश दो द्रुत (००), एक गुरु (ऽ) होता है।

वर्णमण्ठाभिधेतालेलघुद्वन्द्वनभस्त्रयम् ।

पदच्छेदः- वर्णमण्ठा भिधे ताले लघु द्वन्द्वं नभ स्त्रयम् (।।०००)

भावार्थ- वर्णमण्ठ ताल मे क्रमश: दो लघु (।।) व तीन द्रुत (०००) होते है।

रायनारायणेबिन्दुद्वितयंजगणोगुरुः ॥68॥

पदच्छेदः- रायनारायण बिन्दु द्वितयं जगणो गुरुः(००।ऽ।ऽ)

भावार्थ- रायनारायण ताल मे क्रमश: द्रुत (००), एक लघु (।), एक गुरु (ऽ), एकलघु (।), एक गुरु (ऽ) होता है।

द्रुतद्वन्द्वंप्लुतश्चैकोमदनेपरिकीर्तितः ।

पदच्छेदः- द्रुत द्वन्द्वं प्लुत श्चै कोमदने परिकीर्तितः (००ऽ)

भावार्थ-मदन ताल मे क्रमश: द्रुत (००), एक प्लुत (ऽ) होता है।

पार्वतीलोचनेतालेतद्रुतौतगणःक्रमात् ॥69॥

अथवामगणोलश्चगुरुद्वन्द्वंद्रुतत्रयम् ।

पदच्छेदः-पार्वतीलोचने ताले तद्रुतौ तगणः क्रमात् (ऽऽ।००ऽऽ।) अथवा मगणो लश्च गुरु द्वन्द्वं द्रुत त्रयम् (ऽऽऽ।ऽऽ०००)

भावार्थ-पार्वतीलोचन ताल मे क्रमश: तगण अर्थात दो गुरु (ऽऽ) एक लघु (।) व दो द्रुत (००) होते है। अथवा एक मगण अर्थात तीन गुरु (ऽऽऽ), एक लघु (।), दो गुरु (ऽऽ), तीन द्रुत (०००) होते है।

गारुगेकथ्यतेप्राज्ञैर्विरामान्त्यंचतुर्द्रुताः ॥70॥

पदच्छेदः- गारुगे कथ्यते प्राज्ञै र्विरामान्त्यं चतुर्द्रुताः (००००‿)

भावार्थ- गारुगी ताल मे क्रमश: चार द्रुत (००००) एक विराम(‿) होता है।

श्रीनन्दनस्यतालःस्याजगणःप्लुतइत्यपि।

पदच्छेदः- श्रीनन्दन स्यतालः स्या जगणःप्लुत इत्यपि। (।ऽ।ऽ)

भावार्थ- श्रीनन्दन ताल मे क्रमश: एक लघु (।), एक गुरु (ऽ), लघु (।) व एक प्लुत (ऽ) होता है।

जयकेजगणश्चैवबिन्दुयुग्मंप्लुतस्तथा ॥71॥

पदच्छेदः- जयके जगण श्चैव बिन्दु युग्मं प्लुत स्तथा

भावार्थ- जय ताल मे क्रमश: एक जगण अर्थात एक गुरु, एक लघु व एक गुरु (ऽ।ऽ),दो द्रुत (००),ओर एक प्लुत (ऽ) होता है।

बिन्दुर्लघुःप्लुतश्चैवलीलातालेप्रकीर्तितः।

पदच्छेदः-बिन्दु र्लघुः प्लुत श्चैव लीला ताले प्रकीर्तितः। (०।ऽ)

भावार्थ- लीला ताल मे क्रमश: एक द्रुत (०),एक लघु (।),और एक प्लुत (ऽ) होता है।

विलोके च लघुर्वक्रव्योमयुग्मंततःप्लुतम् ॥72॥

पदच्छेदः- विलोके च लघु र्वक्र व्योम युग्मं ततः प्लुतम् **(**।००ऽ**)**

भावार्थ-विलोक ताल मे एक लघु (।),दो द्रुत (००),और एक प्लुत (ऽ) होता है।

ललितप्रियतालेस्यात्सगणोऽनन्तरालघुः ।

पदच्छेदः- ललितप्रिय ताले स्यात्स गणोऽनन्तरा लघुः (।।ऽ।)

भावार्थ-ललितप्रिय ताल मे क्रमश: दो लघु (।।), एक गुरु (ऽ), एक लघु (।), होता है।

जनताभिधताले स्थान्नयनेभ्यःपरं गुरुः ॥73॥

बिन्दुद्वयं विरामान्यं लप्लुतो रागवर्धने।

पदच्छेदः- जनताभिधतालेस्थान्नयनेभ्यःपरंगुरुः बिन्दु द्वयं विरामान्यं लप्लुतो रागवर्धने।(००।ऽ⏑)

भावार्थ-रागवर्धन ताल मे क्रमश: दो द्रुत (००),एक लघु,(।),एक प्लुत (ऽ)व एक विराम (⏑) होता है।

उत्सवःकथितःप्राज्ञैर्लघोरूज़प्लुतंलघुः ॥74॥

पदच्छेदः- उत्सवः कथितः प्राज्ञै र्लघोरूज़ प्लुतं लघुः (ऽ।)

भावार्थ-उत्सव ताल मे क्रमश: एक प्लुत ((ऽ),व एक लघु ((।) होता है।

एवं प्रकारःकथितोनारदेनमहात्मना।

इति श्री नारदकृतौ सङ्गीतमकरन्दे नृत्याध्याये एकोत्तरशततालमात्रानिर्णयो

नामद्वितीयःपादःसमाप्तः।

एवं इन सभी तालों के प्रकार नारद द्वारा इस महात्म मे कहे गए है। महर्षि नारद द्वारा सङ्गीत मकरन्द नृत्याध्याय एकोत्तर शत ताल मात्रा निर्णय नाम का द्वितीय पादः पूर्ण होता है।

अथ नृत्याध्याये तृतीयः पादः

नृत्याध्याय तृतीय पाद का मंगलपूर्ण निरूपण

चतुरस्रादितालानामेतानि कथिताम्यहम् ।

प्रस्तारसहितं लक्ष्म तद्भेदांश्च पृथग्विधान् ॥1॥

पदच्छेदः चतुरस्र आदिताला नामेतानि कथिता म्यहम् प्रस्तार सहितंलक्ष्मतद्भेदां श्च पृथग्विधान्

अनव्य- चतुरस्र- चतुरस्र, आदिताल-अन्य ताल, नामेतानि-नाम कथिता-कहा गया है, म्यहम्-मैंने, प्रस्तार सहितं-प्रस्तार सहित, लक्ष्म-चिन्ह, तद्भेदां-भेदों को, श्च पृथग्विधान्-पृथक रूप से विधान

भावार्थ- चतुरश्र इत्यादि तालों को मैंने (नारद द्वारा) इस प्रकार से कहा है, जिसमे प्रस्तार सहित लक्ष्म (चिन्ह) और भेदों का पृथक रूप से विधान किया गया है।

तपोभागदयालापो पुमा पामगणेति च (?)।

पञ्चकार्यप्रथन्धा च नन्दिकेश्वरकल्पितम् ॥2॥

पदच्छेदः तपो भाग दयालापो पुमा पामगणेति च पञ्च कार्यप्रथन्धा च नन्दिकेश्वर कल्पितम्

अनव्य- तपो भाग दयालापो पुमा पामगणेति च-यह पञ्च-पाँच कार्यप्रबन्धा- कार्य प्रबंध, च नन्दिकेश्वर- नन्दिकेश्वर, कल्पितम्- कहे गए है

भावार्थ-तपो भाग दयालाप पुमा पामगण यह प्रकार के कार्य प्रबंध होते है, जो नंदिकेश्वर द्वारा अपने ग्रंथ मे कल्पित किए गए है।

शब्दाडम्बरनामाख्यं तालं द्रुतचतुष्टयम् ।

प्लुतद्वयं गुरुस्तिस्र आडम्बरस्ततो लघुः ॥3॥

पदच्छेदः शब्दाडम्बर नामाख्यं तालं द्रुत चतुष्टयम् प्लुत द्वयं गुरु स्तिस्र आडम्बर स्ततोलघुः

अनव्य- शब्दाडम्बर-शब्द आडम्बर, नामाख्यं- नाम के, तालं-ताल, द्रुत-शीघ्रतापूर्ण, चतुष्टयम्-चार प्रकार, प्लुत-तीन मात्राओं वाला, द्वयं गुरु-दो गुरु, स्तिस्र-तीन, आडम्बर स्ततोलघुः तीन लघु

भावार्थ- शब्द आडम्बर ताल मे चार द्रुत कहे गए है, प्लुत के दो, गुरु के तीन लघु है।

न तालं न च वादित्रमन्त्यतालेन योद्यते (?) ।

मध्ये मध्ये तथा कुर्यात्तालमात्रं समन्वितम् ॥4 ॥

पदच्छेदः न तालं न च वादित्र मन्त्य तालेन योद्यते मध्ये मध्ये तथा कुर्यात्ताल मात्रं समन्वितम्

अनव्य- न तालं न – ना ताल, च- और, वादित्रमन्त्य- वाद्य अन्त, तालेन-ताल, योद्यते-कहा जाता है। मध्ये मध्ये- बीच-बीच मे, तथा कुर्यात्तालमात्रं- ताल व मात्रा समन्वितम्-जिसमे कोई रुकावट न हो

भावार्थ- जिसमे मे न ताल हो न वाद्य हो उसे अन्त ताल कहा जाता है। इसमे बीच बीच मे ताल व मात्रा को समन्वित करना चाहिए ।

सर्वशब्दसमायुक्त अरेख इतिकीर्तितः।

सतत्सुरधनेशेषु (?) प्रसिद्धो नारदेन च ॥5॥

पदच्छेदः सर्व शब्द समायुक्त अरेख इति कीर्तितःसतत्सुर धनेशेषु (?) प्रसिद्धो नारदेन च

अनव्य- सर्व शब्द-समस्त शब्द, समायुक्त- से युक्त, अरेख-रेखा रहित, इति-इस प्रकार कीर्तितःसतत्सुर-जो निरंतर, धनेशेषु (पुरुष) पुल्लिंग, प्रसिद्धो-प्रसिद्ध, नारदेन च-नारद द्वारा

भावार्थ-सर्व शब्द से युक्त रेखा रहित जो निरंतर सुरधनेषु (पुरुष) पुल्लिंग को नारद द्वारा प्रसिद्ध किया गया है।

अथदशविधतालप्रबन्धाउच्यन्ते।

गुरुद्वन्द्वं लघुद्वन्द्वं गुरुरेकस्त्रिभङ्गके ।

चतुर्लघुलकारश्च लप्लुतश्च चतुर्मुखे ॥6॥

पदच्छेदः गुरु द्वन्द्वं लघु द्वन्द्वं गुरुरेक स्त्रिभङ्गके चतु र्लघु लकार श्च ल प्लुत श्च चतुर्मुखे

अनव्य- गुरुद्वन्द्वं-दो गुरु, लघुद्वन्द्वं- दो लघु गुरुरेकस्त्रिभङ्गके-एक गुरु त्रिभंग, चतुर्लघुलकारश्च-चार लघु लकार, लप्लुतश्चचतुर्मुखे-लघु के चारमुख

भावार्थ-गुरु की दो, लघु की दो मात्राएं बतायीं गयी है, एक गुरु त्रिभंगा, चार लघु लकार और प्लुत चतुर्मुख होता है।

पञ्चतालप्रबन्धः स्याद्रुताद्यन्तं प्लुतश्चतुः(?)।

तमसा पञ्चलघुना षट्तालश्च प्रकीर्तितः॥7॥

पदच्छेदः पञ्च ताल प्रबन्धः स्याद्रुताद्यन्तं प्लुत श्चतुः तमसा पञ्च लघुना षट्तालश्च प्रकीर्तितः

अनव्य पञ्च-पाँच, तालप्रबन्धःस्या-ताल प्रबंध, द्रुताद्यन्तं-द्रुत अंत, प्लुतश्चतुः- प्लुत के चार, तमसा पञ्च लघुना-तम के पाँच लघु, षट्तालश्च-षट्ताल, प्रकीर्तितः-कहे गए है।

भावार्थ-पाँच ताल प्रबंध का वर्णन करते हुए बताया गया है, कि द्रुत का आदि व अंत होता है, प्लुत कि चार मात्र होती है, तम के द्वारा पाँच लघु कहे गए है, इस प्रकार षट्ताल कहे गए है।

प्लुतौ गुर्वो (रु)लघुश्चैव सुलादिरभिधीयते ।

लघुरित्युच्यते तालं गीतज्ञैः पूर्वसूरिभिः ॥8॥

पदच्छेदः प्लुतौ गुओं (रु)लघु श्चै वसु लादिर भिधीयते लघु रित्युच्यते तालं गीतज्ञैः पूर्वसूरिभिः

अनव्य प्लुतौ-दो प्लुत, गुओं- दो गुरु (रु)लघुश्चैव-लघु सुलादिरभिधीयते-लघु सुलादि ताल जहे गए है, लघुरित्युच्यतेतालंगीतज्ञैः- गीत का रूप ,पूर्वसूरिभिः-प्राचीन

भावार्थ-दो प्लुत, दो गुरु और एक लघु इसे सुलादी कहा गया है, इसे गीत का प्राचीन रूप मानते हुए इसको लघु ताल कहा गया है।

अष्टमङ्गलतालः स्यव्द्योमाद्यन्तं नवद्रुतम् ।

यः प्लुतो गलपो लोपो(पः) समगौ नवतालके ॥9॥

पदच्छेदःअष्टमङ्गल तालः स्यायोमाद्यन्तं नवद्रुतम् यः प्लुतो गलपो लोपो(पः) समगौ नव तालके

अनव्य-अष्टमङ्गल तालः-अष्टमंगल ताल, स्यायोमाद्यन्तं-व्योम अंत, नवद्रुतम्-नौ द्रुत यः-और, प्लुतो-प्लुत, गलपोलोपो(पः)-गुरु का लोप, समगौनवतालके-नव ताल कहा जाता है।

भावार्थ-अष्टमंगल ताल मे व्योम आदि अंत मे और नौ द्रुत है जिसमे प्लुत का लोप होता हो वह नव ताल कहलाते है।

षड्भञ्जनं दीर्घषट् गुरुद्वन्द्वं लघुत्रयम् ।

दशरूपप्रबन्धः स्यात्रिंशन्मात्रं लघुस्तथा ॥10॥

पदच्छेदः-षड्भञ्जनं दीर्घ षटुं गुरु द्वन्द्वं लघु त्रयम् दश रूप प्रबन्धः स्या त्रिंशन्मात्रं लघु स्तथा

अनव्य- षड्भञ्जनं-छः टुकड़ो मे विभाजित, दीर्घषट्- पाँच से अधिक दीर्घ, गुरु द्वन्द्वं-दो गुरु, लघु त्रयम्- तीन लघु, दशरूपप्रबन्धः-दश रूप प्रबंध, स्यात्रिं शन्मात्रंलघु तीस मात्रा व लघु, स्तथा-होते है

भावार्थ-: षड्भञ्जनं अर्थात् टुकड़ो मे विभाजित, दीर्घषट् अर्थात् पाँच से अधिक दीर्घ दो गुरु, तीन लघु तीस मात्रा व लघु से युक्त प्रबंध दशरूप प्रबंध कहलाता है।

धरारसतनू भौ मो लघुद्वादशबिन्दवः।

निःशब्दो लश्च चत्वारताल एकादशे भवेत् ॥11॥

पदच्छेदः-धरा रस तनू भौ मो लघु द्वादश बिन्दवः निःशब्दो ल श्च चत्वार ताल एकादशेभवेत्

अनव्य-धरा-एक, रस-छः, तनू-एक, भौ- दो भगण, मो-एक मगण लघु द्वादश बिन्दवः-लघु के बारह बिन्दु, निःशब्दो- निःशब्द, लश्चचत्वार-चार लघु, तालएकादशे-एकादश ताल, भवेत्-कहा जाता है।

भावार्थ- एक छः एक के क्रम मे दो भगण, एक मगण व लघु के बारह बिन्दु निःशब्द और चार लघु से युक्त ताल एकादश ताल कहलाती है।

व्यञ्जनो (ने?) सरलो दीर्घद्वादशसामसम्भवम् ।

गपव्योमयुतं चैव तालः स्यादर्कमालिका ॥12॥

पदच्छेदः-व्यञ्जनो (ने?) सरलो दीर्घ द्वादश साम सम्भवम् गप व्योम युतं चैव तालःस्यादर्क मालिका

अनव्य- व्यञ्जनो (ने?)-36 व्यंजन सरलो-सरल, दीर्घद्वादश- बारह दीर्घ अक्षर साम सम्भवम्-शून्य से युक्त, गप-गुरु, प्लुत व्योमयुतंचैव-बिन्दु से युक्त, तालःस्यादर्कमालिका-बिन्दुमालिका ताल

भावार्थ- छत्तीस सरल व्यंजन व बारह दीर्घ अक्षर जो शून्य (व्योम) से युक्त हो जिसमे गुरु व प्लुत बिन्दु से युक्त हो वह ताल बिन्दुमालिका ताल कहलाती है।

एतानि दशतालानि वाद्यन्ते श्रूयते नरैः।।

तत्पूर्वसर्वकार्येषु सर्वोत्कृष्टश्च जायते ॥13॥

पदच्छेदः-एतानि दशतालानि वाद्यन्ते श्रूयतेनरैः तत्पूर्व सर्व कार्येषु सर्वोत्कृष्ट श्च जायते

अनव्य- एतानि-इस प्रकार, दशतालानि-दश ताल, वाद्यन्ते-वाद्यों के साथ, श्रूयतेनरैः सुना जाए, तत्पूर्व से पहले, सर्वकार्येषु-सभी कार्यों, सर्वोत्कृष्ट-सबसे उत्क्रष्ठ श्च-हो, जायते-जाता है।

भावार्थ इस प्रकार नारद के अनुसार इन दश ताल प्रबन्धों का वादन व श्रवण मानव के सभी कार्यों को सर्वोउत्क्रष्ठ व जीवन के प्रत्येक क्षेत्र और कार्य में सफलता और सिद्धि दिलाएगा।

विजयो जयमानन्दो जयश्री र्जयमङ्गलम् ।

जयतालश्च पञ्चैते श्रुत्यं (मृत्युं) जयकरं शुभम् ॥14॥

पदच्छेदः-विजयो जय मानन्दो जयश्री र्जयमङ्गलम् जय ताल श्च पञ्चैते श्रुत्यं (मृत्यु) जयकरं शुभम्

अनव्य- विजयो-विजय, जयमानन्दो जयआनंद, जयश्री-जय श्री, र्जयमङ्गलम् जयमंगल, जयताल-जय ताल श्च पञ्चैते-पाँच तालों, श्रुत्यं-श्रवण, (मृत्यु) जयकरं शुभम्-मृत्यु पर विजय

भावार्थ-विजय, जयआनंद, जय श्री, जयमंगल, जयताल यदि इन पाँच तालों के श्रवण मात्र से मृत्युंजय अर्थात् मृत्यु पर भी विजय प्राप्त हो जाती है।

प्लुतो गंपो नगो राजौ जभव्योमद्वयं पुनः ।

पञ्चतालप्रबन्धः स्याच्छ्राव्यं जयकरं शुभम् ॥15॥

पदच्छेदः-प्लुतो गंपो नगो राजौ जभ व्योम द्वयं पुनः पञ्च ताल प्रबन्धःस्याच्छ्राव्यं जयकरं शुभम्

अनव्य- प्लुतो गपो- प्लुत (एक गुरु एक लघु),नगोराजौ-नगण, जभ-भगण और जगण व्योमद्वयंपुनः-पुन: दो व्योम (शून्य), पञ्चतालप्रबन्धःपाँच ताल प्रबंध, स्याच्छ्राव्यं-साथ श्रवण, जयकरंशुभम्-जयकर और मंगल

भावार्थ- इस प्रबंध में सफलता और ख़ुशी देने की शक्ति है। इस प्रबंध में निम्नलिखित पाँच ताल शामिल है, जो इस प्रकार है-विजय, जय, आनंद, जयश्री और जयमंगल इन पंचताल का साथ मे श्रवण जयकर और मंगलकारी होता है।

मदनोत्सवलक्ष्मीशक्रीडाकीर्तिस्तथा रतिः।

सिंहलीलश्च सप्तैते मार्तण्डजयदः क्रमात् ॥16॥

पदच्छेदः मदनो उत्सव लक्ष्मीश क्रीडा कीर्ति स्तथारतिःसिंहलील श्च सप्तैते मार्तण्डजयदः क्रमात्

अनव्य- मदनो- मदन ताल, उत्सव-उत्सव ताल, लक्ष्मीश-लक्ष्मी ताल, क्रीडा-क्रीडा ताल,कीर्ति-कीर्ति ताल,स्तथा-साथ मे, रतिः-रति, सिंहलील-सिंहलील ताल, श्वसप्तैते-सात, मार्तण्डजयदः-मार्तण्डजयदः क्रमात्-क्रम मे समझना चाहिए

भावार्थ- मार्तण्डजयद ताल प्रबंध में निम्नलिखित सात ताल शामिल है, जो इस प्रकार है- मदन, उत्सव, लक्ष्मीश, क्रीड़ा, कीर्ति, रति और सिंहलीला है। इन सब को सात के क्रम से समझना चाहिए ।

चञ्चत्पुटश्चाचुपुटः षट्पितापुत्रकस्तथा।

प्रत्यङ्गो गजलीलश्च षट्तालश्च प्रबन्धकम् ॥17॥

पदच्छेदः चञ्चत्पुट श्चा चाचपुटः षट्पितापुत्रक स्तथा प्रत्यङ्गो गजलील श्च षट्ताल श्च प्रबन्धकम्

अनव्य- चञ्चत्पुट- चञ्चत्पुट, श्चाचुपुटः चाचपुट, षट्पितापुत्रक- षट्पितापुत्रक स्तथा-साथ मे, प्रत्यङ्गो-प्रत्यंग, गजलील- गजलील, श्चषट्ताल-छ: ताल, श्चप्रबन्धकम्-प्रबंध

भावार्थ- षट्ताल प्रबंध में निम्नलिखित छ: ताल शामिल है, जो इस प्रकार है-चच्चत्पुट, चाचपुट, षट्पितापुत्रक, प्रत्यंग, गजलीला, शतताल ।

धुवा मठा प्रतिमठा लम्बको रासकस्तथा।

अष्टालश्चैकतालः सुलादीत्युच्यते बुधैः ॥18॥

पदच्छेदः-धुवा मठा प्रतिमठा लम्बको रासक स्तथा अष्ट ताल श्चैक तालःसुलादी त्युच्यते बुधैः

अनव्य- धुवा-ध्रुवताल, मठा-मठताल, प्रतिमठा-प्रतिमठ ताल, लम्बकोरासक-रासताल, स्तथा-इस प्रकार अष्टताल- अष्टताल श्चैकतालःएकताल, सुलादी-सुलादी ताल, त्युच्यतेबुधैःकहा जाता है।

भावार्थ- ध्रुवताल, मठताल, प्रतिमठ ताल, रासताल, अष्टताल**,** एकताल**,** सुलादी ताल कहा जाता है।

लघुसुलादिः।

रङ्गद्यूतो राजतालो वनमाली त्रिधा मतः।

त्रिभङ्गी तालवृन्दं च नारदेन यथाक्रमम् ॥19॥

पदच्छेदः- रङ्गद्यूतो राजतालो वनमाली त्रिधामतः त्रिभङ्गी ताल वृन्दं च नारदेन यथा क्रमम्

भावार्थ- त्रिभङ्गी प्रबंध में निम्नलिखित तीन ताल, जो इस प्रकार है-राजताल, वनमाली और रङ्गद्यूत शामिल है।

एकतालश्च कङ्कालश्चतुस्तालश्च दोम्बुलिः।

चतुर्मुखप्रमबन्धं स्याच्छ्रयते शत्रुनाशनम् ॥20॥

पदच्छेदः एकताल श्च कङ्काल श्च तुस्ताल श्च दोम्बुलिः चतुर्मुखम प्रबन्धं स्याच्छ्रयते शत्रु नाशनम्

अनव्य- एकताल-एकताल, श्च कङ्काल- कङ्काल ताल, श्चतुस्ताल- चतुरस्त्र ताल श्च दोम्बुलिः-दोंबुली ताल चतुर्मुखमप्रबन्धंस्या -चतुर्मुख प्रबंध, च्छ्रयतेशत्रुनाशनम्- सुनने मात्र से शत्रुओं का नाश होता है।

भावार्थ- इस प्रबंध को सुनने मात्र से शत्रुओं का नाश होता है। इस प्रबंध में निम्नलिखित चार ताल जो इस प्रकार है -एकताल, कङ्काल, चतुरस्त्र ताल,और दोंबुली ताल शामिल है,

कन्दर्पो बिन्दुमाली च समतालश्च नन्दनः ।

राजविद्याधरो झम्पा विषमः कन्दुकस्तथा ॥21॥

सङ्गीतज्ञमनोरम्यमष्टमङ्गलनामकम्।

प्रबन्धं च शृणोत्यत्र विषमग्रहमोचनम् ॥22॥

पदच्छेदः- कन्दर्पो बिन्दुमाली च समतालश्च नन्दनः राजविद्याधरो झम्पा विषमःकन्दुक स्तथा सङ्गीतज्ञ मनोरम्यम अष्टमङ्गल नामकम् प्रबन्धं च शृणोत्यत्र विषमग्रह मोचनम्

अनव्य- कन्दर्पो-कन्दर्प ताल, बिन्दुमाली-बिन्दुमालीताल, च-और, समतालश्च-समताल, नन्दनः-नंदनताल, राजविद्याधरो-राजविद्याधर ताल, झम्पा-झम्पा ताल, विषमः-विषम ताल, कन्दुकस्तथा-कन्दुक ताल सङ्गीतज्ञ-संगीत, मनोरम्यम-मनोरम, अष्टमङ्गल नामकम् प्रबन्धं-अष्टमङ्गल प्रबन्धं च शृणोत्यत्र-सुनने विषमग्रह-विषमग्रह, मोचनम्-अनुकूल

भावार्थ- अष्टमङ्गल प्रबन्ध प्रतिहार ग्रहों के प्रभाव से छुटकारा दिलाता है और उनके प्रभावों को अनुकूल बनाता है, अष्टमङ्गल प्रबंध में निम्नलिखित आठ ताल जो इस प्रकार है-कंदर्प, बिंदुमाली, समताल, नंदन, राजविद्याधर, झम्पा, विषम और कंदुका शामिल है।

उद्भटः सिंहनादश्च अभङ्गो वीरविक्रमः ।

ततः शरभलीला च सिंहविक्रीडितो मतः ॥23॥

प्रतापशेखरश्चान्यः सिंहविक्रम एव च ।

रायनारायणो नाम नवतालप्रबन्धकम् ॥24॥

पदच्छेदः-उद्भटः सिंहनादश्च अभङ्गो वीरविक्रमः ततः शरभलीला च सिंहविक्रीडितो मतः प्रतापशेखर श्चान्यः सिंहविक्रम एव च रायनारायणो नाम नव ताल प्रबन्धकम्

अनव्य-उद्भटः-उद्भट, सिंहनादश्च-सिंहनाद, अभङ्गो-अभंग, वीरविक्रमः-वीरविक्रम, ततःशरभलीला-शरभलीला, च-और, सिंहविक्रीडितोमतः-सिंहविक्रिदित, प्रतापशेखरश्चान्यः-प्रतापशेखर, सिंहविक्रम-सिंहविक्रम, एव च-और, रायनारायणो- रायनारायण, नामनवतालप्रबन्धकम्- नवताल प्रबंध

भावार्थ- नवताल प्रबंध मे निम्नलिखित नौ ताल शामिल है, जो इस प्रकार है-उद्भट, सिंहनाद, अभंग, वीरविक्रम, शरभलीला, सिंहविक्रिदित, प्रतापशेखर, सिंहविक्रम, और रायनारायण यह नवताल प्रबंध का निर्माण करते है।

यमौ जपो लघुव्योम वक्रपापविरामजौ ।
लपो तपो लपो वक्र सपो लघुगपो लघु ॥25॥
विरामान्तं लघुद्वन्द्व पुनस्तत्र विरामकम्।
चतुर्बिन्दु ललव्योमौ जगुरुःस्यान्नवाभिधे ॥26॥
अभिनन्दान्तरक्रीडा मलतालश्च दोम्बुलिः ।
कुडुक्का प्रतिमठो मकरन्द श्च चर्चरी ॥27॥
परिक्रमो हंसनाद एभिस्तालैः समन्वितम्।
दशरूपप्रवन्धं च श्रूयते कीर्तिवर्धनम् ॥28॥

पदच्छेदः यमौ जपो लघु व्योम वक्र पापविरामजौ लपो तपो लपो वक्र सपो लघु गपो लघु विरामान्तं लघु द्वन्द्व पुनस्तत्र विरामकम् चतुर्बिन्दु ललव्योमौज गुरुःस्यान्न वाभिधे अभिनन्दा अन्तरक्रीडा मलताल श्च दोम्बुलिः कुडुक्का प्रतिमठो मकरन्द श्च चर्चरी परिक्रमो हंसनाद एभिस्तालैः समन्वितम् दश रूप प्रबन्धं च श्रूयते कीर्ति वर्धनम्

भावार्थ- दश रूप प्रबंध की तालो के श्रवण मात्र से ही प्रसिद्धि और प्रतिष्ठा वश मे हो जाती है। इस प्रबंध में निम्नलिखित दस ताल शामिल हैं, जो इस प्रकार है-अभिनंदन, क्रीड़ा, मल्लताल, दोंबुली, कुदुक्का, प्रतिमठ, मकरंद, चर्चरी, परिक्रमा और हंसनाद।

नान्दी तृतीयकारस्तु लघुशेखरसंज्ञकः ।
प्रतापशेखरश्चैव तथैवानङ्गलीलकः ॥29॥
वर्णमट्टश्च चर्चर्यो वर्णतालो द्वितीयकः।
उत्सवो मदनश्चैवमेकादश निरूपितम् ॥30॥

पदच्छेदःनान्दी तृतीयका अस्तु लघुशेखर संज्ञकः प्रतापशेखर श्चैव तथैवा अङ्ग लीलकः वर्णमट्टश्च चर्चर्यो वर्णतालो द्वितीयकः उत्सवो मदन श्चैवमे एका दश निरूपितम्

भावार्थ- इस प्रबंध में निम्नलिखित ग्यारह ताल जो इस प्रकार है- ताल नंदी, तृतीयक, लघु शेखर, वर्णमत्ता, चर्चर्यो, वर्णताल, द्वितीयक, उत्सव, और मदन शामिल है।

वनमाली राजचूडो वर्णतालः प्रदीपकः।
रङ्गाभरण उद्धट्टो रतिकीर्तिश्च नन्दनः ॥31॥

वीरविक्रमलक्ष्मीश उत्सवश्च ततः परम् ।

प्रबन्धमर्कमालाख्यं श्रूयते पापनाशनम् ॥32॥

पदच्छेदः-वनमाली राजचूडो वर्णतालः प्रदीपकः रङ्गाभरण उद्धट्टो रति कीर्तिश्च नन्दन वीरविक्रम लक्ष्मीश उत्सव श्चततः परम् प्रबन्धमर्कमालाख्यं श्रूयते पाप नाशनम्

भावार्थ- इस प्रबंध में निम्नलिखित बारह तालों की प्रशंसा की गयी है जो इस प्रकार है-वनमाली, राजचूड़ामणि, वर्णताल, प्रदीपक, रंगाभरण, उद्धट्ट, रति, कीर्ति, नंदा, विक्रम, लक्ष्मीशा, और उत्सव इन प्रबंधों को बहुत ही शुभ माने जाते है इनको सुनने से पापों का नाश होता है।

अङ्गतालाः क(थ्यन्ते)।

गुरवःषोडश ज्ञेया द्वात्रिंशल्लघवः पुनः ।

चतुःषष्टिटुंताश्चैव तालो यक्षपतिर्भवेत् ॥33॥

पदच्छेदः गुरवः षोडश ज्ञेया द्वात्रिंशल्लघवः पुनः चतुः षष्टिटुंताश्चैव तालो यक्षपति र्भवेत्

अनव्य- गुरवः-गुरु,षोडश-सोलह, ज्ञेया-जानना चाहिए, द्वात्रिंशल्लघवः-बत्तीस लघु, पुनः-फिर से,चतुः षष्टिद्रुताश्चैव-चौसठ द्रुत, तालो-ताल, यक्षपतिर्भवेत्-यक्षपति समझना चाहिए

भावार्थ-सोलह गुरु, बत्तीस लघु, चौसठ द्रुत यह क्रम पुन: जानना चाहिए इस प्रकार के क्रम को ताल मे

यक्षपति समझना चाहिए।

विरामार्धाधचन्द्रार्धमातृकात्रितयं तथा ।

व्यञ्जनं च लयं खण्ड लघुद्वन्द्वं द्रुतं ततः ॥34॥

पदच्छेदः विरामा र्धाध चन्द्रार्ध मातृकात्रि तयं तथा व्यञ्जनं च लयं खण्ड लघुद्वन्द्वं द्रुतं ततः

अनव्य- विरामार्धाध-विराम अर्द्धचंद्र, चन्द्रार्धमातृकात्रि-अर्द्धचंद्र मात्रिका, तयं-तथा व्यञ्जनं-व्यञ्जन, च-और, लयं-लय, खण्ड-भाग, लघुद्वन्द्वं-दो लघु, द्रुतं ततः-द्रुत

भावार्थ- विराम अर्द्धचंद्र**,** अर्द्धचंद्र मात्रिका व्यंजन अर्थात् (क से ज्ञ) और लय खण्ड को व दो लघु को द्रुत कहा जाता है।

अनुद्रुतद्वन्द्वलघुस्तालोऽयं वाद्यविभ्रमः ।

इति सङ्गीतकैः प्रोक्तो द्रावडीदश विश्रुतः ॥35॥

पदच्छेदः-अनुद्रुत द्वन्द्व लघु स्तालोऽयं वाद्य विभ्रमः इति सङ्गीतकैः प्रोक्तो द्रावडी दशविश्रुतः

भावार्थ-अनुद्रुत और दो लघु के योग से बनी ताल का प्रयोग वाद्य वादन मे किया जाता है। द्रविड़ संगीतज्ञों द्वारा इन्हे दश कहा गया है।

मरताले नकारः स्याङ्गणो ल ततो लगः।

ततश्च विन्दवश्चैव कल्पितं भचतुष्टयम् ॥36॥

पदच्छेदः-मरताले नकारः स्याङ्गणो ल ततो लगःततश्च विन्दवश्चैव कल्पितं भचतुष्टयम् ॥

भावार्थ- मरताले नगण (तीन लघु) कहलाता है भगण (एक गुरु दो लघु) तत्पश्चात बिन्दु और चार भगण होंगे।

पुनर्मठभकारश्च निःशब्दं च गुरुद्वयम् ।

आलापमध्ये चार्दुन्दुः सूरिभिश्च विरच्यते ॥37॥

पदच्छेदः-पुनर्मठ भकारश्च निःशब्दं च गुरु द्वयम् आलाप मध्ये चार्दुन्दुः सूरिभिश्च विरच्यते

भावार्थ-भकार को फिर से नि:शब्द करते हुये दो गुरु के पश्चात जब आलाप किया जाएगा तो वह अर्ध चंद्र की भांति प्रतीत होगा ऐसा विद्वानों के द्वारा रचा गया है।

गुरुबेहुकलायुक्ता प्लुतयुग्मं ततः परम् ।

ब्रह्मताले भवेत्तत्र नारदस्य मतं यतः ॥38॥

पदच्छेदः-गुरु बेहु कला युक्ता प्लुत युग्मं ततः परम् ब्रह्मताले भवेत्तत्र नारदस्य मतं यतः

भावार्थ-गुरु बहु कला से युक्त होता है प्लुत दो कलाओं से युक्त होता है इसका योग ब्रह्म मे देखने को मिलता है ऐसा नारद का मत है।

प्लुतमेकं लघुद्वन्द्वं निःशब्दो लत्रयं भवेत् ।

द्रुतमल्प (?) मया प्रोक्तो लघून्याश्यो निरूपितः ॥39॥

पदच्छेदः-प्लुतमेकं लघुद्वन्द्वं निःशब्दो लत्रयं भवेत् द्रुत मल्प मया प्रोक्तो लघून्याश्यो निरूपितः ॥ ३

भावार्थ-एक प्लुत हो दो लघु हो निशब्द हो लघु तीन हो तथा द्रुत का अल्प प्रयोग किया गया हो ऐसा मैंने लघु के विषय मे निरूपित किया है।

गीतझम्पाख्यके ताले व्यञ्जनं द्रुतमिश्रलः।

वाद्यं झम्पा विरामान्त्यं द्रुतद्वन्द्व च बन्धनम् ॥40॥

पदच्छेदः गीत झम्पाख्यके ताले व्यञ्जनं द्रुत मिश्रलः वाद्यं झम्पा विरामान्त्यं द्रुत द्वन्द्व च बन्धनम्

भावार्थ- गीत झम्पा नामक ताल मे व्यंजन और द्रुत गति (दीर्घता से) लघु मिश्र होते है। उसमे वाद्य झम्पा दो द्रुत के बीच मे विराम को बंधा जाएगा ।

ब्रह्माण्डतालेऽनुद्रुतो द्रुतसात्यं ह्यकल्पनम् (?)।

पद्रुतास्त्वर्धविन्दुश्च लघुश्चैव द्रुतद्वयम् ॥41॥

पदच्छेदः-ब्रह्माण्डताले अनुद्रुतो द्रुत सात्यंय ह्यकल्पनम् प द्रुतास्त्वर्ध विन्दुश्च लघुश्चैव द्रुत द्वयम्

भावार्थ-ब्रह्माण्ड ताल मे अणुद्रुत और द्रुत के साथ आदि और अंत की कल्पना करे, इस मे चार द्रुत अर्ध बिन्दु का होता है लघु और द्रुत होते है।

तद्भेदबिन्दुलश्चैव ततो मिश्रलघुद्वयम् ।

द्रुतद्वयं विरामान्त्यं रायकोलाहलः स्मृतः ॥42॥

पदच्छेदः-तद्भेद बिन्दुलश्चैव ततो मिश्र लघु द्वयम् द्रुत द्वयं विरामान्त्यं रायकोलाहलः स्मृतः

भावार्थ-रायकोलाहल के भेद मे बिन्दु और लय होते है तथा इसमे दो लघु मिले हुए हो और दो द्रुत के बीच मे विराम होगा।

द्रुतत्रयं लघुद्वन्द्वं त्रिरावृत्ता भका ततः ।

मातृकाद्वितयं चैव तालः प्रोक्तो महाशनिः ॥43॥

पदच्छेदः-द्रुतत्रयं लघुद्वन्द्वं त्रिरावृत्ता भका ततः मातृका द्वितयं चैव तालः प्रोक्तो महाशनिः

भावार्थ-तीन द्रुत, दो लघु, तीन आवृति भगण की दो वलय वाली मात्रिका इस ताल को महाशनि कहा जाता है।

अव्यक्तं व्यञ्जनं बिन्दु तिस्रो लघुः पुनः पुनः (?)।

व्यञ्जनं वलयं द्वन्द्वमव्यक्तं तिस्रलस्तथा ॥44॥

पदच्छेदः-अव्यक्तं व्यञ्जनं बिन्दु तिस्रो लघुः पुनः पुनः व्यञ्जनं वलयं द्वन्द्वम व्यक्तं तिस्रल स्तथा

भावार्थ- अव्यक्त (जिसको व्यक्त न किया जा सके) ऐसा व्यञ्जन बिन्दु जिसमे तीन लघु बार-बार वलय की भांति रखे जाए ।

तिसृलो व्यञ्जनो बिन्दु (:) तिसृमात्रेकमेव च ।

तिना भेरि रिति प्रोक्तो वाद्यविद्याविशारदैः ॥45॥ ।

पदच्छेदः-तिसृलो व्यञ्जनो बिन्दु(:) तिसृ मात्रेक मेव च तिना भेरि रिति प्रोक्तो वाद्य विद्या विशारदैः

भावार्थ-तीसरा लघु व्यञ्जन बिन्दु तीसरी मात्रिका और तिना की भेरी (आवाज़) को तिना कहते है। वाद्य विद्या मे विशारद द्वारा इन्हे तिना भेरी कहा गया है

गगनिःशब्दलच्चेकद्वितीयं लगलप्लुतम् ।

नगलो द्वौ द्रुतं दीप्तं यगणो लवलः स्मृताः॥46॥

पदच्छेदः गगनिः शब्द लच्चेक द्वितीयं लगल प्लुतम् नगलो द्वौ द्रुतं दीप्तं यगणो लवलः स्मृताः

भावार्थ- दो गुरु नि:शब्द एक लघु दूसरी बार लघु गुरु और प्लुत तत्पश्चात नगण गुरु व दो लघु ऐसे दो द्रुत वाले यगण को लवल कहा जाता है।

गुरवः सप्त विज्ञेयाः सरलानि च षोडश।

द्रुता विंशतिराख्यातास्तालो वाद्यगजाङ्कुशः ॥47॥

पदच्छेदः गुरवः सप्त विज्ञेयाः सरलानि च षोडश द्रुता विंशतिराख्या तास्तालो वाद्य गजाङ्कुशः ॥

भावार्थ- गुरु को सात और सरलता के साथ सोलह समझना चाहिए इसमे बीस द्रुत होते है, इस ताल को वाद्य गजांकुश कहा जाता है ।

अथ तालशब्दनिष्पत्तिः ।

तालशब्दस्य निष्पत्तिः प्रतिष्ठार्थेन धातुना ।

गीतं वाद्यं च नृत्यं च भाति ताले प्रतिष्ठितम् ॥48॥

पदच्छेदः-ताल शब्दस्य निष्पत्तिः प्रतिष्ठार्थेन धातुना गीतं वाद्यं च नृत्यं च भाति ताले प्रतिष्ठितम्

अनव्य-ताल-ताल, शब्दस्य-शब्द की, निष्पत्तिः-आविर्भाव व उत्पत्ति, प्रतिष्ठार्थेन-स्थापित (जैसे-मंदिर में मूर्ति प्रतिष्ठित करना, धातुना-गीतं-गीत, वाद्यं-वाद्य, च-व, नृत्यं-नृत्य,च-व, भाति-कांति व शोभा, ताले-ताल, प्रतिष्ठितम्-स्थापित

भावार्थ: नारद कृत संगीत मकरंद मे सर्वप्रथम ताल के दश अनिवार्य व महत्वपूर्ण तत्वों को प्राण के रूप मे स्थापित किया गया है ताल शब्द की निष्पत्ति ताल धातु से प्रतिष्ठता अर्थ मे हुए है जिसमे गीत, वाद्य व नृत्य सुशोभित होते है।

संयोगे च वियोगे च वर्तते च तयोर्द्वयोः।

स्थापितोऽपि दशप्राणैः स कालस्तालसंज्ञिकः ॥49॥

पदच्छेदः- संयोगे च वियोगे च वर्तते च तयोर्द्वयोः स्थापितो ऽपि दश प्राणैः स काल स्ताल संज्ञिकः

अनव्य- संयोगे-संयोग व मेल, च वियोगे-और विच्छेद, च वर्तते-सम्मुख या कटिबद्ध, च तयोर्द्वयोः स्थापितोऽपि-स्थापित, दशप्राणैः-दश प्राण, स कालस्तालसंज्ञिकः-काल व ताल की संज्ञा के साथ

भावार्थ: इसमे संयोग और वियोग मे दश प्राणों के साथ काल के अनुसार ताल की संज्ञा कही गयी है।

शिवशक्त्यात्मकं पुण्यं यशस्यं भुक्तिमुक्तिदम् ।

दशप्राणात्मकं तालं यो जानाति स तत्त्ववित् ॥50॥

पदच्छेदः-शिव शक्त्यात्मकं पुण्यं यशस्यं भुक्ति मुक्तिदम् दश प्राणात्मकं तालं यो जानाति स तत्त्ववित्

अनव्य- शिवशक्त्यात्मकं-शिव व शक्ति पुण्यं-पुण्य, यशस्यं-यश, भुक्तिमुक्तिदम्- भुक्ति मुखती देने वाला, दशप्राणात्मकं-दश प्रणा, तालं- ताल, यो जानाति- को जानने वाला, स तत्त्ववित्-तत्वज्ञ कहलाता है।

भावार्थ: दश प्राणत्मक ताल है वह शिव-शक्ति को समर्पित भुक्ति मुक्ति प्रदान करने वाला है। जो इन सब तत्व को जानता है उसे तत्वज्ञ कहते है।

कालमार्गक्रियाङ्गानिगृहजातिकलालयाः।

यतिप्रस्तारकं चैव तालप्राणा दशस्मृताः ॥51॥

पदच्छेदः- काल मार्ग क्रिया अङ्गानि गृह जाति कला लयाः यति प्रस्तारकं चैव ताल प्राणा दशस्मृताः

अनव्य-काल-काल या समय, मार्ग-मार्ग या पथ, क्रिया-क्रिया या कार्य को करना, अङ्गानि-अंग या खंड व भाग, गृह-ग्रहण करने का स्थान, जाति-जाति, कला-ताल का भाग, लयाः-लय, यति-नियम, प्रस्तारकं-विस्तार, चैव तालप्राणा-ताल के प्राण, दशस्मृताः दश स्मरणीय है।

भावार्थ- काल, मार्ग, क्रिया, अंग, गृह, जाति, कला से युक्त लय, यति से प्रस्तारक जो ताल है वही ताल के दश प्राण के नाम से स्मरणीय है।

अथकाललक्षणम्।

उपर्युपरि विन्यस्य पद्मपत्रशतं सकृत् ।

स कालःसूचिसंभेदात्तत्क्षणस्य कलं प्रति ॥52॥

पदच्छेदः- उपर्युपरि विन्यस्य पद्म पत्रशतं सकृत् स कालः सूचि संभेदा त्तत्क्षणस्य कलं प्रति

अनव्य-उपर्युपरि-एक के उपर एक, विन्यस्य-रखा जाए, पद्मपत्र-कमल का पत्ता, शतं-सौ, सकृत् स कालः-समय, सूचि-सुई संभेदात्तत्क्षणस्य-भेदन किया जाये, कलं प्रति- एक क्षण

भावार्थ-जैसे सौ पदम पत्र (कमल के पत्ते) एक के ऊपर एक रखे जाए और सुई से भेदन किया जाए उस भेदन मे जितना समय लगता है, उस समय को एक क्षण कहा जाता है।

लवः क्षणैरष्टभिः स्यात्काष्ठा चाष्टलवात्मिका।

अष्टकाष्ठा निमेषः स्यानिमेषैरष्टभिः कला ॥53॥

ताभ्यां चैव चतुर्भागचतुर्भानामनुद्रुतः (?)।

अनुद्रुताभ्यां बिन्दुश्च बिन्दुभ्यां तु लघुर्भवेत् ॥54॥

लघुद्वन्द्वं गुरुश्चैव त्रिलघु प्लुतमुच्यते।।

इतिमानगतिः प्रोक्ता तालज्ञैः पूर्वसूरिभिः ॥55॥

पदच्छेदः-लवः क्षणैरष्टभिः स्यात्काष्ठा चाष्टलवात्मिका अष्टकाष्ठा निमेषः स्यानिमेषैरष्टभिः कला ताभ्यां चैव चतुर्भाग चतुर्भा नामनु द्रुतः अनुद्रुताभ्यां बिन्दुश्च बिन्दुभ्यां तु लघु र्भवेत् लघु द्वन्द्वं गुरु श्चैव त्रिलघु प्लुत मुच्यते इति मान गतिः प्रोक्ता तालज्ञै: पूर्वसूरिभिः

भावार्थ- 8 क्षण=1 लव, 8 लव=1 काष्ठ, 8 काष्ठ=1 निमेष, 8 निमेष=1 कला, 2 कला=1 त्रुटि या अनुद्रुत, 2 त्रुटि या अनुद्रुत=1 द्रुत, 2 द्रुत=1 लघु, 2 लघु=1 गुरु, 3 गुरु=1प्लुत

अथमार्गलक्षणम् ।

दक्षिणो वार्तिकश्चैव तथा चित्रविचित्रकः ।

तथा चित्रतरस्तु स्यादतिचित्रतरो मतः॥56॥

षडवः कथितो मार्गस्तस्य रूपं निरूप्यते।

एतदेव नारदस्य मतमिष्टं यथाक्रमम् ॥57॥

भावार्थ अष्टमात्रा कला ज्ञेया मार्गे दक्षिणसंज्ञके ।

वार्तिकस्य तु चतुर्मात्रा कला चित्रा द्विमात्रिका ॥58॥

द्रुता चित्रतरे तस्या लघुश्चित्रतरो मतः ।

अतिचित्रतरो मार्गकलाश्च द्रुतसंज्ञिक: (?)॥59॥

पदच्छेदः- दक्षिणो वार्तिक श्चैव तथा चित्र विचित्रकः तथा चित्रतरस्तु स्यादति चित्रतरो मतः षडवः कथितो मार्ग स्तस्य रूपं निरूप्यते एतदेव नारदस्य मतमिष्टं यथा क्रमम् अष्ट मात्रा कला ज्ञेया मार्गे दक्षिण संज्ञके वार्तिकस्य तु चतुर्मात्रा कला चित्रा द्विमात्रिका द्रुता चित्रतरे तस्या लघुश्चित्रतरो मतः अतिचित्रतरो मार्ग कलाश्च द्रुत संज्ञिक

भावार्थ-ग्रंथकार द्वारा मार्ग के छः लक्षण इस प्रकार दिये गए है। दक्षिण, वार्तिक, चित्र, विचित्र, चित्रतर, अतिचित्रतर निरूपित किए गए है जिन्हे महर्षि नारद द्वारा स्वयं स्वीकार किया गया है। इन मार्गो मे आठ मात्रा का दक्षिण मार्ग है, चार मात्रा का वार्तिक मार्ग है, दो मात्रा वाला चित्र मार्ग है, लघु अर्थात एक मात्रा का विचित्र, लघु की आधी मात्रा के बराबर (द्रुत) चित्रतर व अणुद्रुत मात्रा का अतिचित्रतर होता है ।

मात्रालक्षणम् ।

लघ्वक्षराणां पञ्चानां मानमुच्चारणे हि तत् ।

तत्प्रसाणं परिज्ञेयं मार्गस्तालस्ततो बुधैः॥60॥

मार्गदेशीगतत्वे च तत्राद्यस्य क्रिया द्विधा ।

तद्विधं कथयिष्यामि नारदो मार्गलक्षणी(णम्) ॥61॥

पदच्छेदः-लघ्व क्षराणां पञ्चानां मान मुच्चारणे हि तत् तत्प्रसाणं परिज्ञेयं मार्गस्तालस्ततो बुधैः मार्ग देशी गतत्वे च तत्रा द्यस्य क्रिया द्विधा तद्विधं कथयिष्यामि नारदो मार्ग लक्षणी(णम्)

भावार्थ-पाँच लघु अक्षरो को मान कहते है, और उसका प्रमाण जान लेने से मार्ग व ताल का ज्ञान प्रपट होता है, मान की दो क्रिया होती है। नारद द्वारा मार्ग लक्षण कह कर इसे संबोधित किया गया है।

तत्र चावादनिष्कामं विक्षेपं च प्रवेशनम् ।

चतुर्विधं च कल्पेत निशब्दः कथितो वुधैः ॥ 62॥

पदच्छेदः-तत्र चावाद निष्कामं विक्षेपं च प्रवेशनम् चतुर्विधं च कल्पेत निशब्दः कथितो वुधैः

भावार्थ- इसमे आवाप, निष्क्रम, विक्षेप, प्रवेश इस प्रकार चार प्रकार की निशब्द क्रिया बताई गयी है।

शम्यतालो द्रुतश्चैव संनिपातस्तथा परम् ।

सशब्देन च संयुक्तो विज्ञेयश्च चतुर्विधः ॥63॥

पदच्छेदः-शम्यतालो द्रुतश्चैव संनिपातस्तथा परम् सशब्देन च संयुक्तो विज्ञेयश्च चतुर्विधः

भावार्थ- शम्यताल, द्रुत, सन्निपात, सशब्द इनके भी चार प्रकार स्वीकार किए गए है।

सर्वाङ्गुलिसमाक्षेप आपाद इति कीर्तितः ।

निष्कामोऽथ गतिस्तस्या अङ्गुलीनां प्रसारणम् ॥64॥

पदच्छेदः- सर्वाङ्गुलिसमाक्षेप ऑपाद इति कीर्तितः निष्कामोऽथ गतिस्तस्या अङ्गुलीनां प्रसारणम्

भावार्थ-आवाप-सभी अंगुलियों द्वारा आघात, निष्क्राम-अंगुलियों के प्रसारण का नाम निष्क्राम है।

तस्य दक्षिणतः कालो विक्षेप इति कथ्यते।

विवर्णनं च हस्तस्य प्रवेशोऽधोमुखस्य च ॥65॥

पदच्छेदः- तस्य दक्षिणतः कालो विक्षेप इति कथ्यते विवर्णनं च हस्तस्य प्रवेशो ऽधोमुखस्य च

भावार्थ-दाहिने हाथ के आक्षेप को विक्षेप कहते है, हाथ के फैलाने को प्रवेश कहते है।

तस्य हस्तनिपातस्तु शम्यतालस्तु वामतः ।

हस्तयो रुभयोर्घातौ संनिपातद्रुतौ स्मृतौ ॥66॥

एतदष्टप्रकारास्तु मार्गभेदा विवक्षिताः।

तत्रा(च)द्वित्रिचतुरकलासु प्रतियोगितः (नः) ॥67॥

पदच्छेदः-तस्य हस्तनि पातस्तु शम्य तालस्तु वामतः हस्तयो रुभयोर्घातौ संनिपात द्रुतौ स्मृतौ

भावार्थ-हस्त निष्पात को श्म्या ताल व दोनों हाथों के आघात को सन्निपात कहा जाता है। यह आठ प्रकार के मार्ग के भेद कहे गए है।

अथदेशीक्रिया।

देशीयोग्यं (ग्यान्) प्रवक्ष्यामि व्यापारान ध्रुवकादिकान् ।

ध्रुवका सर्पिणी कृष्या पद्मिनी च विसर्पिका ॥68॥

पदच्छेदः-देशीयोग्यं (ग्यान्) प्रवक्ष्यामि व्यापारान ध्रुवकादिकान् ध्रुवका सर्पिणी कृष्या पद्मिनी च विसर्पिका

भावार्थ-देशी योग्य अर्थात् ज्ञान ध्रुवकादि ज्ञान का विवेचन करते है यह आठ प्रकार की होती है, ध्रुवका, सर्पिणी, कृष्या, पद्मिनी, विसर्पिका

विक्षिप्ताख्या पताकाख्या मातृका त्वरिताष्टमी।

अमात्राणि(पि)विज्ञेया कथितं नारदेन च ॥69॥

पदच्छेदः- विक्षिप्ताख्या पताकाख्या मातृका त्वरिताष्टमी अमात्राणि (पि)विज्ञेया कथितं नारदेन च

भावार्थ-विक्षिप्ता, पताका, मातृका, त्वरिका इनको बिना मात्रा के भी जानना चाहिए ऐसा नारद द्वारा कहा गया है।

सशब्दो ध्रुवका ज्ञेया सर्पिणी वामगामिनी ।

कृष्या दक्षिणतः पातः पद्मिनी स्यादधोगता ॥70॥

पदच्छेदः- सशब्दो ध्रुवका ज्ञेया सर्पिणी वामगामिनी कृष्या दक्षिणतःपातःपद्मिनीस्यादधोगता

भावार्थ- ध्रुवका को सशब्द समझना चाहिए, सर्पिणी को वाम गामिनी समझना चाहिए, कृष्या दक्षिण गामिनी समझना चाहिए, पद्मिनी अधोगता (निम्नस्तरीय) समझना चाहिए।

विसर्पिका बहिर्याता विक्षिप्ता कुलजात्मिका ।

पताका चोर्ध्वगमना पतिता करपातना ॥71॥

पदच्छेदः -विसर्पिका बहिर्याता विक्षिप्ता कुल जात्मिका पताका चोर्ध्वगमना पतिता करपातना

भावार्थ- विसर्पिका बाहर जो जाने वाली समझना चाहिए, विक्षिप्ता अपने कुल मे रहने वाली समझना चाहिए, पताका उर्ध गामिनी (उपर की ओर जाने वाली) समझना चाहिए,तथा पताका कर पतिका भी काही जाती है।

दक्षिणमार्गमात्रानामानि ।

ध्रुवका सर्पिणी चैव पताका परिकथ्यते।

चतुर्मात्रा कला ज्ञेया वार्तिकेऽपि न योजयेत् ॥72॥

पदच्छेदः- ध्रुवका सर्पिणी चैव पताका परिकथ्यते चतुर्मात्रा कला ज्ञेया वार्तिकेऽपि न योजयेत्

भावार्थ- ध्रुवका, सर्पिणी, पताका चार चार मात्र की होती है। इसमे वर्तिका को भी योजित करना चाहिए।

ध्रुवकापतिते चित्रसरिचित्रादिकान् द्रुतान् (१)।

अनेनैव प्रकारेण कालमार्गक्रिया भवेत् ॥73॥

पदच्छेदः- ध्रुवका पतिते चित्रसरि चित्रादिकान् द्रुतान् (१) अनेनैव प्रकारेण काल मार्ग क्रिया भवेत्

भावार्थ-ध्रुवका, पतिता, चित्रसरि यह चित्रों के द्वारा चित्रगति को प्राप्त होती है, इस प्रकार से काल मार्ग की क्रिया होती है।

अथअङ्गानि।

अनुद्रुतो द्रुतश्चैव लघु गुर्रुस्ततः परम् ।

प्लुतश्चेति क्रमेणैव तालाङ्गानि च पञ्चधा ॥74॥

पदच्छेदः- अनुद्रुतो द्रुत श्चैव लघु गुर्रु स्ततः परम् प्लुत श्चेति क्रमेणैव ताला अङ्गानि च पञ्चधा

भावार्थ- इन पाँच अंगों अनुद्रुत, द्रुत, लघु, गुरु एवं प्लुत को इस प्रकार से संगीत मकरंद ग्रंथ मे लघु इत्यादि काल के अवयवों को अंगो के रूप मे प्रस्तुत किया गया है। तथा नारद द्वारा संगीत मकरंद मे ही अनुद्दत को सर्वप्रथम अंग के रूप मे प्रस्थापित किया गया है।

द्रुतस्य देवता शम्भुलघोश्चाद्रिपतेः सुता।

गौरी च श्रीश्चापि गुरोः प्लुते ब्रह्मादयस्त्रयः ॥75॥

पदच्छेदः- द्रुतस्य देवता शम्भु लंघो श्चाद्रिपतेः सुता गौरी च श्री श्चापि गुरोः प्लुते ब्रह्माद यस्त्रयः

भावार्थ- द्रुत आदि चार अंगों के देवता का भी वर्णन संगीत मकरंद मे किया गया है। द्रुत के देवता शंभू, लघु के देवता गौरी, गुरु के देवता शिव और गौरी, प्लुत के देवता ब्रह्मा, विष्णु, महेश है।

अथग्रहाः।

ग्रहास्त्रिधा समा नीतास्तथानागत इत्यपि (?)।

तल्लक्षणं च वक्ष्यामि नारदो मुनिपुङ्गवः ॥76॥

निकोतीते त्वतीतस्य तालातीते त्वनागतः ।

समः समग्रहः प्रोक्तस्तालज्ञैः पूर्वसूरिभिः ॥77॥

पदच्छेदः- ग्रहा स्त्रिधा समा नीता स्तथा अनागत इत्यपि तल्लक्षणं च वक्ष्यामि नारदो मुनिपुङ्गवः निकोतीते त्वतीतस्य तालातीते वनागतः समः समग्रहः प्रोक्तस्तालज्ञैः पूर्वसूरिभिः

भावार्थ-संगीत मकरंद मे तीन ग्रह का वर्णन है सम, अतीत, अनागत जिसका अर्थ है गीत आरंभ होने के बाद ताल का ग्रहण अतीत कहलाता है । गीत के पहले अर्थात पहले ताल फिर गीत का आरंभ अनागत ग्रह कहलाता है। तथा ताल व गीत का साथ मे आरंभ व ग्रहण सम ग्रह कहलाता है। यह लक्षण नारद मुनि द्वारा बताए गए है।

अथजातिःकथ्यते।

चतुरस्रस्तिसमिपस्तालं खंखाभिधे तथा (?)।

चतुर्विधो भवेत्तालस्तत्खरूपं निरूप्यते ॥ 78॥

पदच्छेदः- चतुरस्र त्रस्ति समिपस्तालं खंखा भिधे तथा चतुर्विधो भवेत्तालस्तत्खरूपं निरूप्यते

भावार्थ- ताल के चार प्रकार के भेद अर्थात ताल की जाति चतुरश्र, त्रयश्र, मिश्र, खंड कहे गए है।

तत्र चचत्पुटः प्रोक्तश्चतुरस्रो मनीषिभिः ।

तथा चाचुपुटस्तिस्त्रस्तथा भेदा भवन्ति च ॥79॥

पदच्छेदः- तत्र चचत्पुटः प्रोक्त श्चतुरस्रो मनीषिभिः तथा चाचुपुट स्तिस्त्रस्तथा भेदा भवन्ति च

भावार्थ- चचत्पुटः चतुरश्र जाति का तथा चाचपुट त्र्यश्र जाति का भेद है।

गुरुत्रयं समारभ्य द्विगुणं द्विगुणं क्रमात् ।

एवं पूर्वव्यतीते तु खं (?) षड्विधकल्पना ॥80॥

६।१२।२४।४८०९६ इयं जाति कला ज्ञेया।

पदच्छेदः-गुरुत्रयं समारभ्य द्विगुणं द्विगुणं क्रमात् एवं पूर्वव्यतीते तु खं (?) षड्विध कल्पना 6/12/24/48/98 इयं जाति कला ज्ञेया।

भावार्थ-गुरु के तीन तीन को प्रारम्भ करेंगे और दुगुन करते जाएंगे इस प्रकार को ध्यान मे रखते हुए इसके प्रकार की कल्पना की गयी है,जो इस प्रकार से है- 6/12/24/48/98 इसको जाति कला कहते है।

चतुर्गुरुं समारभ्य द्विगुणं द्विगुणं क्रमात् ।

शतं चाष्टाविंशतिश्च चैवं षड्धिकल्पना ॥81॥

४।८।१६।३२।६४।१२८। चतुरस्रजातिकला ज्ञेया।

पदच्छेदः-चतुर्गुरुं समारभ्य द्विगुणं द्विगुणं क्रमात् शतं चाष्टा विंशतिश्च चैवं षड्धि कल्पना 4।8।16।32।64।128। चतुरस्र जाति कला ज्ञेया।

भावार्थ- गुरु को चार-चार मे प्रारम्भ करेंगे और दुगुन करते जाएंगे इस प्रकार को ध्यान मे रखते हुए इसके प्रकार की कल्पना की गयी है, जो इस प्रकार से है-4/8/16/32/69/128 इसको चतुरश्र जाति कहा जाता है।

युग्मौ च मिश्रणान्मिश्रतालः प्रोक्तो विचक्षणैः ।

मिश्रतालमितिश्चैव नारदो मुनिरब्रवीत् ॥82॥

पदच्छेदः-युग्मौ च मिश्रणा न्मिश्रतालः प्रोक्तो विचक्षणैः मिश्रताल मितिश्चैव नारदो मुनिरब्रवीत्

भावार्थ-दोनो मिश्रित व अमिश्रित ताल व मिश्र ताल भी महिर्षि नारद द्वारा कही गयी है।

वियं (?) निवेश्य तालाङ्गैर्यथा तक्रियते बहु ।

भङ्गिभिश्च सताल: स्यात्तत्तालः खण्डसंज्ञकः ॥83॥

चतुरस्त्रजातिमध्यस्था गुरुश्च गुरुबहुविधा जातास्तदा लैश्चतुर स्रजातीनां खण्डा: विभागा भविष्यन्ति तत्र तदा खण्डार्थताला इति ख्याता जायन्ते ।

एते सर्पजातिसामान्या इति वाच्या इत्यर्थः ।

पदच्छेदः-वियं (?) निवेश्य तालाङ्गैर्यथा तक्रियते बहु भङ्गिभिश्च सताल: स्यात्तत्तालः खण्डसंज्ञकः चतुरस्त्र जाति मध्यस्था गुरुश्च गुरु बहुविधा जातास्तदा लैश्चतुर स्रजातीनां खण्डा: विभागा भविष्यन्ति तत्र तदा खण्डार्थ ताला इति ख्याता जायन्ते एते सर्पजाति सामान्या इति वाच्या इत्यर्थः।

भावार्थ- इस प्रकार रख कर के तालज्ञों द्वारा बहुत प्रकार से कहा गया है। भंगि के द्वारा सताल (ताल सहित) ततताल खंड संज्ञक होता है। चतुरस्र की जाति मध्यस होती है,और गुरु की गुरु की भांति प्रकार होते है। चतुरस्र जाति के कई खंड व विभाग होते है जिसमे खंडाभिताल भी कहा जाता है। इसे सामान्य रूप से सर्प जाति का भी कहा जाता है।

अथ लयकालो ज्ञेयः।

कालान्तरालवृत्तिर्याम्लकविल्व''''वत् ।

कथितो नारदेनैव काललक्षणवेदिना ॥84॥

पदच्छेदः-काल अन्तराल वृत्तिर्याम्लकविल्व''''वत् कथितो नारदेनैव काल लक्षण वेदिना

भावार्थ-काल के अंतराल मे वृत्ती (बायी तरफ) बेल (बेल के फल की पत्ती) की तरहा होती है। ऐसा काल के जानकारों व महर्षि नारद दारा कहा गया है।

धत्ते मध्याधंकालस्य मध्यकालस्वभावतः ।

विलम्बो दीर्घकालस्य त्रिकालस्त्विति निश्चितः ॥85॥

पदच्छेदः-धत्ते मध्याधं कालस्य मध्यकाल खभावतः विलम्बो दीर्घ कालस्य त्रिकाल स्त्विति निश्चितः

भावार्थ- मध्यकाल सुभावता (स्वाभाविक) होता है, दीर्घकाल लंबे समय तक चलता है इसी को त्रिकाल भी कहा जाता है।

अयनार्धे यतिः सम्यकीर्तितो भरतादिभिः।

एतन्मतं ममैवेति नारदो मुनिरब्रवीत् ॥86॥

पदच्छेदः-अयनार्धे यतिः सम्य कीर्तितो भरता दिभिः एतन्मतं ममैवेति नारदो मुनिरब्रवीत्

भावार्थ-अयन के आधे मे यति होती है, इसका वर्णन महर्षि भरत आदि मुनियों द्वारा भी कहा गया है, यही मत मेरा अर्थात स्वयं महर्षि नारद (मेरे द्वारा) भी व्यक्त किया गया है।

समश्रोतोवहयतिर्गोपुच्छा चेति सा त्रिधा (?)।

एकयोर्वलयो यस्य धृती सा स्यात्समाभिधा (?) ॥87॥

पदच्छेद - समश्रोतोवहयतिर्गोपुच्छा चेति सा त्रिधा (?) एकथोर्वलयो यस्य धृती सा स्यात्समाभिधा

भावार्थ- समा (समान लय वाली) , श्रोतोवह (स्तोत्र की भांति), गोंपुच्छा (गाय की पुंछ की भांति)यति के तीन प्रकार बताए गए है।इसमे एक एक वलय होता है उसी को घृती अर्थात घिसाव कहा जाता है।

द्रुतादयः क्रमाद्यत्र यतिः स्रोतोचहा मता।।

गोपुच्छा इति विज्ञेया द्रुतादीनां विपर्ययात् ॥88॥

पदच्छेदः- द्रुतादयः क्रमाद्यत्र यतिः स्रोतोचहा मता गोपुच्छा इति विज्ञेया द्रुता दीनां विपर्ययात्

भावार्थ-द्रुत क्रम से यति होती है वह स्तोत्र के अनुसार चलती है उसी को गोंपुच्छा यति कहा जाता है।

अथप्रस्तारः।

अन्येऽपि सन्ति भूयिष्ठास्तालास्ते लक्ष्यवर्त्मनः ।

प्रसिद्धविधिरत्रैव शास्त्रेऽस्मिन्प्रतिपादितः॥89॥

पदच्छेदः-अन्येऽपि सन्ति भूयिष्ठास्तालास्ते लक्ष्य वर्त्मनः प्रसिद्ध विधिरत्रैव शास्त्रे ऽस्मिन्प्रतिपादितः

भावार्थ-कुछ अन्य ताल भी कहे गए है जो बहुत बड़े-बड़े है, जिनकी संख्या लाखों मे है। यहा पर केवल प्रसिद्ध विधि को कहा गया है जिनका इस शास्त्र मे प्रतिपादन किया गया है।

तथेति तक्रयार्थंतु (?) लघूपाया भवन्त्यमी।

प्रस्तारसङ्ख्या नष्टं चोद्दिष्टं पातालकस्तथा ॥90॥

द्रुतमेरुघुमेरुर्गुरुमेरुः प्लुतस्य च।

मेरु: संयोगमेरुश्च खण्डप्रस्तारकं तथा ॥91॥

पदच्छेदः-तथेति तक्रयार्थंतु (?) लघूपाया भवन्त्यमी प्रस्तार सङ्ख्या नष्टं चोद्दिष्टं पाताल कस्तथा द्रुतमेरु लघुमेरु र्गुरुमेरुः प्लुतस्य च मेरु: संयोग मे रुश्च खण्डप्रस्तारकं तथा

भावार्थ-उसी प्रकार इसे लघु उपाय भी कहा गया है, प्रस्तार की संख्या नष्ट हो चुकी है। परन्तु पाताल को ग्रंथकार ने द्रुतमेरु, लघुमेरु, र्गुरुमेरु, प्लुत मेरु संयोगमेरु इसको खंड प्रस्तारक कहा जाता है।

प्राचां चतुर्णा मेरूणां नष्टोद्दिष्टं पृथक पृथक् ।

एकोनविंशतिरिति प्रेतिस्थानं ब्रुवेऽधुना ॥92॥

पदच्छेदः- प्राचां चतुर्णा मेरूणां नष्टोद्दिष्टं पृथक पृथक् एकोनविंशतिरिति प्रेतिस्थानं ब्रुवेऽधुना

भावार्थ-प्राचीन लोगो के द्वारा चार ही मेरु बताए गए है, जो की पृथक-पृथक है, वस्तुत: इनके उन्नीस भेद है, प्रत्येक के स्थान यहा कहे जाएंगे।

प्रस्तारोयथा

न्यस्याल्पमध्यमहतोऽधस्ताक्षेपं यत्नोपरि (?)।

प्रागूने वामधः स्थाप्यं संभवे महतो लिखेत् ॥93॥

पदच्छेदः-न्यस्याल्प मध्य महतो ऽधस्ताक्षेपं यत्नोपरि (?) प्रागूने वामधः स्थाप्यं संभवे महतो लिखेत्

भावार्थ- अल्प और मध्यम रख कर के नीचे से यत्न पूर्वक आक्षेप करना चाहिए प्राग (सामने) फिर वाम भाग मे नीचे स्थापित कर के प्रस्तार करना चाहिए ।

अल्पानसंभवे तालपूत्यैं भूयोऽप्ययं विधिः।

सर्वद्रूतावधिः कार्यः प्रस्तारोऽयं लघौ गुरौ ॥94॥

पदच्छेदः-अल्पान संभवे ताल पूत्यैं भूयोऽप्ययं विधिः सर्वद्रूतावधिः कार्यः प्रस्तारोऽयं लघौ गुरौ

भावार्थ-तालपूर्ति मे अल्प करना असंभव है सभी मे द्रुत से करना चाहिए इसी प्रस्तार मे लघु व गुरु समझना चाहिए ।

प्लुतो व्यस्ते नन्यते च चाक्षराणि चतुर्विधम् (?)।

संज्ञया तत्परिज्ञेयं प्लुतं लघुगुरुप्लुतम् ॥95॥

पदच्छेदः - प्लुतो व्यस्ते नन्यते च चाक्षराणि चतुर्विधम् (?) संज्ञया तत्परिज्ञेयं प्लुतं लघुगुरुप्लुतम्

भावार्थ-प्लुत मे चार अक्षर मानने चाहिए उसकी संज्ञा को लघु गुरु प्लुत मे जाननी चाहिए।

प्रत्येकं तु प्लुतादीनां भवेत्कार्यसपञ्चकम् (?)।

अनुद्रुतमर्धचन्द्रं व्यञ्जनं चारु नासिकम् ॥96॥

पदच्छेदः - प्रत्येकं तु प्लुतादीनां भवेत्कार्यसपञ्चकम् (?) अनुद्रुतमर्धचन्द्रं व्यञ्जनं चारु नासिकम्

भावार्थ- प्रत्येक मे प्लुत आदि को पाँच-पाँच बार करना चाहिए, अणुद्रुत अर्धचंद्र वयंजन (नासिका की सहायतासे बोले जाने वाले शब्द) की भांति होता है।

अव्यक्तं चेति पञ्चैते पर्यायाख्यमअनुद्रुते ।

अर्धमात्रद्रुतं व्योम वलयं बिन्दुके द्रुतम् ॥97॥

पदच्छेदः अव्यक्तं चेति पञ्चैते पर्यायाख्यमअनुद्रुते अर्धमात्रद्रुतं व्योम वलयं बिन्दुके द्रुतम्

भावार्थ- अव्यक्त अक्षर पाँच प्रकार के होते है, अर्ध मात्रा वाले व्योम कहलाते है। और वलय बिन्दु का चिन्ह बिन्दु के माध्यम से समझना चाहिए।

लघु नियामकं हस्वमात्रतालरसं तथा।

द्विमानं च कला वक्र दीर्घ च गुरु कीर्तनम् ॥98॥

पदच्छेदः- लघु नियामकं हस्व मात्र तालरसं तथा द्विमानं च कला वक्र दीर्घ च गुरु कीर्तनम्

भावार्थ-लघु हस्व (छोटा) का वियामक है, और ताल इसके अनुसार चलती है द्विमात्रिक कला को कहते है वक्र दीर्घ गुरु द्विमात्रिक कहलाते है।

प्लुतत्रयं त्रिमात्रं च दीप्तं तालत्रयं तथा ।

अनुद्रुतस्वरूपं च तद्भालेन्दुकलात्मकम् ॥99॥

पदच्छेदः प्लुत त्रयं त्रिमात्रं च दीप्तं ताल त्रयं तथा अनु द्रुतखरूपं च तद्भालेन्दुकलात्मकम्

भावार्थ-प्लुत त्रिमात्रिक कहलाता है, दीप्तं त्रिताल का होता है, अणुद्रुत का स्वरूप अर्धचंद्राकार होता है।

द्रुतस्तु वलयाकारो लघुरूर्वशराकृतिः।

गुरुर्वक्रधनुर्जेयं प्लुतस्य शिखरो गुरुः ॥100॥

पञ्चाङ्गानां स्वरूपादि कथितं नारदेन च ।

पदच्छेदः- द्रुतस्तु वलयाकारो लघु गरूवंश आकृतिः गुरुर्वक्र धनुर्जेयं प्लुतस्य शिखरो गुरुः पञ्चाङ्गानां स्वरूपादि कथितं नारदेन च ।

भावार्थ- द्रुत वलयकार,लघु उर्द्धव वाण की आकृति का होता है गुरु (वक्र) बड़े धनुष की भांति होता है, प्लुत को पर्वत की आकृति का समझना चाहिए यह पाँच अंगो का स्वरूप महर्षि नारद द्वारा कहा गया है।

इतिश्री नारदकृतौ सङ्गीतमकरन्दे नृत्याध्याये तालदशनिरूपणं नाम

तृतीयः पादः समाप्तः ।

महर्षि नारद द्वारा सङ्गीत मकरन्द नृत्याध्याय ताल दश निरूपण नाम का तृतीयः पादः पूर्ण होता है।

*****

नृत्याध्याये चतुर्थः पादः।

अथ मृदङ्गोत्पत्तिलक्षणमाह

चन्दनं सुकुमारं च सुवृक्षं च मनोहरम् ।

वक्रकोटर वज्रय हि आनयेद्देवदारुकम् ॥1॥

अनव्य-चन्दनं सुकुमारं च सुवृक्षं च मनोहरम् वक्रकोटर वज्रय हि आनयेद्देवदारुकम्

भावार्थ -मृदंग सूवृक्ष से बनना चाहिए जो मनोहर को जिसमे कोई भी छिद्र या दोष नही होना चाहिए तथा जो टेढ़ा या कटा ना हो मृदंग के लिए सूवृक्ष व चन्दन के वृक्ष की लकड़ी का ही प्रयोग करना चाहिए।

अष्टषष्टिभिरित्यन अङ्गुलीपर्वसंमितैः ।

गणयेन्मृदङ्गोन्नत्यं प्रमाणं प्राह यन्मुनिः ॥2॥

अनव्य-अष्टषष्टिभिरित्यन अङ्गुलीपर्वसंमितैः गणयेन्मृदङ्गोन्नत्यं प्रमाणं प्राह यन्मुनिः

भावार्थ-मुनियों द्वारा यह कहा गया है की मृदंग अड़सठ अंगुल का होना चाहिए तथा

द्वात्रिंशत्सर्वसङ्ख्ये तु मध्ये तत्र नियोजयेत् ।

मृदङ्गस्य मुखे द्वे च पर्व षोडश षोडश ॥3॥

अनव्य-द्वात्रिंशत्सर्वसङ्ख्ये तु मध्ये तत्र नियोजयेत् मृदङ्गस्य मुखे द्वे च पर्व षोडश षोडश

भावार्थ-इसके बीच का भाग बत्तीस अंगुलियों का होना चाहिए। मृदंग मे दो भाग होते है जो सोलह-सोलह अंगुल (पर्व) के होते है।

शिवशक्तिमयौ प्रोक्तौ चौंचक्रममुच्यते (?)।

दक्षिणे शिवसम्बन्धो वामे शक्तिसमन्वितः ॥4॥

अनव्य-शिवशक्तिमयौ प्रोक्तौ चौंचक्रममुच्यते दक्षिणे शिवसम्बन्धो वामे शक्तिसमन्वितः

भावार्थ-मृदंग के दोनों तरफ के मुख को शिव व शक्ति से संबोधित किया गया है जिसमे दक्षिण मुख शिव व वाम मुख को शक्ति कहा जाता है।

स पत्रिंशति (?) छन्दांसि तन्तवो बन्धनं ततः।

ब्रह्मविष्णुमहेशानां बन्धनं ग्रन्थिका भवेत् ॥5॥

अनव्य स पत्रिंशति (?) छन्दांसि तन्तवो बन्धनं ततःब्रह्मविष्णुमहेशानां बन्धनं ग्रन्थिका भवेत्

भावार्थ- मृदंग मे त्रिसठ डोरी होनी चाहिए और इन डोरियों की गांठ ब्रम्हा विष्णु व महेश के नाम की होनी चाहिए ।

समपादतले कृत्वा गृहीत्वा वादनं क्रमात् ।

नमस्कृत्य उभौ हस्तौ समवाद्यं च कारयेत् ॥6॥

अनव्य-समपादतले कृत्वा गृहीत्वा वादनं क्रमात् नमस्कृत्य उभौ हस्तौ समवाद्यं च कारयेत्

भावार्थ- समपद (समान संख्या वाली ताल) ध्वनि से शुरुवात होनी चाहिए वादन मे दोनों हाथों से नमस्कार करने के बाद ही वादन करना चाहिए।

तद्धितोटयशब्देन पञ्चाङ्गुलि निवेदयेत् ।

दक्षिणे चाङ्गुली द्वे च वामे करतलेन च ॥7॥

अनव्य- तद्धितोटयशब्देन पञ्चाङ्गुलि निवेदयेत् दक्षिणे चाङ्गुली द्वे च वामे करतलेन च

भावार्थ- तोटय (त्रोटक) छंद से पंचाअंगुली से निवेदन करना चाहिए तथा दाहिने हाथ के उंगली व बाएँ हाथ के करतल से वादन करना चाहिए

समध्वनिसमायुक्तं श्रूयते पुत्रवर्धनम् ।

राज्याभिवृद्धिरतुलं रणे शत्रुपलायनम् ॥8॥

अनव्य- समध्वनिसमायुक्तं श्रूयते पुत्रवर्धनम् राज्याभिवृद्धिरतुलं रणे शत्रुपलायनम्

भावार्थ- सम ध्वनि मंगल कार्यों मे करनी चाहिए जिससे पुत्र की प्राप्ति, राज्य मे वृद्धि होती है तथा रण

(युद्ध भूमि) मे वादन करने से शत्रु पलायन कर जाते है

एकमेकं भिन्नरूपं ध्वनि यत्र शृणोति यः ।

शिवनादे भवेद्याधिः शक्त्या दारिद्यमाप्नुयात् ॥9॥

अनव्य-एकमेकं भिन्नरूपं ध्वनि यत्र शृणोति यः शिवनादे भवेद्याधिः शक्त्या दारिद्यमाप्नुयात्

भावार्थ-शिव के नाद से मंगल व शक्ति के नाद से दरिद्रता उत्पन्न होती है इसलिए इसका वादन एक साथ करना चाहिए।

(इति मृदङ्गलक्षणम् ।)

अरेखा सारिणी चैव सम्प्रसारी ततः परम् ।

समगैकैव कैवालं हस्तसंयुक्तमेव च ॥10॥

अरेखा सम्पुटीयुक्ते पुरोदृष्टिमवेक्षते।

सारिणी दक्षिणभुजे करौ खण्ड्युतौ द्रुतौ ॥ 11॥

अनव्य- अरेखा सारिणी चैव सम्प्रसारी ततः परम् समगैकैव कैवालं हस्तसंयुक्तमेव च अरेखा सम्पुटी युक्ते पुरो दृष्टिम वेक्षते सारिणी दक्षिण भुजे करौ खण्ड्युतौ द्रुतौ

भावार्थ नारद द्वारा मृदंग के लक्षण इस प्रकार बताए गए है आरेख (रेखा रहित) सारणी करके प्रसार पूर्वक हस्त संयुक्त होना चाहिए जिस तरह से हाथ को संपुटित करके सामने देखते हुए (जैसे किसी

के सामने हाथ जोड़ते हुए जो आकृति बनती है उसी प्रकार के आकार वाला होना चाहिए।) संपुटित आरेख (रेखा रहित) मे चारो तरफ से पाँच पाँच बिन्दुऐ होनी चाहिए।

प्रसारिणी वामभुजे हस्ते हस्तकनिष्टिके ।

अङ्गुली कङ्कणाभावे वेष्टितावन आन्त्यकौ ॥12॥

समगैकेति विख्याता हस्तौ वामस्तने धृतो।

कैवालं दक्षिणकुचे लग्नौ चूचुकदर्शनम् ॥13॥

चतुरं च कुवलं च धृतहस्तमनूरणम्। ।

परिक्रमं च पञ्चैते चासंयुतमतं विदुः ॥14॥

अनव्य-प्रसारिणी वामभुजे हस्ते हस्त कनिष्टिके अङ्गुली कङ्कणा भावे वेष्टि तावन आन्त्यकौ समगैकेति विख्याता हस्तौ वामस्तने धृतो कैवालं दक्षिणकुचे लग्नौ चूचुकदर्शनम् चतुरं च कुवलं च धृतहस्तमनूरणम् परिक्रमं च पञ्चैते चासंयुतमतं विदुः

भावार्थ- कनिष्ठका उंगली को ऊंचा करके बलय (अर्थात मणिबंध) को विधिवत आघात करते हुए और

वाम भाग के वलय से भी आघात करना चाहिए

चतुरं कमलं हस्तमुन्नतपादक्षिणे।

वामे पताकवट्टत्ता चलनं च कुवालकम् ॥ 15॥

कनिष्ठाङ्गुलिमुच्चेन वलये धृतहस्तकम् ।

समपादतलौ दृष्टिपाचेकैककरो मतः ॥16॥

अनव्य- चतुरं कमलं हस्तमुन्नतपादक्षिणे वामे पताकवट्टत्ता चलनं च कुवालकम् कनिष्ठाङ्गुलिमुच्चेन वलये धृतहस्तकम् समपादतलौ दृष्टिपाचेकैककरो मतः

भावार्थ- कनिष्ठ अंगुली को ऊंचा करके बलय (मणिबंध) को विधिवत हाथ रखते हुए आघात करना चाहिए

ससर्पफणिपद्येन उध्वान्लपुरो यदि।

दक्षिणे कटिनृत्यं च करोति च मनूरणम् ॥ 17 ॥

वामपार्श्वे तु वलयं हस्तं यत्र करोति सः।

तर्जन्यङ्गष्टकं रन्ध्र परिक्रममुदीरितम् ॥ 18॥

अनव्य- ससर्पफणिपद्येन उध्वान्लपुरो यदि दक्षिणे कटिनृत्यं च करोति च मनूरणम् वाम पार्श्वे तु वलयं हस्तं यत्र करोति सःतर्जन्य ङ्गष्टकं रन्ध्र परिक्रम मुदीरितम्

भावार्थ-वाम भाग के बलय से भी विधिवत आघात करना चाहिए, तर्जनी अंगुली से (गोलाकार चित्र की तरह बनते हुए) आघात करना चाहिए।

कुरुडायी चित्रतरं तथा चित्रकलीति च।

घनरवं नागवन्धं चक्रभ्रमरिका तथा ॥19॥

अतिचक्रभ्रमरी विधृतभ्रमरिका ततः।

अष्टनमरिकाण्येव नारदेन विचर्चिता ॥ 20॥

कुरुडायी शिरोभ्राम्यं स्थितं दक्षिणपार्श्वके ।

पार्श्वे दृष्टिर्विषपदा उच्चोचगमनं ततः ॥ 21 ॥

अनव्य कुरुडायी चित्रतरं तथा चित्रकलीति च घनरवं नागवन्धं चक्रभ्रमरिका तथा अतिचक्रभ्रमरी विधृत भ्रमरिका ततःअष्ट नमरिकाण्येव नारदेन विचर्चिता कुरुडायी शिरोभ्राम्यं स्थितं दक्षिण पार्श्वके पार्श्वे दृष्टि र्विषपदा उच्चोच गमनं ततः

भावार्थ- महर्षि नारद का ऐसा मत है कि इसका वादन अतिचक्र भवरी व अष्ट भ्रमरीका की भांति वादन करना चाहिए।

शिरोभ्रमणम्।

शिरोभ्रमण के विषय मे संगीत मकरंद के नृत्याध्याय के चतुर्थ पाद मे श्लोक संख्या 22 से 43 पर्यंत गात्र विक्षेप (शरीर) शिरोभ्रमण और विविध हस्त आदि के संचालन और प्रदर्शन को वर्णित किया गया है, जो इस प्रकार से है । यत्र तत्र मूल पाण्डुलिपि मे अक्षर लुप्त होने के कारण वाक्य संगति बैठना असंभव सा प्रतीत होता है। इस पाद मे ग्रंथकार ने शिरोभ्रमण से संबन्धित भावों को प्रस्तुत किया है।

वामे कटिभ्रमणकं विक्षेपं पा’’"णे ।

वामस्कन्धं च दृष्टिं च स्थाप्यचित्रकुली तथा ॥ 22॥

भ्रमणं दक्षिणकटे (टौ) पादं विक्षिप्य वामके ।

वामस्कन्धे दृष्टिं’’’घनरवं भ्रमणं च तत् (?) ॥ 23 ॥

अनव्य- शिरो भ्रमणम् वामे कटि भ्रमणकं विक्षेपं पा’’"णे वाम स्कन्धं च दृष्टिं च स्थाप्य चित्रकुली तथा भ्रमणं दक्षिण कटे (टौ) पादं विक्षिप्य वामके वाम स्कन्धे दृष्टिं’’’घनरवं भ्रमणं च तत् (?)

भावार्थ-यहा पर ग्रंथकार ने सिर से नख पर्यंत अंग के संचालन मे निर्देश दिया है-जैसे वाम भाग के कटि भ्रमण (कमर को घुमाना) का कटिभ्रमण करते हुए हाथ को संचालित करना हाथ को स्थापित

करना और वाम स्कन्ध पर दृष्टि साथपित करते हुए ठोड़ी (चिबुक)को वाम स्कन्ध की तरफ रखना और दक्षिण कटी (कमर) पर हाथ रखते हुए बाएँ पैर से आघात करना।

शिरोभ्रमणकं कृत्वा स्कन्धमध्ये निवेदयेत् ।

समदृष्टिः समगतिर्नागबन्धं कराङ्गुलिम् ॥ 24 ॥

अनव्य- शिरो भ्रमणकं कृत्वा स्कन्ध मध्ये निवेदयेत् सम दृष्टिः समगति र्नागबन्धं करा अङ्गुलिम्

भावार्थ-वाम स्कन्ध मे दृष्टि करते हुए गर्दन को एक तरफ घूमाना, सिर को घुमाते हुए कंधे के मध्य मे रखना और सम गति से नागबन्ध करते हुए कटी के समीप रखना ।

कट ऊर्ध्वं भ्रमणकं कटे लग्नं तु वामकम् ।

वामपार्श्वे तु गमनं चक्रभ्रमरिका भवेत् ॥ 25 ॥

सदैव भ्रमणं कुर्याद्धस्तो दक्षिणकव्यपि (?)।

निवेश्य दक्षिणगतिरतिभ्रमरकं भवेत् ॥ 26 ॥

अनव्य- कट ऊर्ध्वं भ्रमणकं कटे लग्नं तु वामकम् वामपार्श्वे तु गमनं चक्रभ्रमरिका भवेत् सदैव भ्रमणं कुर्याद्धस्तो दक्षिण कव्यपि (?) निवेश्य दक्षिण गति रति भ्रमरकं भवेत्

भावार्थ-अंगुलियो से कटी को पकड़ना कटी के ऊपरी भाग मे गर्दन को बायीं ओर घुमाना और बाएँ हाथ की तरफ उसी तरह चारों दिशाओं मे घुमाना हाथ को दक्षिण कटी पर रखते हुए उसी तरहा दक्षिण दिशा मे भ्रमण (परिक्रमा) के क्रम से घुमाना है।

सर्वाङ्गभ्रमणं कुर्यात्समदृष्टिरधो द्वयोः।

मध्ये मध्ये च नटनं धृतभ्रमरिका भवेत् ॥ 27 ॥

अनव्य- सर्वाङ्ग भ्रमणं कुर्यात्सम दृष्टिरधो द्वयोः मध्ये मध्ये च नटनं धृत भ्रमरिका भवेत्

भावार्थ-तत्पश्चात दृष्टि को नीचे झुका कर के बीच-बीच मे भवरे की भांति नृत्य करते हुए सभी अंगों को घुमाना है।

बोटावणी चिगुरुश्च समगात्रं यथाक्रमम् ।

वीरगात्रं विषमकमर्धगात्रं तथैव च ॥ 28॥

अनव्य- बोटा वणी चिगुरुश्च समगात्रं यथा क्रमम् वीरगात्रं विषम कमर्धगात्रं तथैव च

भावार्थ- शरीर को स्थिर रखते हुए ठोड़ी (चिबुक) व गर्दन को दायें बाएँ घुमाना है।

वीरगात्रफणीवालं चिटिबोटवणिस्तथा ।

शिरांसिन वसङ्ख्यानि नारदस्य मतानि तु ॥29॥

अनव्य- वीर गात्र फणीवालं चिटि बोट वणि स्तथा शिरांसिन वसङ्ख्यानि नारदस्य मतानि तु

भावार्थ-सिर के प्रत्येक अंग (आखें, नाक, कान, भ्रकुटी, अधर, मस्तक पर बल देना इत्यादि)को संचलित करना है ऐसा नारद ने शिरोभ्रमण के विषय मे बताते हुए कहा है।

उन्नतं च शिरःकृत्वा भ्रूविक्षेपश्च वीक्षकैः ।

उद्धृतौ च करौ कृत्वा चलनं बोटवेणिकम् ॥ 30 ॥

अनव्य- उन्नतं च शिरःकृत्वा भ्रूवि क्षेपश्च वीक्षकैः उद्धृतौ च करौ कृत्वा चलनं बोटवेणिकम्

भावार्थ-ऊपर को सर कर के नीचे की ओर (धरती) देखना, ऊपर की तरफ दोनों हाथ कर के धीमी गति से चलना है।

वामहस्ते शिरः स्थाप्य (?) कटाक्षैर्वीक्षितो गतिः ।

मध्ये मध्ये च गमकं चिगुरुः कथ्यते बुधैः ॥ 31 ॥

अनव्य-वाम हस्ते शिरः स्थाप्य (?) कटाक्षै र्वीक्षितो गतिः मध्ये मध्ये च गमकं चिगुरुः कथ्यते बुधैः ॥

भावार्थ-बाएँ हाथ को सिर के ऊपर रख कर कटाक्ष (क्रोधित)की दृष्टि से देखना है, और बीच बीच मे सिर को घूमते हुए इधर-उधर देखना है।

तथैव दक्षिणे हस्ते स्थापयेच शिरो दृशः ।

मध्यमध्ये विरामं च समगानमिति स्मृतम् ॥ 32 ॥

अनव्य-तथैव दक्षिणे हस्ते स्थापयेच शिरो दृशः मध्य मध्ये विरामं च सम गानमिति स्मृतम्

भावार्थ-ऐसा ही दाहिने हाथ से उसी तरहा से सिर के ऊपर दृष्टि करनी है, बीच बीच मे विराम लेते हुए शरीर को स्थिर रखना है।

अधोदृष्टिशिरा:पातवदनं चिह्नतालुकम् (?) ।

....."तं वरगात्रमिति स्मृतम् ॥ 33॥

अनव्य-अधो दृष्टि शिरा:पातवदनं चिह्न तालुकम् (?) ....."तं वर गात्रमिति स्मृतम्

भावार्थ-नीचे की ओर दृष्टि करते हुए सिर को नीचे ऊपर करना है, जैसे जीभ तालु मे उल्टा करते है इसी प्रकार से शरीर संचालन की विधि बतलाई गयी है।

अर्धपार्श्वगतिं शीर्ष वक्रकटिसमन्वितम् ।

वामहस्तेऽङ्गुलितटं कटकं विषगात्रकम् ॥ 34 ॥

अनव्य-अर्ध पार्श्व गतिं शीर्ष वक्र कटि समन्वितम् वाम हस्ते अङ्गुलि तटं कटकं विष गात्रकम्

भावार्थ-आधा सिर बगल मे थोड़ा सा सिर पीछे की ओर टेढ़ा कर के सिर को ऊपर करते हुए वाम हाथ की अंगुली को काटि मे रखते हुए सिर का संचालन करना है।

अर्धगात्ररञ्जिशिरः पुरोहस्तौ कटीतटौ ।

धृत्वा रञ्जितसर्वत्रनृत्यं नृत्यं च कोहलम् ॥ 35 ॥

अनव्य-अर्ध गात्रर ञ्जिशिरः पुरो हस्तौ कटी तटौ धृत्वा रञ्जित सर्वत्रनृत्यं नृत्यं च कोहलम्

भावार्थ-शरीर को मोड़ते हुए दोनों हाथ कमर पर रख कर चारों दिशाओं चरणो से धरती पर आघात व शोर (कोलाहल)करते हुए नृत्य करना।

तथैव वामजङ्घोरु शिरो निक्षिप्य दृष्टयः ।

गमनं च फणीवालं....."भवेत्तथा ॥ 36॥

अनव्य- तथैव वाम जङ्घोरु शिरो निक्षिप्य दृष्टयः गमनं च फणीवालं....."भवेत्तथा

भावार्थ-बाएँ जांघ पर हाथ रख कर बाएँ जांघ की ओर दृष्टि करते हुए इसी तरहा से धीरे-धीरे आगे की ओर चलना है।

अन्तःशिरो बाह्यशिरो(रः) ऊर्ध्वाधो बाहुकुटनम् ।

भ्रमति भ्रम्यचतुरो विटभाटावणिक्रमम् ॥ 37॥

चित्रं चैवातिचित्रं च विन्दन्ति सम एव च (?)।

चत्वारश्चरणा भेदाः कथिता नारदेन च ॥ 38॥

अनव्य-अन्तः शिरो बाह्य शिरो(रः) ऊर्ध्वाधो बाहु कुटनम् भ्रमति भ्रम्य चतुरो विटभाटावणिक्रमम् चित्रं चैवातिचित्रं च विन्दन्ति सम एव च (?) चत्वार श्चरणा भेदाः कथिता नारदेन च

भावार्थ-भीतर की ओर, बाहर की ओर व ऊपर की ओर हाथ करके बाहों को सिकोड़ते हुए चारों दिशाओं मे भ्रमण करना है। जिससे ऐसा प्रतीत हो की नृत्य करते हुए चल रहा हो, शिरोभ्रमण के चार चरण व भेद महर्षि नारद द्वारा कहे गए है।

वक्रपादाङ्गुलीरम्यं नटभावं विनिर्दिशेत् ।

नीचोचगमनं कुर्याचित्रलक्षणमुच्यते ॥ 39 ॥

अनव्य- वक्र पादाङ्गुली रम्यं नटभावं विनिर्दिशेत् नीचोच गमनं कुर्याचित्र लक्षणमुच्यते

भावार्थ-पैर को टेढ़ा करते व हाथ की अंगुली को सीधा करते हुए नट भाव को प्रदर्शित करते हुए नीचे की ओर दृष्टि करते हुए नीचे व ऊंचे पैर करते हुए नृत्य करना चाहिए। इस प्रकार की शारीरिक क्रिया को चित्र लक्षण कहा जाता है।

उभौ पादाङ्गुली वक्रो (के) कृत्वा गमनमादिशेत् ।

मध्ये भ्रमणकं कुर्यादतिचित्रं वदन्ति च ॥40॥

पादमालाङ्गुलौ गम्यमधोहस्तौ कृती नटः।

अर्धपार्श्ववक्रभेदं भवेद्विदन्ति तालगाः ॥41॥

समपादौ समादृष्टिः समचारीकृतान्विताः।

समभ्रमणनटनः सममित्युच्यते बुधैः ॥ 42 ॥

अनव्य-उभौ पादाङ्गुली वक्रो (के) कृत्वा गमन मादिशेत् मध्ये भ्रमणकं कुर्यादति चित्रं वदन्ति च पादमाला अङ्गुलौ गम्यमधो हस्तौ कृती नटः अर्ध पार्श्व वक्र भेदं भवे द्विदन्ति तालगाः सम पादौ समा दृष्टिः सम चारी कृतान्विताः सम भ्रमण नटनः सम मित्युच्यते बुधैः

भावार्थ-दोनों पैर की अंगुलियों को टेढ़ा करके विचित्र ढंग से चलते हुए (पंजो से चलना) नीचे की ओर हाथ करते हुए नृत्य करना चाहिए आधा थोड़ा सा टेढ़ा (किनारे) हो कर के ताल के अनुसार शरीर का संचालन करना चाहिए, इसी को सम भ्रमण नृत्य कहा जाता है इसको सुंदर व अच्छा नृत्य माना जाता है।

त्रयस्त्रिंशन्नटीभावाः सर्वदेशेषु संमताः ।

सर्वशास्त्रसमा भावाःकथिता नारदेन च ॥ 43 ॥

अनव्य- त्रयस्त्रिंश न्नटीभावाः सर्व देशेषु संमताः सर्व शास्त्र समा भावाःकथिता नारदेन च

भावार्थ- तैंतीस प्रकार के नटी (नृत्यांगना) के भावों को सभी प्रकार के क्षेत्रो मे मान्य किया गया है, सभी नृत्य शास्त्रों मे इसे सम भाव नृत्य कहते है, ऐसा महर्षि नारद द्वारा अपने संगीत मकरंद ग्रंथ के नृत्याध्याय मे हस्तक प्रकरण नामक चतुर्थ पाद मे वर्णित किया गया है।

इतिश्री नारदकृतौ सङ्गीतमकरन्दे नृत्याध्याये हस्तकप्रकरणं नाम

चतुर्थ पादः समाप्तः ।

महर्षि नारद द्वारा सङ्गीत मकरन्द नृत्याध्याय हस्तकप्रकरण नामक चतुर्थ पाद पूर्ण होता है।

*****